जुलाई, 2014

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

प्रधान संपादक
अनूप कुमार वार्ष्णेय

संपादक
जुगल किशोर

महत्वपूर्ण निर्णय

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302, 376 और 511 – बलात्संग का प्रयत्न और हत्या – मृत्यु दंडादेश – उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि – अभियुक्त-अपीलार्थी की कोई आपराधिक पृष्ठभूमि न होने, उसकी अल्पायु, सुधरने की संभाव्यता, समाज के लिए खतरा न होने और यह मामला "विरल से विरलतम" प्रवर्ग के अंतर्गत नहीं आने पर मृत्यु दंडादेश कायम नहीं रखा जा सकता तथा आजीवन कारावास में परिवर्तित किया गया ।

ललित कुमार यादव उर्फ **कुरी** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** 125

संसद् के अधिनियम

पशुओं के प्रति क्रूरता का निवारण अधिनियम, 1960 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ (15) – (30)

पृष्ठ संख्या 1 – 154 **[2014] 3 उम. नि. प.**

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

संपादक-मंडल

श्री प्रेम कुमार मल्होत्रा,
सचिव, विधायी विभाग

श्रीमती शारदा जैन, संयुक्त सचिव एवं विधायी परामर्शी, विधायी विभाग

डा. विजय नारायण मणि, अधिवक्ता, (पूर्व संपादक) वि.सा.प्र.

प्रो. डा. वैभव गोयल,
लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी, मसूरी (उत्तराखण्ड)

डा. सुरेन्द्र कुमार शर्मा, प्रिन्सिपल, विधि विभाग, गुरु गोविंद सिंह इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय

डा. ऋषिपाल सिंह,
सेवानिवृत्त संयुक्त सचिव, राजभाषा खंड

श्री लालजी प्रसाद,
सेवानिवृत्त प्रधान संपादक, वि.सा.प्र.

श्री कृष्ण गोपाल अग्रवाल,
सेवानिवृत्त संपादक, वि.सा.प्र.

श्री अनूप कुमार वार्ष्णेय,
प्रधान संपादक

श्री महमूद अली खां,
संपादक

श्री जुगल किशोर,
संपादक

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय,
संपादक

सहायक संपादक : सर्वश्री विनोद कुमार आर्य, कमला कान्त, अविनाश शुक्ल और असलम खान

उप-संपादक : सर्वश्री दयाल चन्द ग्रोवर, महीपाल सिंह और जसवन्त सिंह

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 19

वार्षिक : ₹ 225

© 2014 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रकाशन और विक्रय प्रबंधक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय (विधायी विभाग), भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 16288/68

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं – उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिकाओं में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः चयनित सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । इन पत्रिकाओं को और अधिक आकर्षक बनाने के लिए इनमें जनवरी, 2010 के अंक से महत्वपूर्ण केन्द्रीय अधिनियमों का प्राधिकृत हिन्दी पाठ को पाठकों की सुविधा के लिए शृंखलाबद्ध रूप से प्रकाशित किया जा रहा है । तीनों निर्णय पत्रिकाओं की वार्षिक कीमत केवल ₹ 495/- है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 225/- है, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें ।

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रय के लिए उपलब्ध विधि पाठ्य पुस्तकों की सूची

	पुस्तक का नाम	लेखक	पृष्ठ सं.	कीमत (₹)
1.	भारत का विधिक इतिहास	श्री सुरेन्द्र मधुकर	410	30.00
2.	माल विक्रय और परक्राम्य लिखत विधि	डा. एन. पी. परांजपे	371	40.00
3.	वाणिज्य विधि	डा. आर. एल. भट्ट	630	108.00
4.	अपकृत्य विधि के सिद्धान्त (तृतीय संस्करण)	श्री शर्मन लाल अग्रवाल	357	40.00
5.	अंतर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय (द्वितीय संस्करण)	डा. एस. सी. खरे	273	115.00
6.	मानव अधिकार	डा. शिवदत्त शर्मा	340	120.00
7.	दण्ड प्रक्रिया संहिता	न्या. महावीर सिंह	840	200.00

पुस्तकों की सूची जिन पर छूट देने की स्वीकृति प्राप्त की गई है ।

	पुस्तक का नाम	लेखक	पृष्ठ सं.	मूल दर (₹)	संशोधित दर (₹)
1.	संविदा विधि (द्वितीय संस्करण)	डा. रामगोपाल चतुर्वेदी	552	275.00	137.00
2.	श्रम विधि (तृतीय संस्करण)	श्री गोपी कृष्ण अरोड़ा	658	452.00	226.00
3.	चिकित्सा न्यायशास्त्र और विष विज्ञान (तृतीय संस्करण)	डा. सी. के. पारिख अनुवादक डा. एन. के. पटौरिया	969	293.00	146.00
4.	आधुनिक पारिवारिक विधि	श्री राम शरण माथुर	767	429.00	214.00
5.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय)	संकलन संपादन – ब्रह्मदेव चौबे	209	225.00	112.00
6.	हिन्दू विधि (द्वितीय संस्करण)	डा. रवीन्द्र नाथ	617	425.00	212.00
7.	भारतीय दंड संहिता	डा. रवीन्द्र नाथ	696	741.00	370.00
8.	भारतीय भागीदारी अधिनियम (द्वितीय संस्करण)	श्री माधव प्रसाद वशिष्ठ	272	165.00	82.00
9.	प्रशासनिक विधि (तृतीय संस्करण)	डा. कैलाश चन्द्र जोशी	635	200.00	100.00
10.	विधिक उपचार (द्वितीय संस्करण)	डा. एस. के. कपूर	414	311.00	155.00
11.	विधि शास्त्र	डा. शिवदत्त शर्मा	501	580.00	377.00

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका – जुलाई, 2014 [पृष्ठ संख्या 1 – 154]

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

जुलाई, 2014

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
कृष्ण **बनाम** हरियाणा राज्य	116
दोन्तुला रवीन्द्रनाथ **उर्फ** रवीन्दर राव **बनाम** आंध्र प्रदेश राज्य	17
नंदलाल वासुदेव बदवेक **बनाम** लता नंदलाल बदवेक और एक अन्य	1
परमिन्दर **उर्फ** लाडका पोला **बनाम** दिल्ली राज्य	23
मुरलीधर **उर्फ** गिड्डा और एक अन्य **बनाम** कर्नाटक राज्य	103
ललित कुमार यादव **उर्फ** कुरी **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य	125
हर्षद गोवर्धन सोंदागर **बनाम** इंटरनेशनल एसेट्स रिकंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड और अन्य	47
हिमाचल प्रदेश राज्य **बनाम** सुनील कुमार	37

संसद् के अधिनियम

पशुओं के प्रति क्रूरता का निवारण अधिनियम, 1960 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	(15) – (30)

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)

– धारा 125 [सपठित साक्ष्य अधिनियम, 1872 – धारा 112] – भरण-पोषण – निश्चायक उपधारणा – पति-पत्नी के विवाह के जारी रहने के दौरान उत्पन्न हुई बालिका की धर्मजता – पति द्वारा यह कथन किया जाना कि बालिका उस समय उत्पन्न हुई जब पति की पत्नी तक कोई पहुंच नहीं थी तथा डीएनए परीक्षण से यह निष्कर्ष निकलना कि वह बालिका का जैविकीय पिता नहीं था – डीएनए परीक्षण का परिणाम वैज्ञानिक रूप से सही बताया जाना – बालिका के प्रति याची पिता द्वारा दिए गए पूर्व भरण-पोषण की वसूली न किए जाने के साथ-साथ आगे भरण-पोषण का संदाय करने के निचले न्यायालय के आक्षेपित निर्णय को अपास्त किया गया ।

नंदलाल वासुदेव बदवेक बनाम **लता नंदलाल बदवेक और एक अन्य** 1

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45)

– धारा 302 और धारा 148 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 32] – हत्या – घातक आयुध से सज्जित होकर बल्वा करना – दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील – मृत्युकालिक कथन – कथन संदिग्ध – दोषमुक्ति उचित – यदि मृत्युकालिक कथन देने वाले के वास्तविक शब्दों में मृत्युकालिक कथन सीधे ही अभिलिखित न किया जाए और किसी अन्य व्यक्ति द्वारा बोलकर लिखाया जाए तब ऐसे कथन की सत्यता संदिग्ध हो जाएगी जिसके आधार पर की गई दोषसिद्धि अनुचित होगी ।

मुरलीधर उर्फ **गिड्डा और एक अन्य** बनाम **कर्नाटक राज्य** 103

पृष्ठ संख्या

– धारा 302 और धारा 304-ख – हत्या – दहेज मृत्यु – विवाह के सात वर्ष के भीतर पत्नी की हत्या – पत्नी को दहेज के लिए तंग किया जाना – अपीलार्थी द्वारा गला घोंटना साबित न होना – चूंकि अपीलार्थी और मृतका पति-पत्नी के रूप में एक ही मकान में रहते थे और वह मृतका को अतिरिक्त दहेज लाने के लिए तंग किया करता था किंतु हत्या करने का कोई भी प्रत्यक्षदर्शी साक्षी न होने के कारण अपीलार्थी धारा 302 के अधीन नहीं अपितु धारा 304-ख के अधीन दोषी होगा ।

दोन्तुला रवीन्द्रनाथ उर्फ **रवीन्दर राव** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** 17

– धारा 302, 376 और 511 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 3, 25, 26 और 27] – बलात्संग का प्रयत्न और हत्या – पारिस्थितिक साक्ष्य – हेतु – अभियुक्त द्वारा घटना से कुछ दिन पूर्व मृतका से छेड़छाड़ किया जाना – स्नीफर डॉग की सहायता से अभियुक्त की खोज किया जाना – अभियुक्त के बताने पर उसके मकान से हत्या करने के लिए प्रयुक्त आयुध और रक्तरंजित वस्त्रों की बरामदगी होना – सभी परिस्थितियों से यह साबित होना कि वह अभियुक्त ही था जिसने मृतका के साथ बलात्संग करने का प्रयत्न किया और सफल नहीं होने पर उसकी हत्या कर दी, इसलिए उसकी दोषसिद्धि मान्य ठहराई गई ।

ललित कुमार यादव उर्फ **कुरी** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** 125

– धारा 302, 376 और 511 – बलात्संग का प्रयत्न और हत्या – मृत्यु दंडादेश – उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि – अभियुक्त-अपीलार्थी की कोई आपराधिक

पृष्ठ संख्या

पृष्ठभूमि न होने, उसकी अल्पायु, सुधरने की संभाव्यता, समाज के लिए खतरा न होने और यह मामला "विरल से विरलतम" प्रवर्ग के अंतर्गत नहीं आने पर मृत्यु दंडादेश कायम नहीं रखा जा सकता तथा आजीवन कारावास में परिवर्तित किया गया ।

ललित कुमार यादव उर्फ **कुरी** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** 125

– धारा 375 – बलात्संग – अपीलार्थी का अभियोक्त्री को चारपाई पर गिराना और उसके अंतःवस्त्र उतारना – अभियोक्त्री की चड्डी पर मानव वीर्य पाया जाना किंतु योनिच्छद विदीर्ण न पाया जाना – अभियोक्त्री के साक्ष्य से चिकित्सीय साक्ष्य की संपुष्टि होने पर अपीलार्थी बलात्संग का दोषी होगा भले ही अभियोक्त्री की योनिच्छद विदीर्ण न हो ।

परमिन्दर उर्फ **लाडका पोला** बनाम **दिल्ली राज्य** 23

– धारा 376(1) – बलात्संग – दंड की मात्रा – अपीलार्थी द्वारा न्यूनतम दंड से कम दंड की मांग किया जाना – अभियोक्त्री की आयु और अपीलार्थी का आचरण देखते हुए मांग का अनुचित पाया जाना – अभियोक्त्री की आयु अपीलार्थी का आचरण और अभियोक्त्री पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों को ध्यान में रखते हुए धारा 376(1) के अधीन न्यूनतम दंड से कम दंड अधिरोपित करना न्यायोचित नहीं होगा ।

परमिन्दर उर्फ **लाडका पोला** बनाम **दिल्ली राज्य** 23

– धारा 376 और 506 – बलात्संग – अपीलार्थी के विरुद्ध बलात्संग का अपराध चिकित्सीय साक्ष्य तथा साक्षियों के साक्ष्य से साबित होना – निचले न्यायालयों द्वारा की गई दोषसिद्धि मान्य ठहराई गई ।

कृष्ण बनाम **हरियाणा राज्य** 116

पृष्ठ संख्या

वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 (2002 का 54)

– धारा 13 [सपठित संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 7, 8 और 65-क] – प्रतिभूति हित का प्रवर्तन – उधार लेने वाले द्वारा स्थावर संपत्ति को बंधक करके ऋण लिया जाना – बंधककर्ता द्वारा उधार का संदाय करने में असफल रहने पर प्रतिभूत लेनदार द्वारा प्रतिभूत आस्ति का प्रवर्तन करने की सूचना दिया जाना – उधार लेने वाले द्वारा सूचना की प्राप्ति से पूर्व प्रतिभूत आस्ति को पट्टे पर दिया जाना – पट्टेदार का अधिकार – जहां प्रतिभूत आस्ति का विधिपूर्ण कब्जा उधार लेने वाले के पास न होकर विधिमान्य पट्टे के अधीन किसी पट्टेदार के पास है, वहां प्रतिभूत लेनदार प्रतिभूत आस्ति का तब तक कब्जा नहीं ले सकता जब तक पट्टेदार के विधिपूर्ण कब्जे का पर्यवसान नहीं हो जाता है ।

हर्षद गोवर्धन सोंदागर बनाम **इंटरनेशनल एसेट्स रिकंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड और अन्य** 47

– धारा 13(2), 13(13) और 35 [संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 65-क] – बंधककर्ता का बंधक संपत्ति को संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क के अधीन पट्टे पर देने का अधिकार – प्रतिभूत लेनदार द्वारा प्रतिभूत आस्ति के प्रवर्तन करने के आशय की सूचना दिए जाने के पश्चात् उधार लेने वाले द्वारा प्रतिभूत लेनदार की पूर्व लिखित सहमति के बिना प्रतिभूत आस्ति का किया गया पट्टा एक विधिमान्य पट्टा नहीं होगा ।

हर्षद गोवर्धन सोंदागर बनाम **इंटरनेशनल एसेट्स रिकंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड और अन्य** 47

पृष्ठ संख्या

– धारा 14 [सपठित संविधान, 1950 का अनुच्छेद 226 और 227] – मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा प्रतिभूत लेनदार की प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने में सहायता करना – मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा किए गए किसी कार्य को किसी न्यायालय या किसी प्राधिकारी के समक्ष प्रश्नगत नहीं किया जाना – किसी प्राधिकारी के विनिश्चय को अंतिमता प्रदान करने वाले ऐसे कानूनी उपबंध, जिनमें किसी अन्य प्राधिकारी या न्यायालय को ऐसे विनिश्चय की परीक्षा करने की शक्ति से अपवर्जित किया गया हो, उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय के लिए संविधान द्वारा निहित अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए वर्जन नहीं होंगे और व्यथित पक्षकार द्वारा चुनौती दिए जाने पर ऐसे विनिश्चय की परीक्षा कर सकते हैं ।

हर्षद गोवर्धन सोंदागर बनाम **इंटरनेशनल एसेट्स रिकंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड और अन्य** 47

– धारा 14, 13(2) और 13(4) [सपठित संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 65-क] – मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा प्रतिभूत लेनदार की प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने में सहायता करना – प्रतिभूत आस्ति विधिमान्य पट्टे के अधीन पट्टेदार के विधिपूर्ण कब्जे में होना – धारा 13 में ऐसा कोई उपबंध न होने के कारण कि प्रतिभूत लेनदार द्वारा प्रतिभूत आस्ति का प्रवर्तन करने के लिए उपाय करने के पश्चात् पट्टे का पर्यवसान हो जाएगा, मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट को ऐसे पट्टेदार से प्रतिभूत आस्ति का कब्जे लेने और प्रतिभूत लेनदार को सौंपने का कोई अधिकार नहीं है, तथापि, यदि संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 111 के अधीन पट्टे

पृष्ठ संख्या

का पर्यवसान हो गया है, तो उक्त मजिस्ट्रेट प्रतिभूत आस्ति का कब्जा प्रतिभूत लेनदार के पक्ष में परिदत्त करने का आदेश पारित कर सकेगा ।

हर्षद गोवर्धन सोंदागर बनाम **इंटरनेशनल एसेट्स रिकंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड और अन्य** 47

– धारा 17 और 13(4) [सपठित प्रतिभूति हित (प्रवर्तन) नियम, 2002 का नियम 8] – प्रतिभूत लेनदार द्वारा प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने के लिए उपाय किया जाना – उधार लेने वाले सहित किसी अन्य व्यक्ति को ऋण वसूली अधिकरण के समक्ष अपील करने का अधिकार – धारा 17 में प्रयुक्त शब्दों 'कोई व्यक्ति' के अंतर्गत पट्टेदार भी आता है और वह प्रतिभूत लेनदार की कार्रवाई से व्यथित होकर ऋण वसूली अधिकरण के समक्ष आवेदन कर सकता है, किंतु प्रतिभूत लेनदार द्वारा किए गए उपायों को अधिनियम के उपबंधों के अनुसार नहीं पाए जाने पर अधिकरण उक्त धारा में उपबंधित अनुसार कब्जे का प्रत्यावर्तन केवल उधार लेने वाले को ही कर सकता है, इसलिए धारा 17 में विधिमान्य पट्टेदार को भी अपने विधिपूर्ण कब्जे के संरक्षण के लिए कोई उपचार उपलब्ध नहीं है ।

हर्षद गोवर्धन सोंदागर बनाम **इंटरनेशनल एसेट्स रिकंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड और अन्य** 47

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1)

– धारा 112 – बालिका का पितृत्व – डीएनए परीक्षण – धारा 112 के अधीन निश्चायक सबूत की उपधारणा पर डीएनए परीक्षण रिपोर्ट का निष्कर्ष अभिभावी होता है ।

नंदलाल वासुदेव बदवेक बनाम **लता नंदलाल बदवेक और एक अन्य** 1

पृष्ठ संख्या

स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 (1985 का 61)

– धारा 50 – शारीरिक तलाशी – बस में बिना टिकट यात्रियों की आकस्मिक जांच-पड़ताल के दौरान पुलिस द्वारा अभियुक्त (बस यात्री) को कुछ छिपाते हुए देखकर संदेह होने पर उसकी तलाशी लिया जाना – अभियुक्त के कब्जे से चरस की बरामदगी होना – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्त की दोषसिद्धि को धारा 50 के उपबंधों का अनुपालन न किए जाने के आधार पर अपास्त किया जाना – अभियुक्त की शारीरिक तलाशी में चरस की बरामदगी एक संयोगवश बरामदगी थी, इसलिए अभियुक्त को किसी मजिस्ट्रेट या राजपत्रित अधिकारी के समक्ष तलाशी दिए जाने का विकल्प देने संबंधी धारा 50 के उपबंध लागू नहीं होते और विचारण न्यायालय द्वारा की गई अभियुक्त की दोषसिद्धि उचित है ।

हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम **सुनील कुमार** 37

[2014] 3 उम. नि. प. 1

नंदलाल वासुदेव बदवेक

बनाम

लता नंदलाल बदवेक और एक अन्य

6 जनवरी, 2014

न्यायमूर्ति चंद्रमौली कुमार प्रसाद और न्यायमूर्ति जगदीश सिंह खेहर

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 125 [सपठित साक्ष्य अधिनियम, 1872 – धारा 112] – भरण-पोषण – निश्चायक उपधारणा – पति-पत्नी के विवाह के जारी रहने के दौरान उत्पन्न हुई बालिका की धर्मजता – पति द्वारा यह कथन किया जाना कि बालिका उस समय उत्पन्न हुई जब पति की पत्नी तक कोई पहुंच नहीं थी तथा डीएनए परीक्षण से यह निष्कर्ष निकलना कि वह बालिका का जैविकीय पिता नहीं था – डीएनए परीक्षण का परिणाम वैज्ञानिक रूप से सही बताया जाना – बालिका के प्रति याची पिता द्वारा दिए गए पूर्व भरण-पोषण की वसूली न किए जाने के साथ-साथ आगे भरण-पोषण का संदाय करने के निचले न्यायालय के आक्षेपित निर्णय को अपास्त किया गया ।

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) – धारा 112 – बालिका का पितृत्व – डीएनए परीक्षण – धारा 112 के अधीन निश्चायक सबूत की उपधारणा पर डीएनए परीक्षण रिपोर्ट का निष्कर्ष अभिभावी होता है ।

प्रस्तुत मामले में, याची प्रत्यर्थी सं. 1 लता नंदलाल बदवेक का पति है और बालिका नेत्रा **उर्फ** नेहा नंदलाल बदवेक इसमें यहां प्रत्यर्थी सं. 2 का अभिकथित पिता है । उनके बीच विवाह चंद्रपुर में तारीख 30 जून, 1990 को संपन्न हुआ था । पत्नी ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 के अधीन भरण-पोषण के लिए एक आवेदन फाइल किया था, किन्तु यह विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 10 दिसम्बर, 1993 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था । तत्पश्चात् पत्नी ने अपने स्वयं के लिए और अपनी पुत्री के लिए भरण-पोषण का दावा करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन एक नई कार्यवाही अन्य बातों के अलावा यह

अभिकथित करते हुए प्रारंभ की कि वह 20 जून, 1996 से अपने पति के साथ रह रही थी और उसके साथ लगभग 2 वर्ष तक रही थी और इस अवधि के दौरान वह गर्भवती हो गई थी । उसे बच्चे के जन्म के लिए उसके माता-पिता के घर भेजा गया था जहां उसने एक बालिका, इसमें यहां प्रत्यर्थी सं. 2 को जन्म दिया था । याची पति ने इस दावे का खंडन किया और यह अभिकथित किया कि पत्नी का यह प्राख्यान कि वह उसके साथ 20 जून, 1996 से रही थी, गलत है । उसने इसका भी खंडन किया कि प्रत्यर्थी सं. 2 उसकी पुत्री है । पति के अनुसार 1991 के पश्चात् उसके अपनी पत्नी के साथ कोई शारीरिक संबंध नहीं थे । विद्वान् मजिस्ट्रेट ने पत्नी के अभिवाक् को स्वीकार किया और पत्नी को प्रतिमाह 900/- रुपए की दर से और पुत्री को प्रतिमाह 500/- रुपए की दर से भरण-पोषण प्रदान किया । पुनरीक्षण में उक्त आदेश को चुनौती देते हुए दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 482 के अधीन एक याचिका भी असफल हुई । इन आदेशों के विरुद्ध याची ने विशेष इजाजत याचिका द्वारा यह अपील फाइल की है । अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – सुश्री देसाई ने यह दलील दी कि डीएनए परीक्षण के आधार पर व्यक्त किए गए मतों को देखते हुए कि अपीलार्थी जैविकीय पिता नहीं है, उसे पत्नी द्वारा जन्म दी गई बालिका को भरण-पोषण का संदाय करने के दायित्वाधीन नहीं किया जा सकता । तथापि, श्री पिटाले ने यह दलील दी है कि पक्षकारों के बीच विवाह विघटित नहीं हुआ है, और बालिका का जन्म विधिमान्य विवाह के जारी रहने के दौरान होने और पति की पत्नी तक पहुंच होने के कारण, निश्चायक रूप से यह साबित होता है कि बालिका अपीलार्थी की धर्मज पुत्री है । उनके अनुसार डीएनए परीक्षण साक्ष्य अधिनियम 112 के अधीन परिकल्पित निश्चायक उपधारणा का खंडन नहीं कर सकता । विरोधी दलीलों पर विचार करने से पूर्व न्यायालय यह समझना आवश्यक समझता है कि डीएनए परीक्षण सही रूप से क्या है और अंततः इसकी सटीकता क्या है । सभी जीव कोशिकाओं से बने होते हैं जोकि सबसे छोटे होते हैं और जीवन के आधारभूत होते हैं । एक औसत मानव शरीर विभिन्न आकारों के सैकड़ों कोशिकाओं से बना होता है । डीएनए जोकि जीवित मानवों की कोशिकाओं के क्रोमोजोम में पाए जाते हैं वह किसी व्यक्ति के ब्लू प्रिंट होते हैं । मानव कोशिकाओं में 46 क्रोमोजोम अन्तर्विष्ट होते हैं और इन 46 क्रोमोजोमों में डीएनए के 46 ड्यूपलेक्स थ्रेड्स में छह बिलियन आधारभूत जोड़े अन्तर्विष्ट होते हैं ।

डीएनए चार नाइट्रोजनस आधारों जैसे ऐडेनाइन, थाइमीन, सीटोसीन, गुवानाइन और फास्फोरिक अम्ल से गठित होता है और एक नियमित संरचना में व्यवस्थित होते हैं । जब एक ही डीएनए श्रेणी दो असंबद्ध वाले व्यक्तियों की तुलना की जाती है तब संपूर्ण समानता के अवसर 30 बिलियन से 300 बिलियन में 1 (एक) है । धरती की जनसंख्या इस समय लगभग पांच बिलियन है, इस परीक्षण का सटीक परिणाम होगा । इस न्यायालय द्वारा कामती देवी वाले मामले में इसे स्वीकार किया गया है कि सही डीएनए परीक्षण का परिणाम वैज्ञानिक रूप से सटीक होता है । किसी का भी यह पक्षकथन नहीं है कि डीएनए परीक्षण का परिणाम सही नहीं होता है और इसलिए हम इस उपधारणा पर अग्रसर होते हैं कि डीएनए परीक्षण का परिणाम सटीक होता है । डीएनए परीक्षण रिपोर्ट यह दर्शित करती है कि अपीलार्थी बालिका का जैविकीय पिता नहीं है । अब न्यायालय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 112 के अधीन जो उपबंध किया गया है उसे देखते हुए इस पर विचार करेगा कि क्या डीएनए परीक्षण यह अभिनिर्धारित करने के लिए पर्याप्त होगा कि अपीलार्थी, प्रत्यर्थी सं. 2 का जैविकीय पिता नहीं है । उपर्युक्त का सरल पठन करने पर यह स्पष्ट होता है कि किसी विधिमान्य विवाह के जारी रहने के दौरान उत्पन्न बालक इस बात का निश्चायक सबूत है कि बालक उस व्यक्ति जिससे जन्म देने वाली स्त्री का विवाह हुआ था, का धर्मज बालक है । उपबंध बालक की धर्मजता को निश्चायक सबूत बनाता है यदि उपर्युक्त शर्तें संतुष्ट होती हैं । इसका केवल तभी खंडन किया जा सकता है जब यह दर्शाया जाए कि विवाह के पक्षकारों का तब जबकि बालक का गर्भधारण हो सकता था ऐसे किसी समय एक-दूसरे से कोई परस्पर पहुंच नहीं थी । वर्तमान मामले में पत्नी ने यह अभिवाक् किया था कि पति की उस तक पहुंच थी और वस्तुतः बालक उक्त विवाह की अवधि के दौरान ही उत्पन्न हुआ था, किन्तु पति ने विनिर्दिष्ट रूप से यह अभिवाक् किया है कि जब उसकी पत्नी वैवाहिक गृह छोड़कर चली गई थी, वह वापस नहीं लौटी थी और तत्पश्चात् उसकी अपनी पत्नी से कोई पहुंच नहीं थी । पत्नी ने यह स्वीकार किया है कि वह वैवाहिक गृह छोड़कर चली गई थी किन्तु पुनः अपने पति के साथ रहने लगी थी । दुर्भाग्यवश निचले किसी भी न्यायालय ने पति के इस अभिवाक् के संबंध में कोई निष्कर्ष नहीं निकाला है कि उसका ऐसे समय अपनी पत्नी तक कोई पहुंच थी या नहीं थी जब बालक का गर्भधारण हो सकता था । (पैरा 12, 13, 14 और 15)

जैसाकि पूर्वतर कथन किया जा चुका है डीएनए परीक्षण एक सटीक परीक्षण होता है और इसके आधार पर यह स्पष्ट है कि अपीलार्थी बालक का जैविकीय पिता नहीं है । तथापि, इसके साथ ही साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 112 का अवलंब लेने के लिए पूर्व शर्त उपबंध की गई है और पति के इस अभिवाक् कि उसका ऐसे किसी समय अपनी पत्नी से कोई पहुंच नहीं थी जबकि बालिका का गर्भधारण हो सकता था, के संबंध में कोई निष्कर्ष अभिलिखित नहीं किया गया है । स्वीकृततः बालिका का जन्म विधिमान्य विवाह जारी रहने के दौरान हुआ है । इसलिए साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 112 के उपबंध निश्चायक रूप से यह साबित करते हैं कि प्रत्यर्थी सं. 2 अपीलार्थी की पुत्री है । इसके साथ ही वैज्ञानिक विश्लेषण पर आधारित डीएनए परीक्षण रिपोर्टें निश्चित रूप से सुझाती है कि अपीलार्थी जैविकीय पिता नहीं है । ऐसी परिस्थितियों में हमारे समक्ष एक जटिल प्रश्न प्रस्तुत किया गया है । न्यायालय यह स्मरण करता है कि साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 112 को ऐसे समय अधिनियमित किया गया था जब आधुनिक वैज्ञानिक प्रगति और डीएनए परीक्षण विधायिका की सोच में भी नहीं थे । डीएनए परीक्षण का परिणाम वैज्ञानिक रूप से सटीक बताया जाता है । यद्यपि, धारा 112 तद्धीन दशाओं के संतुष्ट किए जाने पर निश्चायक सबूत की उपधारणा करती है किन्तु यह खंडनीय है । उपधारणा सकारात्मक विधिक निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए विधिसम्मत तरीके प्रस्तुत करती है । जबकि सच्चाई या तथ्य ज्ञात हो तब हमारे मत में किसी उपधारणा के लिए कोई आवश्यकता या कोई गुंजाइश नहीं होती । जब इसके प्रतिकूल साक्ष्य हो, तब उपधारणा खंडनीय होती है और सबूत प्रस्तुत किया जाना चाहिए । सच्चाई अभिनिश्चित करने के द्वारा न्याय के उद्देश्य सर्वश्रेष्ठ रूप से पूरा किए जा सकते हैं और न्यायालय के समक्ष सर्वश्रेष्ठ उपलब्ध विज्ञान प्रस्तुत किया जाना चाहिए और उपधारणाओं के आधार पर ही विचार करने के लिए नहीं छोड़ा जाना चाहिए जब तक कि विज्ञान का विवाद्यक तथ्यों के संबंध में कोई उत्तर न हो । न्यायालय के मत में जब विधि के अधीन परिकल्पित निश्चायक सबूत और विश्व समुदाय द्वारा स्वीकार किए गए वैज्ञानिक संवर्धन पर आधारित सबूत के सही होने के बीच एक विरोध हो तब पश्चात्वर्ती पूर्ववर्ती पर अभिभावी होगा । (पैरा 16 और 17)

न्यायालय को एक विधिक कल्पना और किसी तथ्य की उपधारणा के बीच विभेद को समझना चाहिए । विधिक कल्पना ऐसे तथ्य की विधिमान्यता की उपधारणा कर लेती है जोकि वस्तुतः विद्यमान नहीं होता ।

तथापि, किसी तथ्य की उपधारणा कतिपय परिस्थितियों के संतुष्ट होने पर आधारित होती है । वे परिस्थितियां तर्कसम्मत रूप से उपधारण की वांछा किए गए तथ्य तक पहुंचाती है । साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 112 विधिक कल्पना सृजित नहीं करती अपितु उपधारणा का उपबंध करती है । पति का अभिवाक् कि उसकी ऐसे समय पत्नी तक कोई पहुंच नहीं थी जब बालिका का गर्भधारण किया जा सकता था, यह डीएनए परीक्षण रिपोर्ट से साबित होता है और इसको देखते हुए न्यायालय अपीलार्थी को बालक के पितृत्व का भार वहन करने के लिए बाध्य नहीं कर सकता जब वैज्ञानिक रिपोर्टें प्रतिकूल साबित करती हो । न्यायालय इसके प्रति सचेत हैं कि किसी निर्दोष बालक को कलंकित न किए जा सके क्योंकि उसके माता और पिता का विवाह उसके जन्म के समय जारी था, किन्तु डीएनए परीक्षण रिपोर्टों और जो कुछ हमने ऊपर संप्रेक्षण किया है को देखते हुए, न्यायालय परिणाम को नहीं रोक सकता । यह सत्य को नकारना है । "सत्य की जीत होती है" यह न्याय का मूल मंत्र है । कामती देवी वाले मामले में इस न्यायालय की नजीर के संबंध में इस न्यायालय ने साक्ष्य का मूल्यांकन करते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि पति का पत्नी के साथ कोई संपर्क जो कोई भी हो करने के लिए कोई अवसर नहीं था । मामले में कोई डीएनए परीक्षण नहीं कराया गया था । उक्त पृष्ठभूमि अर्थात् पति की पत्नी तक कोई पहुंच न होने को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि डीएनए परीक्षण का परिणाम "साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 112 की निश्चायकता से बचने के लिए पर्याप्त नहीं है ।" निर्णय को उक्त मामले के तथ्यों की पृष्ठभूमि में समझा जाना चाहिए । उक्त निर्णय में यह अभिनिर्धारित नहीं किया गया है कि डीएनए परीक्षण को अनदेखा किया जाए । वस्तुतः, इस न्यायालय ने इस तथ्य की अवेक्षा की है कि डीएनए परीक्षण वैज्ञानिक रूप से सटीक है । न्यायालय यह जोड़ना चाहेगा कि ऊपर निर्दिष्ट किए गए किसी भी मामले में इस न्यायालय का ऐसी परिस्थिति से सामना नहीं हुआ था जिसमें वस्तुतः डीएनए परीक्षण रिपोर्ट उपलब्ध थी और साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 112 के अधीन बालिका की धर्मजता के निश्चायक सबूत की उपधारणा के विरुद्ध थी । न्यायालय ने ऊपर जो कुछ मत व्यक्त किया है उसे देखते हुए यह निर्णय प्रत्यर्थी के पक्षकथन को किसी भी प्रकार सहायक नहीं होते । (पैरा 18, 19 और 20)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2010]	(2010) 8 एस. सी. सी. 633 : **भबानी प्रसाद जेना** बनाम **उड़ीसा राज्य महिला आयोग** ;	10,11
[2005]	(2005) 4 एस. सी. सी. 449 : **बनारसी दास** बनाम **टीकू दत्ता** ;	9,11
[2001]	(2001) 5 एस. सी. सी. 311 : **कामती देवी** बनाम **पोशी राम** ;	12,13,20
[1993]	(1993) 3 एस. सी. सी. 418 : **गौतम कुंडु** बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य** ।	8,11

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2014 की दांडिक अपील सं. 24.

2008 की दांडिक रिट याचिका सं. 293 में मुम्बई उच्च न्यायालय की नागपुर न्यायपीठ द्वारा तारीख 13 जून, 2008 को दिए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सुश्री अनघा एस. देसाई

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री मनीष पिटाले और वासी हैदर (चंद्र शेखर अश्री की ओर से)

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति चंद्रमौली कुमार प्रसाद ने दिया ।

न्या. प्रसाद – याची प्रत्यर्थी सं. 1 लता नंदलाल बदवेक का पति है और बालिका नेत्रा **उर्फ** नेहा नंदलाल बदवेक इसमें यहां प्रत्यर्थी सं. 2 का अभिकथित पिता है । उनके बीच विवाह चंद्रपुर में तारीख 30 जून, 1990 को संपन्न हुआ था । पत्नी ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 के अधीन भरण-पोषण के लिए एक आवेदन फाइल किया था, किन्तु यह विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 10 दिसम्बर, 1993 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था । तत्पश्चात् पत्नी ने अपने स्वयं के लिए और अपनी पुत्री के लिए भरण-पोषण का दावा करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन एक नई कार्यवाही अन्य बातों के अलावा यह अभिकथित करते हुए प्रारंभ की कि वह 20 जून, 1996 से अपने पति के साथ रह रही थी और उसके साथ लगभग 2 वर्ष तक रही थी और इस

अवधि के दौरान वह गर्भवती हो गई थी । उसे बच्चे के जन्म के लिए उसके माता-पिता के घर भेजा गया था जहां उसने एक बालिका, इसमें यहां प्रत्यर्थी सं. 2 को जन्म दिया था । याची पति ने इस दावे का खंडन किया और यह अभिकथित किया कि पत्नी का यह प्राख्यान कि वह उसके साथ 20 जून, 1996 से रही थी, गलत है । उसने इसका भी खंडन किया कि प्रत्यर्थी सं. 2 उसकी पुत्री है । पति के अनुसार 1991 के पश्चात् उसके अपनी पत्नी के साथ कोई शारीरिक संबंध नहीं थे । विद्वान् मजिस्ट्रेट ने पत्नी के अभिवाक् को स्वीकार किया और पत्नी को प्रतिमाह 900/- रुपए की दर से और पुत्री को प्रतिमाह 500/- रुपए की दर से भरण-पोषण प्रदान किया । पुनरीक्षण में उक्त आदेश को चुनौती देते हुए दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 482 के अधीन एक याचिका भी असफल हुई ।

2. इन आदेशों के विरुद्ध याची ने विशेष इजाजत याचिका द्वारा यह अपील फाइल की है ।

3. इजाजत प्रदान की जाती है ।

4. बालिका के पितृत्व की चुनौती की अवेक्षा करते हुए, इस न्यायालय ने तारीख 10 जनवरी, 2011 को निम्नलिखित आदेश पारित किया :–

> ".....तथापि, याची पति ने बालिका के पितृत्व को चुनौती दी थी और यह दावा किया था कि बालिका को कोई भी भरण-पोषण नहीं दिया जाना चाहिए । याची ने बालिका का डीएनए परीक्षण कराए जाने के लिए भी आवेदन किया था जोकि इनकार कर दिया गया था । यह इनकार किए जाने के उक्त आदेश के विरुद्ध है कि दो वर्तमान विशेष अनुमति याचिका फाइल की गई थी और हमारे समक्ष भी डीएनए परीक्षण कराए जाने के लिए वही प्रार्थना की गई थी । तारीख 8 फरवरी, 2010 को हमने तद्नुसार यह निदेश दिया था कि याची पति, पत्नी और बालिका को अधिनिर्णीत भरण-पोषण की बकाया और वर्तमान राशि जो सभी देय हो, को जमा करे जिससे कि हम डीएनए परीक्षण कराए जाने के लिए उसकी प्रार्थना पर विचार करें । तारीख 3 जनवरी, 2011 को यह राशि जमा किए जाने पर हमने बालिका के पितृत्व को सुनिश्चित करने के लिए डीएनए परीक्षण कराए जाने के लिए याची की प्रार्थना मंजूर की थी ।

हमें पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा यह सूचित किया गया है कि नागपुर स्थित न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला यह परीक्षण करती है जिसके लिए याची द्वारा प्रार्थना की गई है । तद्नुसार, हमने याची नंदलाल वासुदेव बदवेक और प्रत्यर्थी सं. 1 सुश्री लता नंदलाल बदवेक को ऐसा परीक्षण कराए जाने के लिए न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला, नागपुर जो जेल रोड धनतोली पर स्थित है, को एक संयुक्त आवेदन करने का निदेश दिया । याची और इसी भांति प्रत्यर्थी सं. 1 और प्रत्यर्थी सं. 2 के साथ प्रयोगशाला द्वारा नियत तारीख पर उक्त प्रयोजन के लिए प्रयोगशाला में उपस्थित होंगे और तत्पश्चात् प्रयोगशाला को यह निदेश दिया जाता है कि वह उक्त परीक्षण का परिणाम तत्पश्चात् चार सप्ताह के भीतर इस न्यायालय को भेजे । परीक्षण कराए जाने के लिए खर्चे याची पति द्वारा वहन किए जाएंगे ।"

5. उपर्युक्त आदेश को ध्यान में रखते हुए क्षेत्रीय न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला, नागपुर ने डीएनए के परिणाम को प्रस्तुत किया है और यह मत व्यक्त किया है कि अपीलार्थी "नंदलाल वासुदेव बदवेक के नेत्रा **उर्फ** नेहा नंदलाल बदवेक इसमें यहां प्रत्यर्थी सं. 2" के जैविकीय पिता होने का खंडन किया जाता है ।

6. प्रत्यर्थियों ने उपर्युक्त रिपोर्ट से संतुष्ट न होते हुए पुनः परीक्षण कराए जाने की प्रार्थना की । प्रत्यर्थियों की उक्त प्रार्थना स्वीकार की गई और इस न्यायालय ने तारीख 22 जुलाई, 2011 के आदेश द्वारा निम्नलिखित निदेश दिया :–

"इस तथ्य के बावजूद कि क्षेत्रीय न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला, महाराष्ट्र राज्य, नागपुर-12 में किए गए डीएनए परीक्षण की रिपोर्ट यह इंगित करती है कि याची प्रत्यर्थी सं. 2 का जैविकीय पिता नहीं है, प्रत्यर्थियों द्वारा पुनः परीक्षण के लिए प्रार्थना किए जाने पर, हमारा यह मत है कि ऐसी प्रार्थना, रिपोर्ट जो फाइल की गई है के गंभीर परिणामों को देखते हुए मंजूर की जा सकती है ।

तद्नुसार, हम यह निदेश देते हैं कि एक और डीएनए परीक्षण गृह मंत्रालय, भारत सरकार के हैदराबाद स्थित केन्द्रीय न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला पर कराया जाए और उक्त प्रयोजन के लिए पक्षकारों को तारीख 24 अगस्त, 2011 को पूर्वाह्न 11 बजे

प्रयोगशाला में उपस्थित होने का निदेश दिया जाता है ।"

7. जैसाकि, निदेश दिया गया था कि केन्द्रीय न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला, हैदराबाद ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की और उसके आधार पर यह मत व्यक्त किया कि अपीलार्थी "नंदलाल वासुदेव बदवेक का कुमारी नेहा नंदलाल बदवेक, इसमें यहां प्रत्यर्थी सं. 2" का जैविकीय पिता होने से खंडन किया जाता है ।

8. प्रारंभ में ही, श्री मनीष पिटाले प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित हुए विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि अपीलार्थी के यह साबित करने में असफल रहने पर कि उसकी अपनी पत्नी के साथ किसी भी समय कोई साहचर्य नहीं था जबकि वह प्रत्यर्थी सं. 2 की मां बन सकती थी, डीएनए परीक्षण के लिए निदेश नहीं दिया जाना चाहिए था । उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए उन्होंने यह दलील दी कि ऐसे परीक्षण का परिणाम अनदेखा किए जाने योग्य है । इस दलील के समर्थन में उन्होंने इस न्यायालय द्वारा **गौतम कुंडु** बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य**[1] वाले मामले में दिए गए निर्णय पर अवलंब लिया जिसके सुसंगत भाग निम्न प्रकार हैं :–

> "24. यह धारा अपेक्षा करती है कि पितृत्व का खंडन करने वाला पक्षकार उपधारणा को त्यक्त किए जाने के लिए पहुंच न होने को साबित करे । "पहुंच" और "पहुंच न होना" से संभोग के लिए अवसरों की विद्यमानता या अविद्यमानता अभिप्रेत है ; इससे वास्तविक समागम अभिप्रेत नहीं है ।
>
> 26. उपर्युक्त चर्चा से यह उद्भूत होता है –
>
> (1) कि भारत में न्यायालय सामान्य अनुक्रम में रक्त परीक्षण का आदेश नहीं कर सकते ;
>
> (2) जब गहन जांच करने के लिए ऐसी प्रार्थना करते हुए आवेदन किए जाते हैं तब रक्त परीक्षण के लिए प्रार्थना ग्रहण नहीं की जा सकती ।
>
> (3) इस संबंध में प्रथमदृष्ट्या एक प्रबल मामला होना चाहिए कि पति साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 112 के अधीन उत्पन्न होने वाली उपधारणा का खंडन किए जाने के लिए पहुंच न होने को

---

[1] (1993) 3 एस. सी. सी. 418.

साबित करे ।

(4) न्यायालय को इस संबंध में सावधानीपूर्वक परीक्षा करनी चाहिए कि रक्त परीक्षण का आदेश किए जाने का क्या परिणाम होंगे ; क्या इसका बालिका पर जारज होने का धब्बा लगाने का प्रभाव होगा और मां को एक चरित्रहीन स्त्री होने का धब्बा लगाने का प्रभाव होगा ।

(5) किसी को भी विश्लेषण के लिए रक्त का नमूना देने को बाध्य नहीं किया जा सकता ।

27. उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए हमें रक्त परीक्षण के लिए आवेदन को नामंजूर करने के विद्वान् अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, अलीपुर के आदेश की संपुष्टि करने वाले उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेश को मान्य ठहराने में कोई कठिनाई नहीं है .....।"

9. एक अन्य विनिश्चय जिस पर अवलंब लिया गया है, इस न्यायालय द्वारा **बनारसी दास** बनाम **टीकू दत्ता**[1] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा दिए गए विनिश्चय का पैरा 13 है जोकि इस प्रयोजन के लिए सुसंगत है और नीचे उद्धृत किया जा रहा है :–

"13. हम यह स्मरण करते हैं कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 को ऐसे समय बनाया गया था जब आधुनिक वैज्ञानिक संवर्धनों के साथ डीएनए और इसी भांति आरएनए परीक्षण विधायिका के ध्यान में भी नहीं थे । एक सही डीएनए परीक्षण का परिणाम वैज्ञानिक रूप से निश्चित बताया जाता है । किन्तु यह भी साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 की निश्चायकता से बचने के लिए पर्याप्त नहीं है अर्थात जैसे कोई पति और पत्नी गर्भधारण के दौरान साथ-साथ रह रहे थे किन्तु डीएनए परीक्षण यह प्रकट करता है कि बालक पति से उत्पन्न नहीं था, विधि के अधीन निश्चायकता अखंडनीय बनी रहेगी । यह पति की दृष्टि से कठोर लग सकता है जो ऐसे बालक का पितृत्व उठाने के लिए बाध्य होगा जिसके संबंध में वह निर्दोष हो सकता है (जिसका वह पिता था ही नहीं) किन्तु ऐसे मामले में भी विधि निर्दोष बालक को जारजता के धब्बे से बचाती है यदि उसकी माता और उसका पिता गर्भधारण के दौरान साथ-साथ रहे थे । इसलिए निश्चायकता

---

[1] (2005) 4 एस. सी. सी. 449.

का खंडन करने के लिए पहुंच न होने के सबूत की कोटि के संबंध में प्रश्न का उत्तर ऊपर की गई पहुंच या पहुंच न होने की व्याख्या से अभिप्रेत होगी । (देखिए कामती देवी **बनाम** पोशी राम [(2001) 5 एस. सी. सी. 311]"

10. **भबानी प्रसाद जेना** बनाम **उड़ीसा राज्य महिला आयोग**[1] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा दिए गए विनिश्चय पर भी अवलंब लिया गया है जिसमें निम्न अभिनिर्धारित किया गया :–

"22. हमारे मत में जब किसी व्यक्ति को बलपूर्वक स्वयं की चिकित्सा परीक्षा कराने के लिए प्रस्तुत नहीं करने के एकांतता के अधिकार और न्यायालय के सत्यता पर पहुंचने के कर्तव्य के बीच एक प्रकट विरोध होता है तब न्यायालय को पक्षकारों के हितों का संतुलन करने और इस बाबत सम्यक् विचार करने कि क्या मामले में उचित विनिश्चय के लिए, डीएनए परीक्षण की अत्यंत ही आवश्यकता है, के पश्चात् ही केवल अपने विवेक का प्रयोग करना चाहिए । बालक के पितृत्व से संबंधित मामले में डीएनए परीक्षण का न्यायालय द्वारा सामान्यतया या दैनिक रीति में निदेश नहीं देना चाहिए जब कभी ऐसी एक प्रार्थना की जाए । न्यायालय को साक्ष्य अधिनियम की धारा 12 के अधीन उपधारणा सहित विभिन्न पहलुओं पर विचार करना होता है; और ऐसे आदेश के दोनों पहलुओं और 'अत्यंत आवश्यकता' के परीक्षण पर भी विचार करना होता है कि क्या न्यायालय को ऐसा परीक्षण कराए बिना सत्यता पर पहुंचना संभव नहीं है ।"

11. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित हुई विद्वान् काउंसेल सुश्री अनघा एस. देसाई ने यह दलील दी कि इस न्यायालय ने दो बार डीएनए परीक्षण किए जाने का आदेश किया था और इसलिए इस संबंध में प्रश्न कि क्या यह एक उपयुक्त मामला था जिसमें डीएनए परीक्षण किए जाने का आदेश किया जाना चाहिए या नहीं किया जाना चाहिए, यह शैक्षिक विषय है । हम सुश्री देसाई की दलील में सार पाते हैं । मामले में तथ्य यह है कि इस न्यायालय ने डीएनए परीक्षण किए जाने के लिए दो बार निदेश दिए थे । जब ऐसी प्रार्थना पर विचार किया जा रहा था, तब प्रत्यर्थियों ने वस्तुतः डीएनए परीक्षण की प्रार्थना का विरोध नहीं किया था । यह केवल डीएनए परीक्षण की रिपोर्टों, जो प्रत्यर्थियों के प्रतिकूल थे, के प्राप्त होने के पश्चात्

---

[1] (2010) 8 एस. सी. सी. 633.

ही केवल था कि वे इस आधार पर इसे चुनौती दे रहे हैं कि ऐसे परीक्षण किए जाने का निदेश नहीं दिया जाना चाहिए । हम इस प्रक्रम पर इस न्यायालय की समन्वयी न्यायपीठ द्वारा पारित आदेशों की विधिमान्यता पर विचार नहीं कर सकते । इसे अंतिमता प्राप्त हो चुकी है । इसलिए हम प्रत्यर्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई दलील में कोई गुणता नहीं पाते हैं । **गौतम कुंडु** (उपर्युक्त), **बनारसी दास** (उपर्युक्त) और **भबानी प्रसाद जेना** (उपर्युक्त) वाले मामलों में इस न्यायालय द्वारा दिए गए विनिश्चय के संबंध में, उनका इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर कोई प्रभाव नहीं है । इन सभी मामलों में न्यायालय इस पर विचार कर रहा था कि क्या उन मामलों के तथ्य डीएनए परीक्षण के लिए एक आदेश पारित करने को न्यायोचित ठहराते हैं । जब डीएनए परीक्षण के लिए आदेश पहले ही पारित किया जा चुका है, तब इस प्रक्रम पर हम इस मुद्दे से संबंधित नहीं है और हम इस उपधारणा पर अग्रसर होंगे कि डीएनए परीक्षण के लिए एक विधिमान्य निदेश दिया गया था ।

12. सुश्री देसाई ने यह दलील दी कि डीएनए परीक्षण के आधार पर व्यक्त किए गए मतों को देखते हुए कि अपीलार्थी जैविकीय पिता नहीं है, उसे पत्नी द्वारा जन्म दी गई बालिका को भरण-पोषण का संदाय करने के दायित्वाधीन नहीं किया जा सकता । तथापि, श्री पिटाले ने यह दलील दी है कि पक्षकारों के बीच विवाह विघटित नहीं हुआ है, और बालिका का जन्म विधिमान्य विवाह के जारी रहने के दौरान होने और पति की पत्नी तक पहुंच होने के कारण, निश्चायक रूप से यह साबित होता है कि बालिका अपीलार्थी की धर्मज पुत्री है । उनके अनुसार डीएनए परीक्षण साक्ष्य अधिनियम 112 के अधीन परिकल्पित निश्चायक उपधारणा का खंडन नहीं कर सकता । उनके अनुसार इसलिए प्रत्यर्थी सं. 2 को अपीलार्थी की धर्मज पुत्री अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए । इस दलील के समर्थन में इस न्यायालय द्वारा **कामती देवी** बनाम **पोशी राम**[1] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय पर अवलंब लिया गया है और निर्णय के पैरा 10 के प्रति निर्देश किया गया है जो निम्नलिखित है :–

> ".....सही डीएनए परीक्षण का परिणाम वैज्ञानिक रूप से निश्चित और ठीक बताया जाता है । किन्तु यह भी अधिनियम की धारा 112 की निश्चायकता से बचने के लिए पर्याप्त नहीं है अर्थात्

---

[1] (2001) 5 एस. सी. सी. 311.

यदि कोई पति और पत्नी गर्भधारण के दौरान साथ-साथ रहे थे किन्तु डीएनए परीक्षण यह प्रकट करता है कि बालक पति से उत्पन्न नहीं था, तब भी विधि के अधीन निश्चायकता अखंडनीय बनी रहेगी । यह पति के दृष्टिकोण से कठोर प्रतीत होगा जो ऐसे बालिका के पितृत्व का भार वहन करने के लिए बाध्य होगा जिसका कि वह पिता ही नहीं है । किन्तु ऐसे मामले में विधि, निर्दोष बालिका को जारजता के कलंक से बचाता है यदि उसके माता और पिता गर्भधारण के दौरान साथ-साथ रह रहे थे .....।"

13. विरोधी दलीलों पर विचार करने से पूर्व हम यह समझना आवश्यक समझते हैं कि डीएनए परीक्षण सही रूप से क्या है और अंततः इसकी सटीकता क्या है । सभी जीव कोशिकाओं से बने होते हैं जोकि सबसे छोटे होते हैं और जीवन के आधारभूत होते हैं । एक औसत मानव शरीर विभिन्न आकारों के सैकड़ों कोशिकाओं से बना होता है । डीएनए जो कि जीवित मानवों की कोशिकाओं के क्रोमोजोम में पाए जाते हैं वह किसी व्यक्ति के ब्लू प्रिंट होते हैं । मानव कोशिकाओं में 46 क्रोमोजोम अन्तर्विष्ट होते हैं और इन 46 क्रोमोजोमों में डीएनए के 46 ड्यूपलेक्स थ्रेड्स में छह बिलियन आधारभूत जोड़े अन्तर्विष्ट होते हैं । डीएनए चार नाइट्रोजनस आधारों जैसे ऐडेनाइन, थाइमीन, सीटोसीन, गुवानाइन और फास्फोरिक अम्ल से गठित होता है और एक नियमित संरचना में व्यवस्थित होते हैं । जब एक ही डीएनए श्रेणी दो असंबद्ध वाले व्यक्तियों की तुलना की जाती है तब संपूर्ण समानता के अवसर 30 बिलियन से 300 बिलियन में 1 (एक) है । धरती की जनसंख्या इस समय लगभग पांच बिलियन है, इस परीक्षण का सटीक परिणाम होगा । इस न्यायालय द्वारा **कामती देवी** (उपर्युक्त) वाले मामले में इसे स्वीकार किया गया है कि सही डीएनए परीक्षण का परिणाम वैज्ञानिक रूप से सटीक होता है । किसी का भी यह पक्षकथन नहीं है कि डीएनए परीक्षण का परिणाम सही नहीं होता है और इसलिए हम इस उपधारणा पर अग्रसर होते हैं कि डीएनए परीक्षण का परिणाम सटीक होता है । डीएनए परीक्षण रिपोर्ट यह दर्शित करती है कि अपीलार्थी बालिका का जैविकीय पिता नहीं है ।

14. अब हम साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 112 के अधीन जो उपबंध किया गया है उसे देखते हुए इस पर विचार करेंगे कि क्या डीएनए परीक्षण यह अभिनिर्धारित करने के लिए पर्याप्त होगा कि अपीलार्थी, प्रत्यर्थी सं. 2 का जैविकीय पिता नहीं है । धारा 112 निम्न प्रकार है :–

"धारा 112 – **विवाहित स्थिति के दौरान में जन्म होना धर्मजत्व**

का निश्चायक सबूत है – यह तथ्य कि किसी व्यक्ति का जन्म उसके माता और किसी पुरुष के बीच विधिमान्य विवाह के कायम रहते हुए, या उसका विघटन होने के उपरांत माता के अविवाहित रहते हुए 280 दिन के भीतर हुआ था, इस बात का निश्चायक सबूत होगा कि वह उस पुरुष का धर्मज पुत्र है, जब तक कि यह दर्शित नहीं किया जा सके कि विवाह के पक्षकारों की परस्पर पहुंच ऐसे किसी समय नहीं थी कि जब उसका गर्भधारण किया जा सकता था ।"

15. उपर्युक्त का सरल पठन करने पर यह स्पष्ट होता है कि किसी विधिमान्य विवाह के जारी रहने के दौरान उत्पन्न बालक इस बात का निश्चायक सबूत है कि बालक उस व्यक्ति जिससे जन्म देने वाली स्त्री का विवाह हुआ था, का धर्मज बालक है । उपबंध बालक की धर्मजता को निश्चायक सबूत बनाता है यदि उपर्युक्त शर्तें संतुष्ट होती हैं । इसका केवल तभी खंडन किया जा सकता है जब यह दर्शाया जाए कि विवाह के पक्षकारों का तब जबकि बालक का गर्भधारण हो सकता था ऐसे किसी समय एक-दूसरे से कोई परस्पर पहुंच नहीं थी । वर्तमान मामले में पत्नी ने यह अभिवाक् किया था कि पति की उस तक पहुंच थी और वस्तुतः बालक उक्त विवाह की अवधि के दौरान ही उत्पन्न हुआ था, किन्तु पति ने विनिर्दिष्ट रूप से यह अभिवाक् किया है कि जब उसकी पत्नी वैवाहिक गृह छोड़कर चली गई थी, वह वापस नहीं लौटी थी और तत्पश्चात् उसकी अपनी पत्नी से कोई पहुंच नहीं थी । पत्नी ने यह स्वीकार किया है कि वह वैवाहिक गृह छोड़कर चली गई थी किन्तु पुनः अपने पति के साथ रहने लगी थी । दुर्भाग्यवश निचले किसी भी न्यायालय ने पति के इस अभिवाक् के संबंध में कोई निष्कर्ष नहीं निकाला है कि उसका ऐसे समय अपनी पत्नी तक कोई पहुंच थी या नहीं थी जब बालक का गर्भधारण हो सकता था ।

16. जैसाकि पूर्वतर कथन किया जा चुका है डीएनए परीक्षण एक सटीक परीक्षण होता है और इसके आधार पर यह स्पष्ट है कि अपीलार्थी बालक का जैविकीय पिता नहीं है । तथापि, इसके साथ ही साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 112 का अवलंब लेने के लिए पूर्व शर्त उपबंध की गई है और पति के इस अभिवाक् कि उसका ऐसे किसी समय अपनी पत्नी से कोई पहुंच नहीं थी जबकि बालिका का गर्भधारण हो सकता था, के संबंध में कोई निष्कर्ष अभिलिखित नहीं किया गया है । स्वीकृततः बालिका का जन्म विधिमान्य विवाह जारी रहने के दौरान हुआ है । इसलिए साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 112 के उपबंध निश्चायक रूप से यह

साबित करते हैं कि प्रत्यर्थी सं. 2 अपीलार्थी की पुत्री है । इसके साथ ही वैज्ञानिक विश्लेषण पर आधारित डीएनए परीक्षण रिपोर्टें निश्चित रूप से सुझाती हैं कि अपीलार्थी जैविकीय पिता नहीं है । ऐसी परिस्थितियों में हमारे समक्ष एक जटिल प्रश्न प्रस्तुत किया गया है ।

17. हम यह स्मरण करते हैं कि साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 112 को ऐसे समय अधिनियमित किया गया था जब आधुनिक वैज्ञानिक प्रगति और डीएनए परीक्षण विधायिका की सोच में भी नहीं थे । डीएनए परीक्षण का परिणाम वैज्ञानिक रूप से सटीक बताया जाता है । यद्यपि, धारा 112 तद्धीन दशाओं के संतुष्ट किए जाने पर निश्चायक सबूत की उपधारणा करती है किन्तु यह खंडनीय है । उपधारणा सकारात्मक विधिक निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए विधिसम्मत तरीके प्रस्तुत करती है । जबकि सच्चाई या तथ्य ज्ञात हो तब हमारे मत में किसी उपधारणा के लिए कोई आवश्यकता या कोई गुंजाइश नहीं होती । जब इसके प्रतिकूल साक्ष्य हो, तब उपधारणा खंडनीय होती है और सबूत प्रस्तुत किया जाना चाहिए । सच्चाई अभिनिश्चित करने के द्वारा न्याय के उद्देश्य सर्वश्रेष्ठ रूप से पूरा किए जा सकते हैं और न्यायालय के समक्ष सर्वश्रेष्ठ उपलब्ध विज्ञान प्रस्तुत किया जाना चाहिए और उपधारणाओं के आधार पर ही विचार करने के लिए नहीं छोड़ा जाना चाहिए जब तक कि विज्ञान का विवाद्यक तथ्यों के संबंध में कोई उत्तर न हो । हमारे मत में जब विधि के अधीन परिकल्पित निश्चायक सबूत और विश्व समुदाय द्वारा स्वीकार किए गए वैज्ञानिक संवर्धन पर आधारित सबूत के सही होने के बीच एक विरोध हो तब पश्चात्वर्ती पूर्ववर्ती पर अभिभावी होगा ।

18. हमें एक विधिक कल्पना और किसी तथ्य की उपधारणा के बीच विभेद को समझना चाहिए । विधिक कल्पना ऐसे तथ्य की विधिमान्यता की उपधारणा कर लेती है जोकि वस्तुतः विद्यमान नहीं होता । तथापि, किसी तथ्य की उपधारणा कतिपय परिस्थितियों के संतुष्ट होने पर आधारित होती है । वे परिस्थितियां तर्कसम्मत रूप से उपधारण की वांछा किए गए तथ्य तक पहुंचाती है । साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 112 विधिक कल्पना सृजित नहीं करती अपितु उपधारणा का उपबंध करती है ।

19. पति का अभिवाक् कि उसकी ऐसे समय पत्नी तक कोई पहुंच नहीं थी जब बालिका का गर्भधारण किया जा सकता था, यह डीएनए परीक्षण रिपोर्ट से साबित होता है और इसको देखते हुए हम अपीलार्थी को बालक के पितृत्व का भार वहन करने के लिए बाध्य नहीं कर सकते जब

वैज्ञानिक रिपोर्टें प्रतिकूल साबित करती हों । हम इसके प्रति सचेत हैं कि किसी निर्दोष बालक को कलंकित न किए जा सके क्योंकि उसके माता और पिता का विवाह उसके जन्म के समय जारी था, किन्तु डीएनए परीक्षण रिपोर्टों और जो कुछ हमने ऊपर संप्रेक्षण किया है को देखते हुए, हम परिणाम को नहीं रोक सकते । यह सत्य को नकारना है । "सत्य की जीत होती है" यह न्याय का मूल मंत्र है ।

20. **कामती देवी** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय की नजीर के संबंध में इस न्यायालय ने साक्ष्य का मूल्यांकन करते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि पति का पत्नी के साथ कोई संपर्क जो कोई भी हो करने के लिए कोई अवसर नहीं था । मामले में कोई डीएनए परीक्षण नहीं कराया गया था । उक्त पृष्ठभूमि अर्थात् पति की पत्नी तक कोई पहुंच न होने को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि डीएनए परीक्षण का परिणाम "साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 112 की निश्चायकता से बचने के लिए पर्याप्त नहीं है ।" निर्णय को उक्त मामले के तथ्यों की पृष्ठभूमि में समझा जाना चाहिए । उक्त निर्णय में यह अभिनिर्धारित नहीं किया गया है कि डीएनए परीक्षण को अनदेखा किया जाए । वस्तुतः, इस न्यायालय ने इस तथ्य की अवेक्षा की है कि डीएनए परीक्षण वैज्ञानिक रूप से सटीक है । हम यह जोड़ना चाहेंगे कि ऊपर निर्दिष्ट किए गए किसी भी मामले में इस न्यायालय का ऐसी परिस्थिति से सामना नहीं हुआ था जिसमें वस्तुतः डीएनए परीक्षण रिपोर्ट उपलब्ध थी और साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 112 के अधीन बालिका की धर्मजता के निश्चायक सबूत की उपधारणा के विरुद्ध थी । हमने ऊपर जो कुछ मत व्यक्त किया है उसे देखते हुए यह निर्णय प्रत्यर्थी के पक्षकथन को किसी भी प्रकार सहायक नहीं होते ।

21. परिणामस्वरूप, हम इस अपील को मंजूर करते हैं, जहां तक प्रत्यर्थी सं. 2 को भरण-पोषण का संदाय करने का निदेश देने के संबंध में आक्षेपित निर्णय का संबंध है, उसे अपास्त किया जाता है । तथापि, हम यह निदेश देते हैं कि पहले ही किए जा चुके संदाय को प्रत्यर्थियों से वसूल नहीं किया जाएगा ।

अपील मंजूर की गई ।

अनू.

दोन्तुला रवीन्द्रनाथ उर्फ **रवीन्दर राव**

बनाम

आंध्र प्रदेश राज्य

6 जनवरी, 2014

न्यायमूर्ति रंजना प्रकाश देसाई और न्यायमूर्ति जे. चेलमेश्वर

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302 और धारा 304-ख – हत्या – दहेज मृत्यु – विवाह के सात वर्ष के भीतर पत्नी की हत्या – पत्नी को दहेज के लिए तंग किया जाना – अपीलार्थी द्वारा गला घोंटना साबित न होना – चूंकि अपीलार्थी और मृतका पति-पत्नी के रूप में एक ही मकान में रहते थे और वह मृतका को अतिरिक्त दहेज लाने के लिए तंग किया करता था किंतु हत्या करने का कोई भी प्रत्यक्षदर्शी साक्षी न होने के कारण अपीलार्थी धारा 302 के अधीन नहीं अपितु धारा 304-ख के अधीन दोषी होगा ।

इस मामले में के मात्र अपीलार्थी का उसके माता-पिता के साथ भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 304-ख और 498क के अधीन अपराधों के लिए विचारण किया गया था । इसके अतिरिक्त केवल इस मामले में के अपीलार्थी का विचारण दंड संहिता की धारा 302 के अधीन भी किया गया था जबकि तीनों अभियुक्तों को दंड संहिता की धारा 109 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराध के लिए आरोपित करते हुए उनका विचारण किया गया था । जबकि इस मामले में के अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 302 तथा धारा 498-क के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया, विचारण न्यायालय ने, जहां तक दंड संहिता की धारा 304-ख का संबंध है, इस मामले में के अपीलार्थी के विरुद्ध कोई भी निष्कर्ष नहीं निकाला । शेष दो अभियुक्तों को सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया । विचारण न्यायालय के इस आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी ने आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की जो खारिज कर दी गई । उच्च न्यायालय के इस आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी ने उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । उच्चतम

न्यायालय ने उच्च न्यायालय के निर्णय को उपांतरित करते हुए अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 302 के बजाय धारा 304-ख का दोषी पाया । अपील उपांतरित करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय ने आरंभ में ही यह कहा कि अभियोजन पक्ष ने अपीलार्थी को दोषसिद्ध करने के लिए जिन पांच परिस्थितियों का अवलंब लिया है उनमें से एक परिस्थिति अभि. सा. 9 के समक्ष अपीलार्थी द्वारा अभिकथित न्यायेतर संस्वीकृति है जिसे उच्च न्यायालय द्वारा अविश्वसनीय ठहराया गया है । अतः, केवल चार परिस्थितियां शेष रह जाती हैं जो इस प्रकार हैं – (i) अपीलार्थी और मृतका पति-पत्नी थे ; (ii) वे एक ही मकान में रहते थे । इन तथ्यों पर अपीलार्थी द्वारा भी विवाद नहीं किया गया है । अभियोजन पक्ष द्वारा तीसरी परिस्थिति का अवलंब लिया गया है जो इस प्रकार है कि मृतका को अतिरिक्त दहेज के लिए अपीलार्थी द्वारा तंग किया गया था । उक्त परिस्थिति अभि. सा. 1 से अभि. सा. 4 के साक्ष्य द्वारा पूर्ण रूप से सिद्ध की गई है । चौथी परिस्थिति अर्थात् चिकित्सक की राय के अनुसार मृतका की मृत्यु गला घोंटकर कारित की गई है, यदि यह मान लिया जाए तब भी न्यायालय की राय में इससे यह निष्कर्ष निकलना आवश्यक नहीं है कि केवल अभियुक्त ही इस प्रकार गला घोंटने के लिए जिम्मेदार है । जिस बिल्डिंग में अभियुक्त और मृतका रहते थे वह चार भागों में विभाजित थी जिसमें अन्य लोग भी रहते थे । यदि न्यायालय अपीलार्थी को उपरोक्त संदेह का लाभ दे, तब भी अपीलार्थी दंड संहिता की धारा 304-ख के अधीन आरोप से बच नहीं सकता जिससे यही विधिक कल्पना की जा सकती है । वर्तमान मामले में दंड संहिता की धारा 304-ख के सभी संघटकों का समाधान हो गया है कि ज्योत्सना की मृत्यु विवाह के सात वर्षों के भीतर हुई है, मृत्यु सामान्य परिस्थितियों से अन्यथा हुई है और यह कि ज्योत्सना को तंग किया गया था और ऐसा करना दंड संहिता की धारा 498-क के अर्थान्तर्गत आता है और इस आरोप के लिए अपीलार्थी को निचले दोनों न्यायालयों द्वारा दोषी पाया गया है । ऊपर उल्लिखित परिस्थितियों के आधार पर न्यायालय की राय में अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 304-ख के अधीन अपराध का दोषी मानना चाहिए । वास्तव में विचारण के दौरान उक्त अपराध के लिए उसे आरोपित किया गया था यद्यपि निचले दोनों न्यायालय इस संबंध में कोई भी निष्कर्ष अभिलिखित करने में असफल रहे हैं । दंड संहिता की धारा 304-ख के अधीन अपराध ऐसे कारावास से दंडनीय है जो सात वर्ष से कम नहीं हो सकता किंतु

आजीवन कारावास तक बढ़ाया जा सकता है । अतः, न्यायालय ने दंड संहिता की धारा 302 के अधीन की गई अपीलार्थी की दोषसिद्धि को दंड संहिता की धारा 304-ख में परिवर्तित किया है और कारावास की अवधि को घटाकर पहले से भोगे गए कारावास जितना किया है । (पैरा 10 और 11)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2009 की दांडिक अपील सं. 594.

2005 की दांडिक अपील सं. 203 में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के तारीख 5 जून, 2007 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री एजाज मकबूल

प्रत्यर्थी की ओर से श्री डी. महेश बाबू

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति जे. चेलमेश्वर ने दिया ।

न्या. चेलमेश्वर – यह अपील 2005 की दांडिक अपील सं. 203 में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के तारीख 5 जून, 2007 के निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है । उच्च न्यायालय ने उक्त निर्णय द्वारा 2004 के सेशन मामला सं. 23 में पांचवें अपर सेशन न्यायाधीश (फास्ट ट्रैक न्यायालय), निजामाबाद के तारीख 8 फरवरी, 2005 के निर्णय की पुष्टि की है ।

2. इस मामले में के मात्र अपीलार्थी का उसके माता-पिता के साथ भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 304-ख और 498-क के अधीन अपराधों के लिए विचारण किया गया था । इसके अतिरिक्त केवल इस मामले में के अपीलार्थी का विचारण दंड संहिता की धारा 302 के अधीन भी किया गया था जबकि तीनों अभियुक्तों को दंड संहिता की धारा 109 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराध के लिए आरोपित करते हुए उनका विचारण किया गया था । जबकि इस मामले में के अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 302 तथा धारा 498-क के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया, विचारण न्यायालय ने, जहां तक दंड संहिता की धारा 304-ख का संबंध है, इस मामले में के अपीलार्थी के विरुद्ध कोई भी निष्कर्ष नहीं निकाला है । शेष दो अभियुक्तों को सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया ।

3. अपीलार्थी ने दोषसिद्धि और दंडादेश से व्यथित होकर उच्च न्यायालय के समक्ष अपील की जिसमें वह सफल नहीं हो सका । इसलिए अपीलार्थी ने (उच्चतम न्यायालय के समक्ष) वर्तमान अपील फाइल की है ।

4. अपीलार्थी की पत्नी की मृत्यु 21 मई, 2003 को हुई जिसका नाम ज्योत्सना था । मृतका ज्योत्सना और अपीलार्थी का विवाह वर्ष 1998 में हुआ था, अतः ज्योत्सना की मृत्यु विवाह की तारीख से सात वर्ष के भीतर हो गई । अभियोजन पक्षकथन पारिस्थितिक साक्ष्य के आधार पर है । अभियोजन पक्ष ने इस मामले में के अपीलार्थी को दोषसिद्ध करने के लिए पांच परिस्थितियों का अवलंब लिया है, जो इस प्रकार हैं – (i) मृतका और अपीलार्थी पति-पत्नी थे ; (ii) वे एक ही मकान में रहते थे ; (iii) मृतका को अपीलार्थी द्वारा अतिरिक्त दहेज के लिए तंग किया गया था ; (iv) चिकित्सीय साक्ष्य के अनुसार यद्यपि शव अभिकथित रूप से लटका हुआ पाया गया था किंतु वास्तव में यह गला घोंटकर हत्या करने का मामला था; और अंततः अभि. सा. 9 के समक्ष अभियुक्त-1 द्वारा न्यायेतर संस्वीकृति कथन किया गया है ।

5. उपरोक्त परिस्थितियों को सिद्ध करने के लिए अभियोजन पक्ष ने कुल मिलाकर 16 साक्षियों की परीक्षा की है । अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 4 मृतका के क्रमशः माता-पिता और भाई हैं । अभि. सा. 5 और अभि. सा. 6 पड़ोसी हैं और अभि. सा. 7 उसी मोहल्ले का निवासी है जिसने अभियोजन पक्ष के अनुसार शव को छत के साथ लुंगी से लटका हुआ देखा था । अभि. सा. 14 चिकित्सक है जिसने तारीख 22 मई, 2003 को शव का शवपरीक्षण किया था । अभि. सा. 15 कस्बा पुलिस थाना – निजामाबाद, आंध्र प्रदेश के वी. टाउन पुलिस थाने का पुलिस उप-निरीक्षक/थाना प्रभारी है जिसने आरंभ में अभि. सा. 1 द्वारा रिपोर्ट (प्रदर्श पी-1) दर्ज कराए जाने पर दंड संहिता की धारा 304-ख के अधीन अपराध रजिस्ट्रीकृत किया था । अभि. सा. 1, 2 और 4 ने अपनी परीक्षा के दौरान इस मामले में के अपीलार्थी द्वारा दहेज के लिए तंग किए जाने के तथ्य को साबित किया है । अभि. सा. 3 मृतका की बहिन का पति है और इस साक्षी की परीक्षा भी दहेज के लिए तंग किए जाने को सिद्ध करने के लिए कराई गई है । इन साक्षियों का साक्ष्य अनधिक्षेप रहता है और जहां तक अपीलार्थी का संबंध है निचले दोनों न्यायालयों ने उनके साक्ष्य पर विश्वास किया है ।

6. अभि. सा. 7 उस मोहल्ले का निवासी है जहां अपीलार्थी और मृतका रहते थे । अभियोजन पक्ष के अनुसार, वह अभियुक्त-1 पर शोध्य कुछ रकम लेने के लिए अपीलार्थी के घर दुर्घटना वाले दिन 8.30 बजे पूर्वाह्न में गया

था । वहां पर उसने मृतका को उस बिल्डिंग के प्रथम तल पर छत के साथ लुंगी से लटका हुआ देखा । अभि. सा. 7 ने जान बचाने की आशा से उस महिला को नीचे उतारा और उसे फर्श पर लिटा दिया और उसने यह पाया कि उसकी पहले ही मृत्यु हो चुकी है । इसके पश्चात्, वह एक अन्य व्यक्ति भूमैया (जिसकी परीक्षा नहीं कराई गई है) ने शव को उस बिल्डिंग के भूतल पर पहुंचाया ।

7. अभि. सा. 1 के साक्ष्य के अनुसार, किसी अज्ञात व्यक्ति ने दुर्घटना वाले दिन टेलीफोन द्वारा प्रातःकाल में यह सूचना दी कि मृतका बीमार है । इसके पश्चात्, अभि. सा. 1 ने अभि. सा. 4 को सूचना दी जो उसी कस्बे (निजामाबाद) में रहता था जिसमें अपीलार्थी और मृतका रहते थे और उससे कार्यकलाप की स्थिति जानने के लिए कहा । इसके पश्चात्, अभि. सा. 1 तथा परिवार के अन्य सदस्य निजामाबाद के लिए तुरंत चल दिए और उन्हें वहां अपनी पुत्री का शव ही मिला ।

8. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि यह सिद्ध करने के लिए तनिक भी साक्ष्य नहीं है कि अपीलार्थी ने ज्योत्सना की हत्या की है । उन्होंने यह दलील दी है कि यदि किसी भी ठोस साक्ष्य के अभाव में दंड संहिता की धारा 498-क के अधीन यह साबित कर दिया जाए कि अपीलार्थी ने ज्योत्सना की हत्या कारित की है, तब भी अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध करना उचित नहीं होगा क्योंकि दांडिक विधि के अधीन यह अपेक्षा की गई है कि अभियोजन पक्ष को अभियुक्त का दोष संदेह के परे साबित करना चाहिए और पारिस्थितिक साक्ष्य के मामले में परिस्थितियों की शृंखला इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि उससे संचयी रूप से केवल अभियुक्त का दोष ही साबित हो जिसमें संदेह की कोई गुंजाइश न हो । चिकित्सक (अभि. सा. 14) ने शवपरीक्षा की है और विद्वान् काउंसेल ने साक्ष्य की विश्वसनीयता को अधिक्षेपित करते हुए विस्तारपूर्वक दलीलें दी हैं । अभि. सा. 14 ने यह राय व्यक्त की है कि मृत्यु का कारण "आघात है जो गला घोंटने के फलस्वरूप पहुंचा है" । विद्वान् काउंसेल ने यह सिद्ध करने के लिए मोदी द्वारा लिखित मेडिकल ज्यूरिसप्रुडेंस नामक पुस्तक के अनेक पैराओं का अवलंब लिया है जिससे पता चलता है कि मृतका ज्योत्सना के शरीर पर आई बाह्य क्षतियों की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, मृत्यु का कारण फांसी पर लटकाया जाना है न कि गला घोंटना जिससे अभियोजन पक्षकथन की विश्वसनीयता

संदिग्ध हो जाती है ।

9. इसके प्रतिकूल, राज्य के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि तथ्यों से निकाले गए समवर्ती निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए, जिनके आधार पर दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि की गई है, अपीलाधीन निर्णय में कोई भी अवैधता न होने के कारण हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है ।

10. हमें आरंभ में ही यह कहना होगा कि अभियोजन पक्ष ने अपीलार्थी का दोषसिद्ध करने के लिए जिन पांच परिस्थितियों का अवलंब लिया है उनमें से एक परिस्थिति अभि. सा. 9 के समक्ष अपीलार्थी द्वारा अभिकथित न्यायेतर संस्वीकृति है जिसे उच्च न्यायालय द्वारा अविश्वसनीय ठहराया गया है । अतः, केवल चार परिस्थितियां शेष रह जाती हैं जो इस प्रकार हैं – (i) अपीलार्थी और मृतका पति-पत्नी थे ; (ii) वे एक ही मकान में रहते थे । इन तथ्यों पर अपीलार्थी द्वारा भी विवाद नहीं किया गया है । अभियोजन पक्ष द्वारा तीसरी परिस्थिति का अवलंब लिया गया है जो इस प्रकार है कि मृतका को अतिरिक्त दहेज के लिए अपीलार्थी द्वारा तंग किया गया था । उक्त परिस्थिति अभि. सा. 1 से अभि. सा. 4 के साक्ष्य द्वारा पूर्ण रूप से सिद्ध की गई है ।

चौथी परिस्थिति अर्थात् चिकित्सक की राय के अनुसार मृतका की मृत्यु गला घोंटकर कारित की गई है (हम इस राय की शुद्धता की परीक्षा कराए जाने के लिए नहीं कह रहे हैं), यदि यह मान लिया जाए तब भी हमारी राय में इससे यह निष्कर्ष निकलना आवश्यक नहीं है कि केवल अभियुक्त ही इस प्रकार गला घोंटने के लिए जिम्मेदार है । जिस बिल्डिंग में अभियुक्त और मृतका रहते थे वह चार भागों में विभाजित थी जिसमें अन्य लोग भी रहते थे ।

यदि हम अपीलार्थी को उपरोक्त संदेह का लाभ दें, तब भी अपीलार्थी दंड संहिता की धारा 304-ख के अधीन आरोप से बच नहीं सकता जिससे यही विधिक कल्पना की जा सकती है । वर्तमान मामले में दंड संहिता की धारा 304-ख के सभी संघटकों का समाधान हो गया है कि ज्योत्सना की मृत्यु विवाह के सात वर्षों के भीतर हुई है, मृत्यु सामान्य परिस्थितियों से अन्यथा हुई है और यह कि ज्योत्सना को तंग किया गया था और ऐसा करना दंड संहिता की धारा 498-क के अर्थान्तर्गत आता है और इस आरोप के लिए अपीलार्थी को निचले दोनों न्यायालयों द्वारा दोषी पाया गया है ।

11. ऊपर उल्लिखित परिस्थितियों के आधार पर हमारी राय में अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 304-ख के अधीन अपराध का दोषी मानना चाहिए । वास्तव में विचारण के दौरान उक्त अपराध के लिए उसे आरोपित किया गया था यद्यपि निचले दोनों न्यायालय इस संबंध में कोई भी निष्कर्ष अभिलिखित करने में असफल रहे हैं । दंड संहिता की धारा 304-ख के अधीन अपराध ऐसे कारावास से दंडनीय है जो सात वर्ष से कम नहीं हो सकता किंतु आजीवन कारावास तक बढ़ाया जा सकता है । अतः, हम दंड संहिता की धारा 302 के अधीन की गई अपीलार्थी की दोषसिद्धि को दंड संहिता की धारा 304-ख में परिवर्तित करते हैं और कारावास की अवधि को घटाकर पहले से भोगे गए कारावास जितनी करते हैं (हमें बताया गया है कि अपीलार्थी लगभग एक दशक से जेल में है) । यदि अपीलार्थी अन्य किसी मामले में वांछित नहीं है तो उसे तत्काल छोड़ा जाए। तदनुसार अपीलाधीन निर्णय उपांतरित किया जाता है ।

अपील का निपटारा किया गया ।

अस./अनू.

[2014] 3 उम. नि. प. 23

परमिन्दर उर्फ **लाडका पोला**

बनाम

दिल्ली राज्य

16 जनवरी, 2014

न्यायमूर्ति ए. के. पटनायक और न्यायमूर्ति (श्रीमती) ज्ञान सुधा मिश्रा

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 375 – बलात्संग – अपीलार्थी का अभियोक्त्री को चारपाई पर गिराना और उसके अंतःवस्त्र उतारना – अभियोक्त्री की चड्डी पर मानव वीर्य पाया जाना किंतु योनिच्छद विदीर्ण न पाया जाना – अभियोक्त्री के साक्ष्य से चिकित्सीय साक्ष्य की संपुष्टि होने पर अपीलार्थी बलात्संग का दोषी होगा भले ही अभियोक्त्री की योनिच्छद विदीर्ण न हो ।

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 376(1) – बलात्संग – दंड की मात्रा – अपीलार्थी द्वारा न्यूनतम दंड से कम दंड की मांग किया जाना – अभियोक्त्री की आयु और अपीलार्थी का आचरण देखते हुए मांग का अनुचित पाया जाना – अभियोक्त्री की आयु अपीलार्थी का आचरण और अभियोक्त्री पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों को ध्यान में रखते हुए धारा 376(1) के अधीन न्यूनतम दंड से कम दंड अधिरोपित करना न्यायोचित नहीं होगा ।

इस मामले में अपीलार्थी परमिन्दर ने 14 वर्षीय अभियोक्त्री के साथ बलात्संग किया जिसके परिणामस्वरूप उसका सेशन न्यायालय द्वारा विचारण किया गया और उसे दोषी पाया गया । अपीलार्थी ने विचारण न्यायालय के आदेश से व्यथित होकर दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । उच्च न्यायालय ने अपने आक्षेपित निर्णय द्वारा अपील खारिज कर दी और अपीलार्थी की दोषसिद्धि कायम रखी । अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के इस आदेश से व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की है । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – विनिश्चय किए जाने के लिए न्यायालय के समक्ष प्रथम प्रश्न यह है कि क्या उच्च न्यायालय ने यह निष्कर्ष ठीक ही निकाला है कि अपीलार्थी बलात्संग के अपराध के लिए दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दोषी है या इस मामले में अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य से दंड संहिता की धारा 511 के साथ पठित धारा 376 के अधीन केवल बलात्संग का प्रयास करने का अपराध ही बनता है । न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि उच्च न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर पहुंचकर कि अपीलार्थी दंड संहिता की धारा 376 के अधीन बलात्संग के अपराध का दोषी है, अभियोक्त्री (अभि. सा. 1) के साक्ष्य, चिकित्सीय साक्ष्य और केंद्रीय न्यायालयिक प्रयोगशाला की रिपोर्ट पर विचार किया है । अभियोक्त्री ने यह कथन किया है कि अपीलार्थी ने उसे चारपाई पर धक्का दिया था और उसकी चड्डी और सलवार उतारी थी और उसने उसके साथ बलपूर्वक बलात्संग किया । अभियोक्त्री की सलवार और चड्डी, जो वह घटना के समय पहनी हुई थी, विश्लेषण के लिए केंद्रीय न्यायालयिक प्रयोगशाला भेजी गई और परीक्षा के पश्चात् केंद्रीय न्यायालयिक प्रयोगशाला में तारीख 30 अप्रैल, 2001 की अपनी रिपोर्ट में यह निष्कर्ष निकाला है कि अभियोक्त्री की चड्डी पर मानव वीर्य और रक्त लगा हुआ था जैसाकि प्रदर्श-4 (बी.) में निर्दिष्ट है । इस प्रकार, अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य की इस बात से संपुष्टि होती है कि उसके साथ बलात्संग किया गया है । तथापि, चिकित्सक (अभि. सा. 15)

ने तारीख 31 जनवरी, 2001 को अभियोक्त्री की चिकित्सा परीक्षा की है और उसने यह कथन किया है कि अभियोक्त्री के शरीर पर क्षति का कोई भी चिह्न नहीं है और उसकी योनिच्छद ठीक अवस्था में ज्यों की त्यों पाई गई है । उच्च न्यायालय ने इस साक्ष्य पर विचार किया है और यह अभिनिर्धारित किया है कि योनिच्छद का विदीर्ण न होना बलात्संग की कहानी को गलत साबित करने के लिए पर्याप्त नहीं है । दंड संहिता की धारा 375 के अधीन बलात्संग के अपराध को परिभाषित किया गया है और धारा 375 के स्पष्टीकरण के अधीन यह उल्लेख है कि बलात्संग का अपराध कारित करने के लिए मैथुन आवश्यक है और मैथुन के लिए प्रवेशन ही पर्याप्त है । वर्तमान मामले में, अभियोक्त्री की योनिच्छद विदीर्ण नहीं हुई है, फिर भी उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि प्रवेशन हुआ है जिसके कारण अभियोक्त्री के जननांगों में रक्तस्राव हुआ है जोकि इस तथ्य से भी स्पष्ट है कि अभियोक्त्री की चड्डी में रक्त लगा हुआ था । न्यायालय की सुविचारित राय में, उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी को बलात्संग के अपराध का दोषी पाकर ठीक ही किया है और अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल की इस दलील में कोई सार नहीं है कि अपीलार्थी द्वारा बलात्संग का मात्र प्रयास किया गया है न कि बलात्संग किया गया है । (पैरा 8 और 9)

अतः यह स्पष्ट है कि समुचित और विशेष कारण क्या है, यह अनेक संघटकों पर निर्भर है और यह प्रत्येक मामले के तथ्यों पर भी निर्भर है और इस संबंध में इस न्यायालय द्वारा कोई भी सीधा सिद्धांत अधिकथित नहीं किया जा सकता है । तथापि, विधान-मंडल ने न्यायालय से यह अपेक्षा की है कि किसी भी ऐसे मामले में समुचित और विशेष कारणों को अभिलिखित करे जिसमें सात वर्ष के न्यूनतम कारावास से कम कारावास का दंड अधिरोपित किया जाना हो । बलात्संग का अपराध कारित किए जाने के समय पर अभियुक्त का आचरण, अभियोक्त्री की आयु और अभियोक्त्री पर बलात्संग किए जाने से पड़ने वाले दुष्प्रभाव ऐसे सुसंगत संघटक हैं जिन पर न्यायालय को उस समय विचार करना चाहिए जब न्यूनतम दंड से कम दंड अधिरोपित किए जाने का प्रश्न उठाया गया हो । वर्तमान मामले के तथ्यों के आधार पर न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि अभियोक्त्री आठवीं कक्षा की छात्रा थी और तारीख 28 जनवरी, 2001 को उसकी आयु लगभग 14 वर्ष थी और वह अप्राप्तवय कन्या थी । वह अभियुक्त के घर अभियुक्त की बहिन और अपनी सहेली बब्बो को तलाश करने गई थी । जब उसने अपीलार्थी से पूछा कि उसकी बहिन कहां है, तब अपीलार्थी ने

उसे यह बताया कि बब्बो कमरे में है और जब अभियोक्त्री कमरे के अंदर गई, वह भी कमरे में उसके पीछे-पीछे गया, कमरा अंदर से बंद किया और उसने अभियोक्त्री को चारपाई पर लिटा दिया । इसके पश्चात् अपीलार्थी ने अभियोक्त्री की सलवार और चड्डी उतार दी और उसके साथ बलात्संग किया । इस घटना के परिणामस्वरूप, उसके माता-पिता ने उसे स्कूल जाने से रोक दिया और उससे आठवीं कक्षा की पढ़ाई व्यक्तिगत रूप से करने को कहा । अभियोक्त्री की आयु, अपीलार्थी का आचरण और अभियोक्त्री पर बलात्संग से पड़ने वाले दुष्प्रभावों को ध्यान में रखते हुए, न्यायालय का यह विचार है कि इस मामले में दंड संहिता की धारा 376(1) के अधीन न्यूनतम दंड से कम दंड अधिरोपित किए जाने के लिए समुचित और विशेष कारण नहीं हैं । (पैरा 16)

अवलंबित निर्णय

		पैरा
[2012]	(2012) 6 एस. सी. सी. 770 = ए. आई. आर. 2012 एस. सी. 2301 : **राजस्थान राज्य** बनाम **विनोद कुमार** ;	7
[2010]	(2010) 2 एस. सी. सी. 9 = ए. आई. आर. 2010 एस. सी. 1 : **वाहिद खान** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	9
[2009]	(2009) 2 एस. सी. सी. 272 = ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 1810 : **मध्य प्रदेश राज्य** बनाम **बबलू नट** ।	7

निर्दिष्ट निर्णय

[2012]	(2012) 7 एस. सी. सी. 171 = ए. आई. आर. 2012 एस. सी. 2281 : **नरेन्द्र कुमार** बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्य क्षेत्र, दिल्ली)** ;	4
[2011]	(2011) 13 एस. सी. सी. 705 = ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 1231 : **बलदेव सिंह और अन्य** बनाम **पंजाब राज्य** ;	5

[2000] (2000) 9 एस. सी. सी. 2004 :
सुखविन्दर सिंह बनाम **पंजाब राज्य** ; 5

[2000] (2000) 5 एस. सी. सी. 30 =
ए. आई. आर. 2000 एस. सी. 1812 :
राजस्थान राज्य बनाम **एन. के. (अभियुक्त)** । 5

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2006 की दांडिक अपील सं. 133.

2002 की दांडिक अपील सं. 696 में दिल्ली उच्च न्यायालय के तारीख 6 मार्च, 2003 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री परमानन्द गौड़

प्रत्यर्थी की ओर से सुश्री अनिल कटियार

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति ए. के. पटनायक ने दिया ।

न्या. पटनायक – यह अपील 2002 की दांडिक अपील सं. 696 में दिल्ली उच्च न्यायालय के तारीख 6 मार्च, 2003 के उस निर्णय के विरुद्ध विशेष इजाजत द्वारा संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन फाइल की गई है जिसके अनुसार भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे संक्षेप में "दंड संहिता" कहा गया है) की धारा 376 और 506 के अधीन विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित अपीलार्थी की दोषसिद्धि और दंडादेश कायम रखे गए हैं ।

तथ्य :–

2. संक्षेप में तथ्य इस प्रकार है कि तारीख 30 जनवरी, 2001 को लगभग 8.00 बजे अपराह्न में एक कन्या ने जिसकी आयु लगभग 14 वर्ष थी, अपने माता-पिता के साथ पुलिस थाना खजूरी-खास दिल्ली में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई जिसमें उसने यह कथन किया है – वह हायर सेकेंडरी स्कूल की छात्रा है और अपने माता-पिता के साथ मकान नं. 131, गली नं. 12, खजूरी-खास, दिल्ली में रहती है । उनके मकान के सामने सरदार जागीर सिंह का मकान है । सरदार जागीर सिंह की पुत्री बब्बो उसकी सहेली है और वह बब्बो से मिलने सरदार जागीर सिंह के घर आया-जाया करती है । तारीख 28 जनवरी, 2001 को लगभग 8.30 बजे अपराह्न में उस इलाके में बिजली चली गई और जब सरदार जागीर सिंह के मकान में जनरेटर चालू किया गया तब अभियोक्त्री बब्बो से मिलने गई उस दिन सरदार जागीर सिंह के पुत्र अर्थात् अपीलार्थी से मालूम किया कि क्या बब्बो घर में है और अपीलार्थी ने उसे बताया कि बब्बो कमरे में है ।

जब वह कमरे के अंदर गई, अपीलार्थी उसके पीछे-पीछे कमरे में गया और उसने अंदर से कमरा बंद कर लिया और उसने अभियोक्त्री को बलपूर्वक चारपाई पर लिटा दिया । जब उसने शोर मचाया, तब अपीलार्थी ने उसे थप्पड़ मारा । इसके पश्चात् अपीलार्थी ने उसकी सलवार और चड्डी उतार दी और उसके साथ बलात्संग किया । अपीलार्थी ने उसे जान से मारने की धमकी भी दी कि वह इस घटना के बारे में किसी को न बताए । अभियोक्त्री ने भय और लाज के कारण किसी को भी इस घटना के बारे में नहीं बताया किंतु उसने 30 जनवरी, 2001 की शाम को अपनी माता को घटना के बारे में बताया ।

3. लड़की (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अभियोक्त्री" निर्दिष्ट किया गया है) के इस कथन के आधार पर तारीख 30 जनवरी, 2001 को दंड संहिता की धारा 376 और 506 के अधीन मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया । उसी रात अभियोक्त्री की चिकित्सा परीक्षा कराई गई । अभियोक्त्री की एक्सरे रिपोर्ट का परिशीलन करने पर चिकित्सक ने यह राय व्यक्त की है कि उसकी आयु 14 वर्ष से अधिक किंतु 16 वर्ष से कम है । उसके कपड़े और योनिक स्वाब विश्लेषण के लिए केंद्रीय न्यायालयिक प्रयोगशाला भेजे गए और न्यायालयिक प्रयोगशाला की रिपोर्ट के अनुसार अभियोक्त्री की चड्डी पर पुरुष वीर्य और रक्त पाया गया, किंतु योनिक स्वाब में वीर्य नहीं पाया गया । अन्वेषण के पश्चात् अपीलार्थी के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 342/354/376/506 के अधीन आरोप पत्र फाइल किया गया । तथापि, आरोप दंड संहिता की धारा 376 और 506 के अधीन ही विरचित किया गया, और चूंकि अपीलार्थी ने दोषी न होने का अभिवाक् किया था इसलिए उसका विचारण किया गया । विचारण के दौरान अभियोजन पक्ष की ओर से अभियोक्त्री सहित कुल मिलाकर 15 साक्षियों की परीक्षा की गई । अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 376 और 506 के अधीन दोषसिद्ध किया । विचारण न्यायालय ने दंड संहिता की धारा 376 के अधीन अपराध के लिए सात वर्ष के कठोर कारावास का अल्पतम दंड और 5,000/- रुपए का जुर्माना अधिरोपित किया तथा जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम किए जाने पर एक वर्ष के कठोर कारावास का दंड अधिरोपित किया और दंड संहिता की धारा 506 के अधीन अपराध के लिए दो वर्ष का कारावास भोगने और 5,000/- रुपए जुर्माने का संदाय करने तथा जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम किए जाने पर छह मास का कठोर कारावास भोगने का दंडादेश दिया । विचारण न्यायालय ने यह भी निदेश दिया कि दंडादेश

साथ-साथ चलेंगे । इस आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के समक्ष 2002 की दांडिक अपील सं. 696 फाइल की, किंतु उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा अपील खारिज कर दी ।

पक्षकारों के प्रतिवाद :–

4. इस अपील की सुनवाई किए जाने पर, अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल श्री जन कल्याण दास ने यह दलील दी है कि बहुत से बहुत यह बलात्संग का प्रयास किए जाने का मामला है न कि बलात्संग का और इसीलिए अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 376 के अधीन नहीं अपितु धारा 376/511 के अधीन दोषी ठहराया जाना चाहिए । काउंसेल ने अपनी इस दलील के समर्थन में अभियोक्त्री (अभि. सा. 1) के साक्ष्य तथा चिकित्सीय साक्ष्य को निर्दिष्ट किया है कि अभियोक्त्री के साथ बलात्संग का कोई भी अपराध कारित नहीं किया गया है । उन्होंने **नरेन्द्र कुमार** बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्य क्षेत्र, दिल्ली)**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय को इस प्रतिपादना के लिए उद्धृत किया गया है कि बलात्संग के मामले में भी अपराध के प्रत्येक संघटक को सकारात्मक रूप से साबित करने का भार सदैव अभियोजन पक्ष पर ही होता है और यह भार कभी भी दूसरे पक्षकार पर नहीं जाता है और प्रतिरक्षा पक्ष का यह कर्तव्य नहीं है कि वह यह स्पष्ट करे कि आहत और अन्य साक्षियों ने अभियुक्त को मिथ्या क्यों फंसाया है । काउंसेल ने यह दलील दी है कि यदि यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि अपीलार्थी बलात्संग का प्रयास करने का दोषी है न कि बलात्संग का, तब वह बलात्संग के लिए उपबंधित दंडादेश के आधे भाग के लिए जिम्मेदार होगा जैसाकि दंड संहिता की धारा 511 के अधीन उपबंधित है ।

5. श्री दास ने यह भी दलील दी है कि जब अपीलार्थी जेल अभिरक्षा में था तब उसने विद्या अध्ययन किया और 10वीं कक्षा की परीक्षा उत्तीर्ण की और वह 12वीं कक्षा की परीक्षा में भी केंद्रीय जेल, तिहाड़, दिल्ली के अभ्यर्थी के रूप में बैठा है और तीन वर्ष नौ मास का कारावास भोगने के पश्चात् उसे जमानत पर छोड़ा गया है और तारीख 16 अगस्त, 2007 को उसका विवाह हुआ है । काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि तारीख 28 जून, 2008 को अपीलार्थी के यहां पुत्री ने जन्म लिया है जो लोवर के. जी. कक्षा में पढ़ रही है और तारीख 13 जून, 2012 को अपीलार्थी के यहां दूसरी कन्या ने जन्म लिया है जो अभी अपनी माता की गोद में है ।

---

[1] (2012) 7 एस. सी. सी. 171 = ए. आई. आर. 2012 एस. सी. 2281.

अपीलार्थी ने तारीख 12 फरवरी, 2013 को एक शपथपत्र फाइल किया है जिसमें उसने इन सभी तथ्यों का उल्लेख किया है । काउंसेल ने यह दलील दी है कि चूंकि अपीलार्थी अपने परिवार का पोषण करने वाला एकमात्र व्यक्ति है और वह अपने परिवार की जीविका के लिए दिल्ली में छोटा-मोटा कार्य कर रहा है, इसलिए यदि उसे न्यायालय द्वारा अधिरोपित सात वर्ष के कारावास में से शेष कारावास को पूरा करने के लिए जेल भेजा जाता है तो उसके परिवार को अत्यधिक पीड़ा होगी । काउंसेल ने यह दलील दी है कि दंड संहिता की धारा 376(1) के उपबंधों के अधीन न्यायालय निर्णय में समुचित और विशेष कारणों का उल्लेख करते हुए सात वर्ष की अवधि से कम अवधि का कारावास अधिरोपित कर सकता है । उन्होंने यह दलील दी है कि ऊपर उल्लिखित तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए इस न्यायालय को अपीलार्थी पर अधिरोपित दंडादेश को कम करके पहले से भोगे गए कारावास जितना कर देना चाहिए ताकि उसके परिवार को पीड़ा न हो । इस दलील के समर्थन में काउंसेल ने **राजस्थान राज्य** बनाम **एन. के. (अभियुक्त)**[1], **सुखविन्दर सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[2] और **बलदेव सिंह और अन्य** बनाम **पंजाब राज्य**[3] वाले मामलों में किए गए इस न्यायालय के विनिश्चयों को उद्धृत किया है ।

6. इसके उत्तर में, राज्य के विद्वान् काउंसेल श्री राकेश खन्ना ने यह दलील दी है कि अभियोजन पक्ष ने संदेह के परे यह साबित करने का भार उठाया है कि अपीलार्थी ने अभियोक्त्री के साथ बलात्संग किया है । उन्होंने अभि. सा. 1 के साक्ष्य तथा न्यायालयिक प्रयोगशाला की रिपोर्ट का अवलंब यह दर्शाने के लिए किया है कि यह अपीलार्थी द्वारा केवल बलात्संग का प्रयास करने का मामला नहीं है । उन्होंने यह दलील दी है कि उच्च न्यायालय ने यह निष्कर्ष ठीक ही निकाला है कि अपीलार्थी ने अभियोक्त्री के साथ बलात्संग किया है ।

7. दंडादेश के प्रश्न पर श्री खन्ना ने यह दलील दी है कि यह ऐसा मामला है जिसमें अप्राप्तवय कन्या के साथ अपराध कारित किया गया है और अभियोक्त्री (अभि. सा. 1) के कथन से यह स्पष्ट है कि बलात्संग के कारण उसके माता-पिता ने कन्या को स्कूल जाने से रोक दिया था और उसे कक्षा आठ तक व्यक्तिगत रूप से पढ़ाई करनी पड़ी । काउंसेल ने यह

---

[1] (2000) 5 एस. सी. सी. 30 = ए. आई. आर. 2000 एस. सी. 1812.

[2] (2000) 9 एस. सी. सी. 2004.

[3] (2011) 13 एस. सी. सी. 705 = ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 1231.

दलील दी है कि अपीलार्थी द्वारा अप्राप्तवय कन्या के साथ लैंगिक अपराध कारित किए जाने की गंभीर प्रकृति पर विचार करते हुए यह ऐसा मामला नहीं है जिसमें इस न्यायालय को दंड संहिता की धारा 376(1) के परंतुक का अवलंब लेना चाहिए और जैसाकि दंड संहिता की धारा 376(1) में उपबंध किया गया है बलात्संग के अपराध के लिए सात वर्ष के न्यूनतम दंडादेश को कम करके अपीलार्थी द्वारा पहले से भोगे गए कारावास जितना कर दिया जाए । काउंसेल ने **मध्य प्रदेश राज्य** बनाम **बबलू नट**[1] और **राजस्थान राज्य** बनाम **विनोद कुमार**[2] वाले मामलों में किए गए इस न्यायालय के विनिश्चयों को उद्धृत किया है जिनमें इस न्यायालय ने, दंड संहिता की धारा 376(1) के परंतुक में प्रयोग की गई भाषा पर विचार करने के पश्चात् उच्च न्यायालय के उन आदेशों को अपास्त किया है जिनके अनुसार दंड संहिता की धारा 376 के अधीन बलात्संग के मामलों में सात वर्ष के न्यूनतम दंड से कम दंड अधिरोपित किया गया है ।

न्यायालय के निष्कर्ष :–

8. विनिश्चय किए जाने के लिए हमारे समक्ष प्रथम प्रश्न यह है कि क्या उच्च न्यायालय ने यह निष्कर्ष ठीक ही निकाला है कि अपीलार्थी बलात्संग के अपराध के लिए दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दोषी है या इस मामले में अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य से दंड संहिता की धारा 511 के साथ पठित धारा 376 के अधीन केवल बलात्संग का प्रयास करने का अपराध ही बनता है । हमारा यह निष्कर्ष है कि उच्च न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर पहुंचकर कि अपीलार्थी दंड संहिता की धारा 376 के अधीन बलात्संग के अपराध का दोषी है, अभियोक्त्री (अभि. सा. 1) के साक्ष्य, चिकित्सीय साक्ष्य और केंद्रीय न्यायालयिक प्रयोगशाला की रिपोर्ट पर विचार किया है । अभियोक्त्री ने यह कथन किया है कि अपीलार्थी ने उसे चारपाई पर धक्का दिया था और उसकी चड्डी और सलवार उतारी थी और उसने उसके साथ बलपूर्वक बलात्संग किया । अभियोक्त्री की सलवार और चड्डी, जो वह घटना के समय पहनी हुई थी, विश्लेषण के लिए केंद्रीय न्यायालयिक प्रयोगशाला भेजी गई और परीक्षा के पश्चात् केंद्रीय न्यायालयिक प्रयोगशाला में तारीख 30 अप्रैल, 2001 की अपनी रिपोर्ट में यह निष्कर्ष निकाला है कि अभियोक्त्री की चड्डी पर मानव वीर्य और रक्त लगा हुआ था जैसाकि प्रदर्श-4 (बी.) में निर्दिष्ट है । इस प्रकार,

---

[1] (2009) 2 एस. सी. सी. 272 = ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 1810.

[2] (2012) 6 एस. सी. सी. 770 = ए. आई. आर. 2012 एस. सी. 2301.

अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य की इस बात से संपुष्टि होती है कि उसके साथ बलात्संग किया गया है ।

9. तथापि, चिकित्सक (अभि. सा. 15) ने तारीख 31 जनवरी, 2001 को अभियोक्त्री की चिकित्सा परीक्षा की है और उसने यह कथन किया है कि अभियोक्त्री के शरीर पर क्षति का कोई भी चिह्न नहीं है और उसकी योनिच्छद ठीक अवस्था में ज्यों की त्यों पाई गई है । उच्च न्यायालय ने इस साक्ष्य पर विचार किया है और यह अभिनिर्धारित किया है कि योनिच्छद का विदीर्ण न होना बलात्संग की कहानी को गलत साबित करने के लिए पर्याप्त नहीं है और मोदी द्वारा लिखित मेडिकल ज्यूरिसप्रूडेंस एंड टॉक्सिकॉलोजी (21वां संस्करण) नामक पुस्तक के निम्न पैरा का अवलंब लिया है :–

> "इस प्रकार, बलात्संग का अपराध गठित करने के लिए लिंग का पूर्ण प्रवेशन, वीर्य का स्खलन और योनिच्छद का विदीर्ण होना आवश्यक नहीं है । दीर्घ भगोष्ट या योनि के भीतर बिना वीर्य स्खलन के लिंग का आंशिक प्रवेशन यहां तक कि प्रवेशन का प्रयास करना विधि के प्रयोजन हेतु अपराध गठित किए जाने के लिए पर्याप्त है । अतः यह पूर्णतया संभव है कि जननांग को क्षति पहुंचाए बिना या वीर्य का कोई भी धब्बा छोड़े बिना भी बलात्संग का अपराध विधिक रूप से कारित हो सकता है ।"

दंड संहिता की धारा 375 के अधीन बलात्संग के अपराध को परिभाषित किया गया है और धारा 375 के स्पष्टीकरण के अधीन यह उल्लेख है कि बलात्संग का अपराध कारित करने के लिए मैथुन आवश्यक है और मैथुन के लिए प्रवेशन ही पर्याप्त है । तदनुसार इस न्यायालय ने **वाहिद खान** बनाम **मध्य प्रदेश**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि बलात्संग का अपराध गठित किए जाने के लिए तनिक प्रवेशन भी पर्याप्त है और प्रवेशन की गहराई महत्वपूर्ण नहीं है । उपर्युक्त मामले में, इस न्यायालय ने ऊपर उल्लिखित मोदी द्वारा लिखित मेडिकल ज्यूरिसप्रूडेंस एंड टॉक्सिकॉलोजी (21वां संस्करण) नामक पुस्तक का अवलंब लिया है । वर्तमान मामले में, अभियोक्त्री की योनिच्छद विदीर्ण नहीं हुई है, फिर भी उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि प्रवेशन हुआ है जिसके कारण अभियोक्त्री के जननांगों में रक्तस्राव हुआ है जोकि इस तथ्य से भी

---

[1] (2010) 2 एस. सी. सी. 9 = ए. आई. आर. 2010 एस. सी. 1.

स्पष्ट है कि अभियोक्त्री की चड्डी में रक्त लगा हुआ था । हमारी सुविचारित राय में, उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी को बलात्संग के अपराध का दोषी पाकर ठीक ही किया है और अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल की इस ददील में कोई सार नहीं है कि अपीलार्थी द्वारा बलात्संग का मात्र प्रयास किया गया है न कि बलात्संग किया गया है ।

10. हमारे विचार के लिए अगला प्रश्न यह है कि क्या न्यायालय को दंड संहिता की धारा 376(1) के परंतुक का अवलंब लेना चाहिए था या नहीं और इस मामले में सात वर्ष से कम अवधि के कारावास का दंड अधिरोपित करना चाहिए था या नहीं । दंड संहिता की धारा 376(1), जैसाकि यह वर्ष 2013 में किए गए संशोधन के पूर्व दिखाई देता है, में स्पष्ट रूप से यह उल्लेख किया गया है कि न्यायालय निर्णय में "समुचित और विशेष कारणों का उल्लेख करते हुए" दंड संहिता की धारा 376(1) के अधीन अपराध में सात वर्ष से कम अवधि के कारावास का दंड अधिरोपित कर सकता है । अब हम पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों द्वारा उद्धृत मामलों पर विचार करेंगे जिनमें इस न्यायालय ने यह विचार किया है कि क्या बलात्संग के मामले में न्यूनतम दंडादेश से कम अवधि का दंड देने के लिए परंतुक का अवलंब लिया जाना चाहिए या नहीं ।

11. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा उद्धृत **राजस्थान राज्य** बनाम **एन. के. (अभियुक्त)** वाले मामले में इस न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला है कि अभियुक्त ने ऐसी अभियोक्त्री के साथ बलात्संग कारित किया है जो एक विवाहित महिला है । इस न्यायालय ने यह भी निष्कर्ष निकाला है कि यह घटना वर्ष 1993 की है और अभियुक्त को तारीख 3 नवंबर, 1993 को पुलिस अभिरक्षा में लिया गया था और उसे जमानत मंजूर नहीं की गई तथा विचारण एवं अपील की सुनवाई के दौरान वह जेल में ही रहा और उच्च न्यायालय ने जब उसे आरोपों से दोषमुक्त किया तब वह 11 अक्तूबर, 1995 को ही जेल से बाहर आ सका । इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि यद्यपि अभियुक्त लगभग दो वर्ष तक जेल में रहा है और छूट की अवधि जिसके लिए वह हकदार है तथा अपराध कारित किए जाने की तारीख के बाद बीते समय को ध्यान में रखते हुए अभियुक्त को वापस जेल नहीं भेजना चाहिए और दंडादेश की अवधि को कम करके उसके द्वारा पहले से भोगे गए दंड जितना कर देना चाहिए ।

12. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा उद्धृत **सुखविन्दर सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** (उपरोक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने यह निष्कर्ष

निकाला है कि अभियोक्त्री ने मैथुन के कार्य में अपनी सहमति दी थी और यह कि उसने इच्छापूर्वक अपीलार्थी के साथ रहने के लिए अपने माता-पिता का घर छोड़ा था किंतु यह पाया गया कि "अभियोक्त्री की आयु 16 वर्ष से अधिक नहीं है" और इस आधार पर उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की दोषसिद्धि कायम रखी है । इस न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि चूंकि अभियोक्त्री का विवाह हो गया था और वह इस मुकदमे को और आगे चलाना नहीं चाहती थी और वह अपने पति के साथ सुखी और समृद्ध वैवाहिक जीवन चाहती थी और उसने इस बाबत एक समझौता याचिका भी फाइल की, इसलिए उसे पहले से भोगे गए कारावास जितना दंड कम करने के लिए समुचित और विशेष कारण हैं ।

13. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा उद्धृत **बलदेव सिंह और अन्य** बनाम **पंजाब राज्य** (उपरोक्त) वाले मामले में अभियुक्त को दंड संहिता की धारा 376(2)(छ) के अधीन सामूहिक बलात्संग का दोषी पाया गया । इसके लिए न्यूनतम दंड 10 वर्ष का कठोर कारावास है । तथापि, दंड संहिता की धारा 376(2) के परंतुक के अंतर्गत यह उल्लेख है कि न्यायालय निर्णय में समुचित और विशेष कारणों का उल्लेख करते हुए 10 वर्ष की अवधि से कम अवधि का दंड अधिरोपित कर सकता है । इस न्यायालय ने मामले के तथ्यों के आधार पर यह अभिनिर्धारित किया है कि चूंकि यह घटना वर्ष 1997 में घटित हुई है और चूंकि पक्षकारों के बीच समझौता हो गया है इसलिए दंड संहिता की धारा 376(2)(छ) के परंतुक को दृष्टिगत करते हुए कारावास की अवधि को घटाकर पहले से भोगे गए कारावास जितना कर दिया जाए ।

14. इसके प्रतिकूल राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा उद्धृत **मध्य प्रदेश राज्य** बनाम **बबलू नट** (उपरोक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला है कि दंड संहिता की धारा 376(1) के अधीन सात वर्ष के न्यूनतम दंड से कम अवधि के दंड को अधिरोपित करने के लिए समुचित कारण नहीं हैं क्योंकि अभियोक्त्री अप्राप्तवय है और उसके साथ बलात्संग किया गया है और उसे छतरपुर में अभियुक्त के साथ कई दिनों तक साथ रहने के लिए विवश किया गया है और चूंकि उच्च न्यायालय ने सात वर्ष से कम अवधि का दंड अधिरोपित किया था इसलिए इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय के निर्णय को अपास्त कर दिया है ।

15. राज्य की ओर से उद्धृत किए गए **राजस्थान राज्य** बनाम **विनोद कुमार** (उपरोक्त) वाले मामले में अभियुक्त विनोद कुमार को विचारण

न्यायालय द्वारा दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था और उसे सात वर्ष के कारावास का दंडादेश दिया गया था । तथापि, उच्च न्यायालय ने इस संबंध में समुचित और विशेष कारण अभिलिखित किए बिना कारावास की अवधि को घटाकर पांच वर्ष कर दिया । इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि उच्च न्यायालय यह सुनिश्चित करने में असफल रहा है कि समुचित और विशेष कारण अभिलिखित किए जाने के लिए दंड संहिता की धारा 376(1) के परंतुक की आज्ञापक अपेक्षा का अनुपालन किया गया है या नहीं । इस न्यायालय ने, इस न्यायालय के पूर्ववर्ती विनिश्चयों पर विचार करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया है :–

> "23. इस प्रकार, इस मुद्दे से संबंधित विधि इस रूप में संक्षिप्त की जा सकती है कि दंड सदैव अपराध की गंभीरता के अनुसार होना चाहिए । दंड की मात्रा तय करने के लिए अभियुक्त या आहत का धर्म, वर्ग, जाति, आर्थिक या सामाजिक हैसियत सुसंगत संघटक नहीं हैं । न्यायालय को सभी गुरुतरकारी और न्यूनकारी संघटकों और उन परिस्थितियों को ध्यान में रखने के पश्चात् दंड सुनिश्चित करना चाहिए जिनमें अपराध कारित किया गया है । अभियुक्त का आचरण और उसकी मानसिक स्थिति और लैंगिक अपराध से आहत व्यक्ति की आयु और आपराधिक कृत्य की गंभीरता सबसे महत्वपूर्ण संघटक है । न्यायालय को मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर उद्देशात्मक रूप से विचार करते हुए दंड अधिरोपित करना चाहिए ।
>
> 24. परंतुक के अधीन शक्ति का प्रयोग सामान्य अनुक्रम में बिना सोचे-समझे नहीं करना चाहिए जिसका यह कारण है कि अपवाद खंड के अधीन कड़े रूप से निर्वचन किए जाने की अपेक्षा की गई है । विधान-मंडल ने 25 दिसंबर, 1983 से प्रभावी दंड संहिता में संशोधन करके न्यूनतम दंड अधिरोपित किया है, अतः न्यायालयों को इस संशोधन के प्रभाव को ध्यान में रखना ही होगा । न्यायालयों को परंतुक का अवलंब लेने के लिए अपवाद खंड में विवेकाधिकार का प्रयोग करते समय 'आपवादिक कारणों' को अभिलिखित करना चाहिए । ऐसे कारणों को अभिलिखित करना असाधारण अनुतोष प्रदत्त किए जाने के लिए अनिवार्य है । समुचित और विशेष क्या है, यह अनेक कारणों पर निर्भर है और इसके लिए कोई भी एक जैसा सिद्धांत अधिकथित नहीं किया जा सकता है ।"

16. अतः यह स्पष्ट है कि समुचित और विशेष कारण क्या हैं, यह अनेक संघटकों पर निर्भर है और यह प्रत्येक मामले के तथ्यों पर भी निर्भर है और इस संबंध में इस न्यायालय द्वारा कोई भी सीधा सिद्धांत अधिकथित नहीं किया जा सकता है । तथापि, विधान-मंडल ने न्यायालय से यह अपेक्षा की है कि किसी भी ऐसे मामले में समुचित और विशेष कारणों को अभिलिखित करे जिसमें सात वर्ष के न्यूनतम कारावास से कम कारावास का दंड अधिरोपित किया जाना हो । बलात्संग का अपराध कारित किए जाने के समय पर अभियुक्त का आचरण, अभियोक्त्री की आयु और अभियोक्त्री पर बलात्संग किए जाने से पड़ने वाले दुष्प्रभाव ऐसे सुसंगत संघटक हैं जिन पर न्यायालय को उस समय विचार करना चाहिए जब न्यूनतम दंड से कम दंड अधिरोपित किए जाने का प्रश्न उठाया गया हो । वर्तमान मामले के तथ्यों के आधार पर हमारा यह निष्कर्ष है कि अभियोक्त्री आठवीं कक्षा की छात्रा थी और तारीख 28 जनवरी, 2001 को उसकी आयु लगभग 14 वर्ष थी और वह अप्राप्तवय कन्या थी । वह अभियुक्त के घर अभियुक्त की बहिन और अपनी सहेली बब्बो को तलाश करने गई थी । जब उसने अपीलार्थी से पूछा कि उसकी बहिन कहां है, तब अपीलार्थी ने उसे यह बताया कि बब्बो कमरे में है और जब अभियोक्त्री कमरे के अंदर गई, वह भी कमरे में उसके पीछे-पीछे गया, कमरा अंदर से बंद किया और उसने अभियोक्त्री को चारपाई पर लिटा दिया । इसके पश्चात् अपीलार्थी ने अभियोक्त्री की सलवार और चड्डी उतार दी और उसके साथ बलात्संग किया । इस घटना के परिणामस्वरूप, उसके माता-पिता ने उसे स्कूल जाने से रोक दिया और उससे आठवीं कक्षा की पढ़ाई व्यक्तिगत रूप से करने को कहा । अभियोक्त्री की आयु, अपीलार्थी का आचरण और अभियोक्त्री पर बलात्संग से पड़ने वाले दुष्प्रभावों को ध्यान में रखते हुए, हमारा यह विचार है कि इस मामले में दंड संहिता की धारा 376(1) के अधीन न्यूनतम दंड से कम दंड अधिरोपित किए जाने के लिए समुचित और विशेष कारण नहीं हैं ।

17. परिणामतः, हमारा यह निष्कर्ष है कि इस अपील में कोई सार नहीं है और तदनुसार हम इसे खारिज करते हैं ।

अपील खारिज की गई ।

अस./अनू.

हिमाचल प्रदेश राज्य

बनाम

सुनील कुमार

5 मार्च, 2014

न्यायमूर्ति रंजना प्रकाश देसाई और न्यायमूर्ति मदन बी. लोकुर

स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 (1985 का 61) – धारा 50 – शारीरिक तलाशी – बस में बिना टिकट यात्रियों की आकस्मिक जांच-पड़ताल के दौरान पुलिस द्वारा अभियुक्त (बस यात्री) को कुछ छिपाते हुए देखकर संदेह होने पर उसकी तलाशी लिया जाना – अभियुक्त के कब्जे से चरस की बरामदगी होना – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्त की दोषसिद्धि को धारा 50 के उपबंधों का अनुपालन न किए जाने के आधार पर अपास्त किया जाना – अभियुक्त की शारीरिक तलाशी में चरस की बरामदगी एक संयोगवश बरामदगी थी, इसलिए अभियुक्त को किसी मजिस्ट्रेट या राजपत्रित अधिकारी के समक्ष तलाशी दिए जाने का विकल्प देने संबंधी धारा 50 के उपबंध लागू नहीं होते और विचारण न्यायालय द्वारा की गई अभियुक्त की दोषसिद्धि उचित है ।

प्रत्यर्थी-सुनील कुमार हिमाचल प्रदेश के चम्बा से हिमाचल प्रदेश परिवहन की एक बस में यात्रा कर रहा था । पुलिस द्वारा बिना टिकट यात्रियों की जांच-पड़ताल के लिए बस को रुकवाया गया । पुलिस द्वारा जांच-पड़ताल के दौरान सुनील कुमार को अपने कपड़ों के नीचे कुछ छिपाते हुए देखा गया । इसलिए उसे बस से नीचे उतरने के लिए कहा गया और उसकी तलाशी लेने पर पुलिस को उसके पेट के नीचे "परने" (कपड़े का एक टुकड़ा) से बंधा हुआ एक पोलीथिन का लिफाफा पाया । पोलीथिन के लिफाफे को खोला गया और उसमें चरस पाई गई । प्रत्यर्थी-सुनील कुमार को सबोध कब्जे में स्वापक पदार्थ रखने के लिए अभियोजित किया गया । विचारण न्यायालय द्वारा यह निष्कर्ष निकाला गया कि प्रत्यर्थी-सुनील कुमार के सबोध कब्जे में एक स्वापक पदार्थ था और उसकी बरामदगी एक संयोगवश बरामदगी थी और तलाशी और अभिग्रहण से संबंधित अधिनियम के उपबंध लागू नहीं होते थे और तद्नुसार उसे

दोषसिद्धि और दंडादिष्ट किया गया । प्रत्यर्थी-सुनील कुमार ने व्यथित होकर हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । उच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में यह अभिनिर्धारित किया कि चरस की बरामदगी एक संयोगवश हुई बरामदगी नहीं थी । यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि हालांकि जो तलाशी ली गई थी वह एक आकस्मिक तलाशी थी, किंतु पुलिस अधिकारियों को यह एक सकारात्मक संदेह था कि सुनील कुमार के पास विनिषिद्ध पदार्थ हो सकता है । यही कारण है कि उसे बस से नीचे उतरने के लिए कहा गया और फिर शारीरिक तलाशी ली गई । उच्च न्यायालय के अनुसार, इस पर अधिनियम की धारा 50 के उपबंध लागू होते थे और सुनील कुमार को अधिनियम की धारा 50 के अनुपालन में किसी राजपत्रित अधिकारी या मजिस्ट्रेट के समक्ष तलाशी दिए जाने का विकल्प दिया जाना चाहिए था और चूंकि यह विकल्प नहीं दिया गया था, इसलिए सुनील कुमार पर अधिरोपित दोषसिद्धि और दंडादेश को अपास्त करते हुए उसे दोषमुक्त कर दिया । राज्य ने उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह स्पष्ट है कि पुलिस अधिकारी उन यात्रियों की जांच-पड़ताल कर रहे थे जो बिना टिकट यात्रा कर रहे थे और इससे ज्यादा कुछ नहीं । उन्हें आकस्मिक या अप्रत्याशित रूप से एक यात्री द्वारा ले जा रही स्वापक ओषधि मिली । इसे केवल संयोग से हुई बरामदगी के रूप में वर्णित किया जा सकता है, चूंकि वे न तो स्वापक ओषधियों के लिए जांच-पड़ताल कर रहे थे और न ही उन्हें किसी व्यक्ति के पास स्वापक ओषधि पाने की प्रत्याशा थी । उच्च न्यायालय के इस मत को स्वीकार करना संभव नहीं है कि चूंकि पुलिस अधिकारियों ने एक आकस्मिक तलाशी ली थी और उन्हें एक "सकारात्मक" संदेह था कि सुनील कुमार विनिषिद्ध पदार्थ लिए हुए है और उससे हुई चरस की बरामदगी एक संयोगवश बरामदगी नहीं थी । विनिषिद्ध पदार्थ की बरामदगी अप्रत्याशित न हो, किंतु चरस की बरामदगी इस दलील के होते हुए भी कि चम्बा क्षेत्र में ओषधियां आसानी से उपलब्ध हैं, निश्चित रूप से अप्रत्याशित थी । पुलिस अधिकारियों के पास यह विश्वास करने का कोई कारण नहीं था कि सुनील कुमार के पास कोई ओषधि है और वास्तव में ऐसा पक्षकथन इस अपील में भी नहीं किया गया है । स्पष्ट रूप से चरस की यह बरामदगी संयोगवश या आकस्मिक या अप्रत्याशित हुई थी और सुनील कुमार के पास कोई अन्य विनिषिद्ध पदार्थ जैसे तस्करी किया हुआ सोना, चुराई हुई

संपत्ति या कोई अवैध आयुध या यहां तक कोई अन्य ओषधि भी हो सकती थी । यह सही है कि सुनील कुमार ने संदेहास्पद रीति में व्यवहार किया था जिसके परिणामस्वरूप उसे बस से उतारकर उसकी शारीरिक तलाशी ली गई थी । तथापि, यह दर्शित करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है कि उसे बस से उतरने के लिए कहने से पूर्व पुलिस अधिकारियों को इस बात की जानकारी थी कि वह कोई स्वापक ओषधि लिए हुए है, भले ही चम्बा क्षेत्र ऐसा हो जहां ऐसी ओषधियां आसानी से उपलब्ध हैं । अधिक से अधिक यह कहा जा सकता है कि पुलिस अधिकारियों को सुनील कुमार के पास ओषधि होने का संदेह हुआ था और इससे अधिक कुछ नहीं । मात्र संदेह, चाहे यह 'सकारात्मक संदेह हो' या गंभीर संदेह, 'विश्वास करने का कारण' के समान नहीं माना जा सकता है । ये दोनों पूर्णतः अलग-अलग धारणाएं हैं । इस मामले में सकारात्मक संदेह ही था, न कि विश्वास करने का कारण, जिसके आधार पर सुनील कुमार के शरीर से चरस की संयोगवश बरामदगी हुई थी । इसी प्रकार, पुलिस अधिकारियों को हुए सकारात्मक संदेह को पूर्विक सूचना के समान नहीं माना जा सकता है । जब विनिषिद्ध ओषधियों के वहन के बारे में पूर्विक सूचना हो, तब अपनायी जाने वाली प्रक्रिया अधिनियम में अधिकथित की गई है और यह किसी पक्षकार का भी पक्षकथन नहीं है कि वह प्रक्रिया अपनायी गई हो या विचार तक किया गया हो । यह न्यायालय उच्च न्यायालय के इस मत से सहमत नहीं है कि चूंकि पुलिस अधिकारियों को सकारात्मक संदेह था कि सुनील कुमार कोई विनिषिद्ध पदार्थ लिए हुए है, इसलिए यह कहा जा सकता है या उपधारणा की जा सकती है कि उनके पास विश्वास करने का कारण था या यह पूर्विक सूचना थी कि वह चरस या कोई अन्य स्वापक पदार्थ लिए हुए है और इसलिए उसकी दैहिक या शारीरिक तलाशी लिए जाने से पूर्व अधिनियम की धारा 50 के उपबंधों का पालन किया जाना चाहिए था । सुनील कुमार की शरीरिक या वैयक्तिक तलाशी लेने पर हुई चरस की बरामदगी स्पष्ट रूप से एक संयोगवश हुई बरामदगी थी और पुलिस अधिकारियों के लिए अधिनियम की धारा 50 के उपबंधों का पालन करना आवश्यक नहीं था । (पैरा 15, 16, 20 और 21)

अवलंबित निर्णय

		पैरा
[2004]	(2004) 13 एस. सी. सी. 608 : **सौरबखान गंधखान पठान** बनाम **गुजरात राज्य** ;	14

[2002]	जे. टी. 2002 (8) एस. सी. 490 = (2002) 8 एस. सी. सी. 327 : **भरतभाई भगवानजीभाई** बनाम **गुजरात राज्य** ;	20
[1999]	(1999) 6 एस. सी. सी. 172 : **पंजाब राज्य** बनाम **बलदेव सिंह** ;	1, 6, 11, 21
[1994]	(1994) 3 एस. सी. सी. 299 = जे. टी. 1994 (2) एस. सी. 108 : **पंजाब राज्य** बनाम **बलबीर सिंह** ;	11
[1992]	जे. टी. 1992 (6) एस. सी. 94 = 1993 (सप्ली.) 2 एस. सी. सी. 497 : **प्रसाद** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	19
[1988]	(1988) 8 एस. सी. सी. 655 : **मोहिन्द्र कुमार** बनाम **राज्य, पणजी, गोआ** ;	14
[1972]	(1972) 3 एस. सी. सी. 234 : **शिव नाथ सिंह** बनाम **अपीली सहायक आयकर आयुक्त** ।	19

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2005 की दांडिक अपील सं. 1101.

2002 की दांडिक अपील सं. 37 में शिमला स्थित हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री सूर्यनारायण सिंह, अपर महाधिवक्ता और सुश्री प्रगति नीखरा

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री देबाशीष मिश्रा और आर. पी. व्यास (न्याय-मित्र)

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति मदन बी. लोकुर ने दिया ।

न्या. लोकुर – हमारे समक्ष प्रश्न यह है कि क्या किसी शारीरिक या दैहिक तलाशी के दौरान स्वापक ओषधि की आकस्मिक या संयोगवश बरामदगी होने से स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 (जिसे संक्षेप में "अधिनियम" कहा गया है) की धारा 50 के उपबंध लागू होंगे या नहीं । हमारी राय में, **पंजाब राज्य** बनाम **बलदेव सिंह**[1] वाले मामले में

[1] (1999) 6 एस. सी. सी. 172.

सांविधानिक न्यायपीठ द्वारा इस प्रश्न का उत्तर नकारात्मक देने के पश्चात् अब यह मुद्दा अनिर्णीत विषय नहीं है ।

तथ्य :

2. प्रत्यर्थी-सुनील कुमार तारीख 9 दिसम्बर, 2000 को हिमाचल प्रदेश में चम्बा से एक बस में यात्रा कर रहा था । बस को अपराह्न में लगभग 1.15 बजे धुंदियारा बंगला पर पुलिस चौकी बनीखेत के भारसाधक अधिकारी, सहायक उप-निरीक्षक जोगा सिंह (अभि. सा. 13) द्वारा 'यातायात जांच-पड़ताल' के लिए रुकवाया गया, जिसके साथ हैड कांस्टेबल प्रीतम सिंह (अभि. सा. 3), कांस्टेबल मज़ीद मोहम्मद (अभि. सा. 2) और कांस्टेबल देस राज (अभि. सा. 5) भी थे और वे सभी गुलाब सिंह (अभि. सा. 12), पुलिस उप-अधीक्षक, डलहौजी के पर्यवेक्षणाधीन कार्य कर रहे थे । जो हमें बताया गया, 'यातायात जांच-पड़ताल' का अर्थ बिना टिकट यात्रियों की जांच-पड़ताल आदि से है । हमें यह भी बताया गया कि चम्बा क्षेत्र में स्वापक ओषधियां आसानी से उपलब्ध हैं, किंतु बस को किसी स्वापक पदार्थ के वहन या परिवहन की जांच-पड़ताल के लिए नहीं रोका गया था ।

3. जो भी स्थिति हो, जांच-पड़ताल के दौरान कांस्टेबल मज़ीद मोहम्मद ने सीट सं. 20 पर बैठे यात्री (सुनील कुमार) को अपने कपड़ों के नीचे कुछ छिपाते हुए देखा । इसलिए सुनील कुमार को कहा कि वह बस से नीचे उतरे और फिर उसे अपनी पैंट खोलने के लिए कहा गया । जब उसने अपनी पैंट खोली, तो पुलिस अधिकारियों को उसके पेट के नीचे "परने" (कपड़े का एक टुकड़ा) से बंधा हुआ एक पोलीथिन का लिफाफा पाया । पोलीथिन के लिफाफे को खोला गया और उसमें चरस जैसी दिखने वाली वस्तु पाई गई ।

4. पुलिस अधिकारियों द्वारा बरामद की गई वस्तु को तोलने और अभिगृहीत करने तथा परीक्षण के प्रयोजन के लिए आवश्यक नमूने मुहरबंद करने की कार्यवाही की गई । हमारा इस प्रक्रिया की सत्यता से कोई सरोकार नहीं है, चूंकि इस बारे में कोई विवाद नहीं है । यह कहना पर्याप्त होगा कि बरामद की गई वस्तु चरस पाई गई थी जिसका वजन लगभग 2.300 कि. ग्रा. था ।

5. इन मुख्य तथ्यों के आधार पर सुनील कुमार को सबोध कब्जे में स्वापक पदार्थ रखने के लिए आरोपित किया गया और अधिनियम की धारा 20 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अभियोजित किया गया ।

विचारण न्यायालय का विनिश्चय :

6. सेशन न्यायाधीश, चम्बा मंडल, चम्बा, हिमाचल प्रदेश ने 2001 के सेशन मामला सं. 9 में वस्तुतः ही एक विस्तृत निर्णय दिया और यह निष्कर्ष निकाला कि सुनील कुमार के सबोध कब्जे में एक स्वापक पदार्थ था और उसकी बरामदगी एक संयोगवश बरामदगी थी । तद्नुसार, तलाशी और अभिग्रहण से संबंधित अधिनियम की धारा 42 के उपबंध लागू नहीं होते थे चूंकि पुलिस पदधारियों को सुनील कुमार के कब्जे में चरस होने के बारे में कोई पूर्विक जानकारी नहीं थी । विचारण न्यायाधीश ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए **बलदेव सिंह** (उपरोक्त) वाले मामले का अवलंब लिया ।

7. सेशन न्यायाधीश ने तारीख 28 नवम्बर, 2001 के अपने निर्णय और आदेश में सुनील कुमार को आरोपित अपराध का दोषी पाया और तत्पश्चात् तारीख 29 नवम्बर, 2001 के आदेश द्वारा उसे 10 वर्ष का कठोर कारावास भोगने और एक लाख रुपए के जुर्माने का संदाय करने और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर एक वर्ष का अतिरिक्त साधारण कारावास भोगने का दंडादेश दिया ।

उच्च न्यायालय का निर्णय :

8. सुनील कुमार ने व्यथित होकर हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय के समक्ष 2002 की दांडिक अपील सं. 37 फाइल की । उच्च न्यायालय ने तारीख 11 जून, 2004 के अपने निर्णय में यह अभिनिर्धारित किया कि चरस की बरामदगी एक संयोगवश हुई बरामदगी नहीं थी ।

9. यह अभिनिर्धारित किया गया कि हालांकि जो तलाशी ली गई थी वह एक आकस्मिक तलाशी थी, किंतु पुलिस अधिकारियों को यह एक सकारात्मक संदेह था कि सुनील कुमार के पास विनिषिद्ध पदार्थ हो सकता है । यही कारण है कि उसे बस से नीचे उतरने के लिए कहा गया और फिर शारीरिक तलाशी ली गई । उच्च न्यायालय के अनुसार, इस पर अधिनियम की धारा 50 के उपबंध लागू होते थे और सुनील कुमार को अधिनियम की धारा 50 के अनुपालन में किसी राजपत्रित अधिकारी या मजिस्ट्रेट के समक्ष तलाशी दिए जाने का विकल्प दिया जाना चाहिए था । चूंकि यह विकल्प नहीं दिया गया था, इसलिए सुनील कुमार पर अधिरोपित दोषसिद्धि और दंडादेश न्यायोचित नहीं है ।

10. तद्नुसार, उच्च न्यायालय द्वारा सुनील कुमार द्वारा फाइल की गई अपील मंजूर की गई ।

संयोगवश बरामदगी :

11. राज्य ने सुनील कुमार की दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील की है और मुख्य दलील यह दी है कि उससे की गई चरस की बरामदगी एक संयोगवश बरामदगी थी । इन परिस्थितियों में, **बलदेव सिंह** (उपरोक्त) वाले मामले में सांविधानिक न्यायपीठ के निर्णय, जिसमें **पंजाब राज्य** बनाम **बलबीर सिंह**[1] वाले मामले में अपनाए गए मत का समर्थन किया गया था, को दृष्टिगत करते हुए, सुनील कुमार की शारीरिक तलाशी लेने से, जिसके परिणामस्वरूप विनिषिद्ध पदार्थ की बरामदगी हुई थी, अधिनियम की धारा 50 का अतिक्रमण नहीं हुआ था । विद्वान् काउंसेल द्वारा **बलबीर सिंह** (उपरोक्त) वाले मामले के पैरा 25 का अवलंब लिया गया जिसका सांविधानिक न्यायपीठ द्वारा भी समर्थन किया गया था । यह दलील दी गई कि किसी पुलिस अधिकारी द्वारा किसी स्वापक ओषधि या मनःप्रभावी पदार्थ की संयोगवश या आकस्मिक रूप से बरामदगी करने के पश्चात् ही अधिनियम के उपबंध लागू होंगे । इसके पश्चात् सशक्त अधिकारी को सूचित किया जाना चाहिए और उसके पश्चात् सशक्त अधिकारी को अधिनियम के उपबंधों के अनुसार मामले का अन्वेषण करने की कार्यवाही करनी चाहिए ।

12. **बलबीर सिंह** (उपरोक्त) वाले मामले के पैरा 25 का सुसंगत सार निम्नलिखित है :–

> "(1) यदि कोई पुलिस अधिकारी स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम में यथा अनुध्यात पूर्विक सूचना के बिना किसी अपराध या संदिग्ध अपराधों के अन्वेषण के सामान्य अनुक्रम में दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों के अधीन यथा उपबंधित कोई तलाशी लेता है या किसी व्यक्ति को गिरफ्तार करता है और जब ऐसी तलाशी पूर्ण की जाती है, उस प्रक्रम पर स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 50 लागू नहीं होगी और तद्धीन अपेक्षाओं का पालन करने का प्रश्न ही उद्भूत नहीं होता । यदि ऐसी तलाशी या गिरफ्तारी के दौरान किसी स्वापक ओषधि या मनःप्रभावी पदार्थ की संयोगवश कोई बरामदगी होती है, तब पुलिस अधिकारी, जो सशक्त नहीं है, सशक्त अधिकारी को सूचित करे, जो उसके पश्चात् स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम के उपबंधों के अनुसार कार्यवाही करेगा । यदि तलाशी लेने वाला

---

[1] (1994) 3 एस. सी. सी. 299 = जे. टी. 1994 (2) एस. सी. 108.

अधिकारी सशक्त अधिकारी भी है, तब उस प्रक्रम से आगे उसे स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम के अन्य उपबंधों के अनुसार अन्वेषण करना चाहिए ।"

13. विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए मत को दृष्टिगत करते हुए, हमें पहले यह समझने की आवश्यकता है कि 'संयोगवश बरामदगी' क्या है । अगला प्रश्न यह होगा कि क्या अधिनियम की धारा 50 के उपबंध तब लागू होंगे जब कोई संयोगवश बरामदगी होती है ।

14. 'संयोगवश बरामदगी' अभिव्यक्ति को कहीं परिभाषित नहीं किया गया है और इसका साधारण अर्थ ऐसी बरामदगी होना प्रतीत होता है जो संयोग से या आकस्मिक या अप्रत्याशित रूप से हो जाए । **मोहिन्द्र कुमार** बनाम **राज्य, पणजी, गोआ**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने संयोगवश बरामदगी पर विचार किया था, यह बरामदगी ऐसी होती है जब किसी पुलिस अधिकारी को जब वह तलाशी लेता है तो उसे स्वापक पदार्थ "संयोग से मिल जाता है" । **सौरबखान गंधखान पठान** बनाम **गुजरात राज्य**[2] वाले मामले में पुलिस अधिकारी जब अवैध शराब के लिए तलाशी ले रहा था, तो संयोगवश रूप से उसे कुछ चरस पाई । इसे 'संयोगवश बरामदगी' माना गया ।

15. इस बात को वर्तमान अपील के तथ्यों पर लागू करते हुए, यह स्पष्ट है कि पुलिस अधिकारी उन यात्रियों की जांच-पड़ताल कर रहे थे जो बिना टिकट यात्रा कर रहे थे और इससे ज्यादा कुछ नहीं । उन्हें आकस्मिक या अप्रत्याशित रूप से एक यात्री द्वारा ले जा रही स्वापक ओषधि मिली । इसे केवल संयोग से हुई बरामदगी के रूप में वर्णित किया जा सकता है, चूंकि वे न तो स्वापक ओषधियों के लिए जांच-पड़ताल कर रहे थे और न ही उन्हें किसी व्यक्ति के पास स्वापक ओषधि पाने की प्रत्याशा थी ।

16. उच्च न्यायालय के इस मत को स्वीकार करना संभव नहीं है कि चूंकि पुलिस अधिकारियों ने एक आकस्मिक तलाशी ली थी और उन्हें एक "सकारात्मक" संदेह था कि सुनील कुमार विनिषिद्ध पदार्थ लिए हुए है और उससे हुई चरस की बरामदगी एक संयोगवश बरामदगी नहीं थी । विनिषिद्ध पदार्थ की बरामदगी अप्रत्याशित न हो, किंतु चरस की बरामदगी इस दलील

---

[1] (1988) 8 एस. सी. सी. 655.

[2] (2004) 13 एस. सी. सी. 608.

के होते हुए भी कि चम्बा क्षेत्र में ओषधियां आसानी से उपलब्ध हैं, निश्चित रूप से अप्रत्याशित थी । पुलिस अधिकारियों के पास यह विश्वास करने का कोई कारण नहीं था कि सुनील कुमार के पास कोई ओषधि है और वास्तव में ऐसा पक्षकथन इस अपील में भी नहीं किया गया है । स्पष्ट रूप से चरस की यह बरामदगी संयोगवश या आकस्मिक या अप्रत्याशित हुई थी और सुनील कुमार के पास कोई अन्य विनिषिद्ध पदार्थ जैसे तस्करी किया हुआ सोना, चुराई हुई संपत्ति या कोई अवैध आयुध या यहां तक कोई अन्य ओषधि भी हो सकती थी ।

17. हम इस मुद्दे पर नहीं जा रहे हैं कि क्या इन परिस्थितियों में सुनील कुमार की व्यक्तिगत या शारीरिक तलाशी (वारंट के बिना) विधि द्वारा अनुज्ञात थी या नहीं । यह ऐसा मुद्दा नहीं है जो विचारण न्यायालय या उच्च न्यायालय या हमारे समक्ष भी उठाया गया हो, हालांकि इस मुद्दे का उल्लेख सुनील की ओर से हमारी सहायता कर रहे विद्वान् काउंसेल द्वारा लिखित दलीलों में किया गया है ।

अधिनियम की धारा 50 का लागू होना :

18. जहां तक किसी संयोगवश बरामदगी में अधिनियम की धारा 50 के लागू होने का संबंध है, **बलदेव सिंह** (उपरोक्त) वाले मामले में सांविधानिक न्यायपीठ के विनिश्चय को देखते हुए यह मुद्दा अब अनिर्णीत विषय नहीं है ।

19. यह सही है कि सुनील कुमार ने संदेहास्पद रीति में व्यवहार किया था जिसके परिणामस्वरूप उसे बस से उतारकर उसकी शारीरिक तलाशी ली गई थी । तथापि, यह दर्शित करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है कि उसे बस से उतरने के लिए कहने से पूर्व पुलिस अधिकारियों को इस बात की जानकारी थी कि वह कोई स्वापक ओषधि लिए हुए है, भले ही चम्बा क्षेत्र ऐसा हो जहां ऐसी ओषधियां आसानी से उपलब्ध हैं । अधिक से अधिक यह कहा जा सकता है कि पुलिस अधिकारियों को सुनील कुमार के पास ओषधि होने का संदेह हुआ था और इससे अधिक कुछ नहीं । मात्र संदेह, चाहे यह 'सकारात्मक संदेह हो' या गंभीर संदेह, 'विश्वास करने का कारण' के समान नहीं माना जा सकता है । (**प्रसाद** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] और **शिव नाथ सिंह** बनाम **अपीली सहायक आयकर आयुक्त**[2] वाले मामले

---

[1] जे. टी. 1992 (6) एस. सी. 94 = (1993) सप्ली 2 एस. सी. सी. 497.

[2] (1972) 3 एस. सी. सी. 234.

देखें) । ये दोनों पूर्णतः अलग-अलग धारणाएं हैं । इस मामले में सकारात्मक संदेह ही था, न कि विश्वास करने का कारण, जिसके आधार पर सुनील कुमार के शरीर से चरस की संयोगवश बरामदगी हुई थी ।

20. इसी प्रकार, पुलिस अधिकारियों को हुए सकारात्मक संदेह को पूर्विक सूचना के समान नहीं माना जा सकता है । (**भरतभाई भगवानजीभाई** बनाम **गुजरात राज्य**[1] वाला मामला देखें) । जब विनिषिद्ध ओषधियों के वहन के बारे में पूर्विक सूचना हो, तब अपनायी जाने वाली प्रक्रिया अधिनियम में अधिकथित की गई है और यह किसी पक्षकार का भी पक्षकथन नहीं है कि वह प्रक्रिया अपनायी गई हो या विचार तक किया गया हो ।

21. हम उच्च न्यायालय के इस मत से सहमत नहीं हैं कि चूंकि पुलिस अधिकारियों को सकारात्मक संदेह था कि सुनील कुमार कोई विनिषिद्ध पदार्थ लिए हुए है, इसलिए यह कहा जा सकता है या उपधारणा की जा सकती है कि उनके पास विश्वास करने का कारण था या यह पूर्विक सूचना थी कि वह चरस या कोई अन्य स्वापक पदार्थ लिए हुए है और इसलिए उसकी दैहिक या शारीरिक तलाशी लिए जाने से पूर्व अधिनियम की धारा 50 के उपबंधों का पालन किया जाना चाहिए था । सुनील कुमार की शारीरिक या वैयक्तिक तलाशी लेने पर हुई चरस की बरामदगी स्पष्ट रूप से एक संयोगवश हुई बरामदगी थी और **बलदेव सिंह** (उपरोक्त) वाले मामले को दृष्टिगत करते हुए पुलिस अधिकारियों के लिए अधिनियम की धारा 50 के उपबंधों का पालन करना आवश्यक नहीं था ।

निष्कर्ष :

22. इन परिस्थितियों में, हम उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए निर्णय और आदेश को अपास्त करते हैं और सुनील कुमार को अधिनियम की धारा 20 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध करने के विचारण न्यायालय के विनिश्चय को कायम रखते हैं । सुनील कुमार को अपना शेष दंडादेश भुगतने के लिए गिरफ्तार करने हेतु आवश्यक कार्यवाही की जाए ।

23. अपील मंजूर की जाती है ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

---

[1] जे. टी. 2002 (8) एस. सी. 490 = (2002) 8 एस. सी. सी. 327.

हर्षद गोवर्धन सोंदागर

बनाम

इंटरनेशनल एसेट्स रिकंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड और अन्य

3 अप्रैल, 2014

न्यायमूर्ति ए. के. पटनायक और न्यायमूर्ति वी. गोपाल गौड़ा

वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 (2002 का 54) – धारा 13 [सपठित संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 7, 8 और 65-क] – प्रतिभूति हित का प्रवर्तन – उधार लेने वाले द्वारा स्थावर संपत्ति को बंधक करके ऋण लिया जाना – बंधककर्ता द्वारा उधार का संदाय करने में असफल रहने पर प्रतिभूत लेनदार द्वारा प्रतिभूत आस्ति का प्रवर्तन करने की सूचना दिया जाना – उधार लेने वाले द्वारा सूचना की प्राप्ति से पूर्व प्रतिभूत आस्ति को पट्टे पर दिया जाना – पट्टेदार का अधिकार – जहां प्रतिभूत आस्ति का विधिपूर्ण कब्जा उधार लेने वाले के पास न होकर विधिमान्य पट्टे के अधीन किसी पट्टेदार के पास है, वहां प्रतिभूत लेनदार प्रतिभूत आस्ति का तब तक कब्जा नहीं ले सकता जब तक पट्टेदार के विधिपूर्ण कब्जे का पर्यवसान नहीं हो जाता है ।

वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 (2002 का 54) – धारा 13(2), 13(13) और 35 [सपठित संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 65-क] – बंधककर्ता का बंधक संपत्ति को संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क के अधीन पट्टे पर देने का अधिकार – प्रतिभूत लेनदार द्वारा प्रतिभूत आस्ति के प्रवर्तन करने के आशय की सूचना दिए जाने के पश्चात् उधार लेने वाले द्वारा प्रतिभूत लेनदार की पूर्व लिखित सहमति के बिना प्रतिभूत आस्ति का किया गया पट्टा एक विधिमान्य पट्टा नहीं होगा ।

वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 (2002 का 54) – धारा 14, 13(2) और 13(4) [सपठित संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 65-क] – मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा प्रतिभूत लेनदार की प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने में सहायता करना – प्रतिभूत आस्ति

विधिमान्य पट्टे के अधीन पट्टेदार के विधिपूर्ण कब्जे में होना – धारा 13 में ऐसा कोई उपबंध न होने के कारण कि प्रतिभूत लेनदार द्वारा प्रतिभूत आस्ति का प्रवर्तन करने के लिए उपाय करने के पश्चात् पट्टे का पर्यवसान हो जाएगा, मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट को ऐसे पट्टेदार से प्रतिभूत आस्ति का कब्जे लेने और प्रतिभूत लेनदार को सौंपने का कोई अधिकार नहीं है, तथापि, यदि संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 111 के अधीन पट्टे का पर्यवसान हो गया है, तो उक्त मजिस्ट्रेट प्रतिभूत आस्ति का कब्जा प्रतिभूत लेनदार के पक्ष में परिदत्त करने का आदेश पारित कर सकेगा ।

वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 (2002 का 54) – धारा 14 [सपठित संविधान, 1950 का अनुच्छेद 226 और 227] – मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा प्रतिभूत लेनदार की प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने में सहायता करना – मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा किए गए किसी कार्य को किसी न्यायालय या किसी प्राधिकारी के समक्ष प्रश्नगत नहीं किया जाना – किसी प्राधिकारी के विनिश्चय को अंतिमता प्रदान करने वाले ऐसे कानूनी उपबंध, जिनमें किसी अन्य प्राधिकारी या न्यायालय को ऐसे विनिश्चय की परीक्षा करने की शक्ति से अपवर्जित किया गया हो, उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय के लिए संविधान द्वारा निहित अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए वर्जन नहीं होंगे और व्यथित पक्षकार द्वारा चुनौती दिए जाने पर ऐसे विनिश्चय की परीक्षा कर सकते हैं ।

वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 (2002 का 54) – धारा 17 और 13(4) [सपठित प्रतिभूति हित (प्रवर्तन) नियम, 2002 का नियम 8] – प्रतिभूत लेनदार द्वारा प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने के लिए उपाय किया जाना – उधार लेने वाले सहित किसी अन्य व्यक्ति को ऋण वसूली अधिकरण के समक्ष अपील करने का अधिकार – धारा 17 में प्रयुक्त शब्दों 'कोई व्यक्ति' के अंतर्गत पट्टेदार भी आता है और वह प्रतिभूत लेनदार की कार्रवाई से व्यथित होकर ऋण वसूली अधिकरण के समक्ष आवेदन कर सकता है, किंतु प्रतिभूत लेनदार द्वारा किए गए उपायों को अधिनियम के उपबंधों के अनुसार नहीं पाए जाने पर अधिकरण उक्त धारा में उपबंधित अनुसार कब्जे का प्रत्यावर्तन केवल उधार लेने वाले को ही कर सकता है, इसलिए धारा 17 में विधिमान्य पट्टेदार को भी अपने विधिपूर्ण कब्जे के

संरक्षण के लिए कोई उपचार उपलब्ध नहीं है ।

अपीलार्थियों ने मुम्बई स्थित विभिन्न परिसरों के अभिधारी होने का दावा किया है । ये परिसर विभिन्न बैंकों को उनके द्वारा दिए गए उधारों के लिए प्रतिभूति के रूप में बंधक किए गए हैं । क्योंकि उधार लेने वालों ने अपने प्रतिभूत उधारों या उनकी किस्तों के प्रतिसंदाय में व्यतिक्रम किया और इन उधारों की बाबत उनके लेखों को प्रतिभूत लेनदारों द्वारा गैर-निष्पादनीय आस्तियों के रूप में वर्गीकृत किया गया और प्रतिभूत लेनदारों ने अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (2) के अधीन उधार लेने वालों को यह सूचित करते हुए सूचनाएं जारी कीं कि प्रतिभूत उधारों के असंदाय की दशा में उनका आशय प्रतिभूत आस्तियों को प्रवर्तित करने का है । क्योंकि उधार लेने वाले सूचना की तारीख से साठ दिन के भीतर अपने दायित्व का पूर्णतया निर्वहन करने में असफल रहे, इसलिए प्रतिभूत लेनदारों ने उधार लेने वालों की प्रतिभूत आस्तियों को कब्जे में लेने के लिए अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (4) के अधीन अपने अधिकार का प्रयोग किया । तथापि, प्रतिभूत आस्तियां अपीलार्थियों के कब्जा अधीन परिसरों में होने के कारण प्रतिभूत लेनदारों ने अधिनियम की धारा 14(1) के अधीन मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट, मुम्बई को परिसरों का कब्जा लेने और प्रतिभूत लेनदारों को परिसरों का कब्जा सौंपे जाने का अनुरोध किया । मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट द्वारा उन्हें उनके कब्जा अधीन परिसरों से बेकब्जा करने की धमकी देने पर अपीलार्थियों (अभिधारियों) ने इस न्यायालय में समावेदन किया । उनका पक्षकथन यह है कि वे उधार लेने वाले नहीं हैं, अपितु वे उधार लेने वालों के पट्टेदार हैं और प्रतिभूत आस्तियों पर काबिज बने रहने के हकदार हैं । तथापि, मुम्बई उच्च न्यायालय की एक खंड न्यायपीठ ने मैसर्स ट्रेड वैल वाले एक मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि जब कोई प्रतिभूत लेनदार उधार लेने वाले द्वारा अपने दायित्व का प्रतिसंदाय करने में असफल रहने के कारण अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (4) के अधीन उपाय करता है और प्रतिभूत आस्तियों का कब्जा लेने के लिए मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट की सहायता के लिए समावेदन करता है, तो उधार लेने वाले का दायित्व सुस्पष्ट हो जाने के कारण मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट द्वारा कोई न्यायनिर्णयन नहीं किया जा सकता और कब्जा एक अन्यायनिर्णयन प्रक्रिया द्वारा लिया जाना चाहिए और इस प्रक्रम पर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को यह बताने का प्रश्न ही नहीं है कि जिस व्यक्ति को बेकब्जा किया जाना है, वह एक अभिधारी है । उपरोक्त मामले में मुम्बई

उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि उधार लेने वाले तथा तृतीय पक्षकार के पास यह उपचार है कि वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 17 के अधीन ऋण वसूली अधिकरण के समक्ष आवेदन फाइल करे और यदि उधार लेने वाला या तृतीय पक्षकार सफल रहता है, तो ऋण वसूली अधिकरण उधार लेने वाले या तृतीय पक्षकार को प्रतिभूत आस्तियों का कब्जा प्रत्यावर्तित कर सकता है । उक्त मामले में मुम्बई उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए इस दृष्टिकोण का अनुसरण आक्षेपित निर्णय में किया गया है । अपीलार्थियों की शिकायत यह है कि यदि उच्च न्यायालय का निर्णय कार्यान्वित किया जाता है, तो अपीलार्थियों के पास मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट, मुम्बई को कब्जा अभ्यर्पित करने और वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 17 के अधीन ऋण वसूली अधिकरण में समावेदन करने के सिवाय कोई विकल्प नहीं है । अपीलार्थियों के अनुसार, वास्तव में अधिनियम की धारा 17 के अधीन ऐसा कोई उपचार उपलब्ध ही नहीं है और यदि उपचार उपलब्ध है, तो भी यह निरर्थक है क्योंकि उन्हें अभिधृत परिसरों को छोड़कर जाना होगा और यदि ऋण वसूली अधिकरण अपीलार्थियों के पक्ष में विनिश्चय करता है तो केवल उस स्थिति में ही वे अभिधृत परिसरों में वापस आ सकते हैं । इसलिए उन्होंने आक्षेपित निर्णय से व्यथित होकर संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन विशेष इजाजत लेकर उच्चतम न्यायालय में अपीलें फाइल कीं । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलों को मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 की धारा 13 के विभिन्न उपबंधों को पढ़ने पर न्यायालय यह पाता है कि धारा 13 की उपधारा (4) में यह उपबंधित है कि यदि उधार लेने वाला अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (2) में उपबंधित सूचना की प्राप्ति से साठ दिन के भीतर अपने दायित्व का पूर्णतः निर्वहन करने में असफल रहता है, तो प्रतिभूत लेनदार अपने प्रतिभूत ऋण की वसूली के लिए इसमें उल्लिखित एक या अधिक उपाय कर सकेगा । अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (4) के खंड (क) में उल्लिखित उपायों में से एक उपाय उधार लेने वाले की आस्तियों का कब्जा लेना है, जिसके अंतर्गत पट्टे द्वारा अंतरण का अधिकार भी है । तथापि, जहां प्रतिभूत आस्ति का विधिपूर्ण कब्जा उधार लेने वाले के पास नहीं है, अपितु एक विधिमान्य पट्टे के अधीन पट्टेदार के पास है, तो

प्रतिभूत लेनदार प्रतिभूत आस्ति का कब्जा तब तक ग्रहण नहीं कर सकता जब तक कि पट्टेदार के विधिपूर्ण कब्जे का पर्यवसान नहीं हो जाता । तथापि, अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (4) में ऐसा कोई उल्लेख नहीं है कि उधार लेने वाले द्वारा पट्टेदार के पक्ष में किए गए पट्टे का पर्यवसान उक्त अधिनियम की धारा 13 में उल्लिखित उपायों में से कोई उपाय करने का विनिश्चय कर लेने पर हो जाएगा । तथापि, उक्त अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (13) में यह उपबंधित है कि कोई उधार लेने वाला अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (2) में निर्दिष्ट सूचना की प्राप्ति के पश्चात्, प्रतिभूत लेनदार की पूर्व लिखित सहमति के बिना सूचना में निर्दिष्ट अपनी किन्हीं प्रतिभूत आस्तियों को पट्टे पर नहीं देगा । वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (13) में का यह उपबंध और उधार लेने वाले या बंधककर्ता को पट्टा करने के लिए समर्थ बनाने वाले संपत्ति अंतरण अधिनियम के उपबंध परस्पर असंगत हैं । इसलिए वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (13) उक्त अधिनियम की धारा 35 के फलस्वरूप संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क के उपबंधों पर अध्यारोही होगी, और उधार लेने वाले द्वारा प्रतिभूत आस्ति का प्रतिभूत लेनदार से धारा 13 की उपधारा (2) के अधीन उस प्रतिभूत आस्ति के प्रवर्तन के लिए आशयित सूचना की प्राप्ति के पश्चात् दिया गया पट्टा एक विधिमान्य पट्टा नहीं होगा । संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 105 में यह उपबंधित है कि जब कोई पट्टाकर्ता स्थावर संपत्ति को उस संपत्ति का उपभोग करने के अपने अधिकार का अंतरण करके, निश्चित समय के लिए या शाश्वत काल के लिए, पट्टे पर दे देता है तो स्थावर संपत्ति के पट्टेदार को ऐसी संपत्ति का उपभोग, निश्चित समय के लिए या शाश्वत काल के लिए, करने का अधिकार है । संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 111 में वे विभिन्न प्रकार उपबंधित हैं जिनके द्वारा पट्टे का पर्यवसान हो जाता है । इस प्रकार, जब तक किसी स्थावर संपत्ति के पट्टे का पर्यवसान नहीं हो जाता है, तब तक पट्टेदार को उस संपत्ति के उपभोग का अधिकार है तथा यह अधिकार संपत्ति का अधिकार है और इस अधिकार को संविधान के अनुच्छेद 300-क में यथा उपबंधित विधि के प्राधिकार के बिना छीना नहीं जा सकता है । जैसाकि न्यायालय ने पाया है, वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 में ऐसा कोई उपबंध नहीं है कि जब

प्रतिभूत लेनदार उक्त अधिनियम की धारा 13 में उल्लिखित उपाय करने का विनिश्चय करता है, तो प्रतिभूत आस्ति के पट्टे का पर्यवसान हो जाएगा । किसी विधिमान्य पट्टे का पर्यवसान हुए बिना, पट्टेदार का कब्जा विधिपूर्ण है और पट्टेदार के ऐसे विधिपूर्ण कब्जे को सभी न्यायालयों और अधिकरणों द्वारा संरक्षित किया जाना चाहिए । (पैरा 15 और 16)

वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 की धारा 14 की उपधारा (1) के आरंभिक शब्दों से यह स्पष्ट होता है कि जहां किसी प्रतिभूत आस्ति का कब्जा प्रतिभूत लेनदार द्वारा लिया जाना अपेक्षित है या किसी प्रतिभूत आस्ति का प्रतिभूत लेनदार द्वारा "इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन" विक्रय या अंतरित किया जाना अपेक्षित है, वहां प्रतिभूत लेनदार, ऐसी किसी प्रतिभूत आस्ति का कब्जा या नियंत्रण लेने के प्रयोजनार्थ, मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट, जिसकी अधिकारिता के भीतर ऐसी कोई प्रतिभूत आस्ति या उससे संबंधित अन्य दस्तावेज स्थित हैं या पाए जाते हैं, उनका कब्जा लेने के लिए, लिखित में, आवेदन कर सकेगा । इस प्रकार, केवल जब प्रतिभूत आस्ति का कब्जा वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम के उपबंधों के अधीन लिया जाना है, तभी प्रतिभूत लेनदार प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने में सहायता करने के लिए मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट को समावेदन कर सकता है । न्यायालय ने पहले ही यह अभिनिर्धारित किया है कि वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 में यह उपबंधित नहीं है कि जब प्रतिभूत लेनदार उक्त धारा में उपबंधित उपाय करने का विनिश्चय करता है, तो प्रतिभूत आस्ति की बाबत पट्टे का पर्यवसान हो जाएगा । अतः, किसी पट्टेदार से किसी विधिमान्य पट्टा अधीन विधिपूर्ण कब्जे की प्रतिभूत आस्ति का कब्जा वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम के उपबंधों के अधीन लिया जाना अपेक्षित नहीं है और इसलिए मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट को वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 के अधीन किसी ऐसे पट्टेदार से प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने और उस कब्जे को प्रतिभूत लेनदार को सौंपने की कोई शक्ति नहीं है । इसलिए जब कोई प्रतिभूत लेनदार प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने में सहायता करने के लिए मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट को समावेदन करता है, तब उसे आवेदन के साथ संलग्न

शपथपत्र में अवश्य यह बताना चाहिए कि प्रतिभूत आस्ति उधार लेने वाले द्वारा बंधक के सृजन से पूर्व किए गए या वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (1) के अधीन उधार लेने वाले द्वारा सूचना की प्राप्ति से पूर्व संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क के अनुसार किए गए विधिमान्य पट्टे के अधीन किसी पट्टेदार के कब्जे में नहीं है । न्यायालय यह स्पष्ट करना चाहेगा कि ऐसे मामलों में, जहां प्रतिभूत लेनदार प्रतिभूत ऋण की वसूली करने के लिए उधार लेने वाले को प्रतिभूत आस्ति का प्रवर्तन करने के प्रतिभूत लेनदार के आशय की सूचना की तारीख से साठ दिन की अवधि के अवसान के पश्चात् भी प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने में असमर्थ रहता है, वहां प्रतिभूत लेनदार को उधार लेने वाले के पट्टेदार से कोई शोध्य धन या जो शोध्य हो सकता है जिसके अंतर्गत भाटक भी है, प्राप्त करने का अधिकार होगा । यह बात धारा 13 की उपधारा (4) के खंड (घ) से स्पष्ट हो जाती है, जिसमें यह उपबंधित है कि यदि उधार लेने वाला सूचना की अवधि के भीतर अपने दायित्व का पूर्णतः निर्वहन करने में असफल रहता है, तो प्रतिभूत लेनदार ऐसे किसी व्यक्ति से, जिसने उधार लेने वाले से किन्हीं प्रतिभूत आस्तियों का अर्जन किया है और जिससे कोई धन शोध्य है या उधार लेने वाले को शोध्य हो सकता है, लिखित में सूचना द्वारा किसी भी समय उतने धन का प्रतिभूत लेनदार को संदाय किए जाने की अपेक्षा कर सकता है, जो प्रतिभूत ऋण के संदाय के लिए पर्याप्त हो । वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 की उपधारा (1) के आरंभिक शब्दों में भी यह उपबंधित है कि यदि प्रतिभूत लेनदार द्वारा किसी प्रतिभूत आस्ति का इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन विक्रय या अंतरित किया जाना अपेक्षित है, तो प्रतिभूत लेनदार मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट की सहायता ले सकेगा । इसलिए, जहां प्रतिभूत लेनदार द्वारा ऐसा निवेदन किया जाता है और मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट यह पाता है कि प्रतिभूत आस्ति पट्टेदार के कब्जे में है किंतु पट्टा, जिसके अधीन पट्टेदार प्रतिभूत आस्ति पर काबिज होने का दावा करता है, का पर्यवसान संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 111 के अनुसार हो जाता है, वहां मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट प्रतिभूत आस्ति का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम के उपबंधों के अधीन विक्रय या अंतरण करने में प्रतिभूत लेनदार को समर्थ बनाने के लिए उस प्रतिभूत आस्ति के कब्जे का परिदान प्रतिभूत लेनदार के पक्ष में करने

का आदेश पारित कर सकेगा । वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (6) में यह उपबंधित है कि प्रतिभूत लेनदार द्वारा प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने के पश्चात् प्रतिभूत आस्ति का कोई अंतरण अंतरित प्रतिभूत आस्ति में या उसके संबंध में सभी अधिकार अंतरिती में ऐसे निहित कर देगा, मानो वह अंतरण उसे प्रतिभूत आस्ति के स्वामी द्वारा किया गया था । दूसरे शब्दों में, प्रतिभूत आस्ति के अंतरिती को उक्त अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (6) के अधीन कोई अधिकार तब तक अर्जित नहीं होगा, जब तक कि प्रतिभूत लेनदार द्वारा प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने के पश्चात् वह प्रभावशील न हो गया हो । इस प्रकार, प्रतिभूत आस्ति के अंतरण और प्रतिभूत ऋण की वसूली के प्रयोजन के लिए प्रतिभूत लेनदार को वहां प्रतिभूत आस्ति का पट्टेदार से कब्जा लेने के लिए मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट की सहायता की आवश्यकता होगी, जहां पट्टे का पर्यवसान संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 111 में उल्लिखित प्रकारों में से किसी प्रकार हो जाता है । (पैरा 18 और 19)

प्रतिभूति हित (प्रवर्तन) नियम, 2002 के नियम 8 के उप-नियम (1) और (2) के वाचन से यह दर्शित होता है कि प्राधिकृत अधिकारी द्वारा कब्जे की सूचना संपत्ति के बाह्य दरवाजे या सहजदृश्य स्थान पर चिपकाई जाएगी और यथासंभव शीघ्र किंतु किसी भी दशा में कब्जा लेने की तारीख से सात दिन के अपश्चात् तक उस स्थान में पर्याप्त परिचालन वाले दो प्रमुख समाचारपत्रों में भी, जिनमें से एक जन-भाषा में हो, प्रकाशित कराई जाएगी । इस प्रक्रम पर, स्थावर संपत्ति के पट्टेदार को उधार लेने वाले की प्रतिभूत आस्तियों का कब्जा लेने के प्रतिभूत लेनदार के प्रयत्नों की सूचना प्राप्त हो जाएगी । अतः, जब पट्टेदार को प्रतिभूत लेनदार द्वारा उस प्रतिभूत आस्ति, जिसका वह पट्टेदार है, का कब्जा लिए जाने की जानकारी उस कब्जे की सूचना से हो जाती है, जो प्रतिभूति हित (प्रवर्तन) नियम, 2002 के नियम 8 के उप-नियम (1) और (2) के अनुसार दी जाती है, चिपकाई जाती है या प्रकाशित की जाती है, तब वह या तो कब्जे का अभ्यर्पण कर सकता है या प्रतिभूत लेनदार के कब्जा लेने के प्रयत्न का प्राधिकृत अधिकारी के समक्ष यह सबूत प्रस्तुत करके विरोध कर सकता है कि उसने बंधक के सृजन से पूर्व पट्टेदार के रूप में प्रवेश किया था या वह संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क के उपबंधों के अनुसार बंधककर्ता के अधीन पट्टेदार है और संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 111 के अनुसार पट्टे का पर्यवसान नहीं हुआ है । यदि पट्टेदार कब्जा

अभ्यर्पित कर देता है, तो पट्टे का, भले ही विधिमान्य हो, संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 111 के खंड (च) के अनुसार पर्यवसान हो जाता है, किंतु यदि वह प्रतिभूत लेनदार के कब्जा लेने के प्रयत्न का विरोध करता है, तो प्राधिकृत अधिकारी बलपूर्वक पट्टेदार को बेदखल नहीं कर सकता अपितु उसे वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 के अधीन मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट को आवेदन करना होगा और आवेदन से संलग्न शपथपत्र में पट्टेदार होने का दावा करने वाले व्यक्ति का नाम और पता बताना होगा । जब ऐसा आवेदन फाइल किया जाता है, तो मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट को एक सूचना देनी होगी और पट्टेदार होने का दावा करने वाले व्यक्ति तथा प्रतिभूत लेनदार को नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अनुरूप सुनवाई का अवसर देना होगा और इसके पश्चात् कोई विनिश्चय करेगा । यदि मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट का यह समाधान हो जाता है कि यह बंधक से पूर्व सृजित एक विधिमान्य पट्टा है या संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क की अपेक्षाओं के अनुसार बंधक के पश्चात् सृजित एक विधिमान्य पट्टा है और संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 111 के अनुसार पट्टे का पर्यवसान नहीं हुआ है, तो वह प्रतिभूत लेनदार को प्रतिभूत आस्ति का कब्जा परिदत्त करने का आदेश पारित नहीं कर सकता है । किंतु यदि वह इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि वास्तव में कोई ऐसा विधिमान्य पट्टा नहीं है जो या तो बंधक के सृजन से पूर्व किया गया हो या संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क की अपेक्षाओं का समाधान करते हुए बंधक के सृजन के पश्चात् किया गया हो या भले ही विधिमान्य पट्टा हो, किंतु संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 111 के अनुसार पट्टे का पर्यवसान हो गया हो, तो वह प्रतिभूत लेनदार को प्रतिभूत आस्ति का कब्जा परिदत्त करने का आदेश पारित कर सकता है । (पैरा 20 और 21)

वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 की उपधारा (3) में यह उपबंधित है कि धारा 14 के अनुसरण में मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा किया गया कोई कार्य किसी न्यायालय या किसी प्राधिकारी के समक्ष प्रश्नगत नहीं किया जाएगा । इसलिए वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम में मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट के विनिश्चय को अंतिमता प्रदान की गई है और इस विनिश्चय को किसी न्यायालय या किसी प्राधिकारी के समक्ष

चुनौती नहीं दी जा सकती । किंतु इस न्यायालय ने अनेक बार यह अभिनिर्धारित किया है कि किसी प्राधिकारी के विनिश्चय को अंतिमता प्रदान करने वाले ऐसे कानूनी उपबंध, जिनमें किसी अन्य प्राधिकारी या न्यायालय को ऐसे विनिश्चय की परीक्षा करने की शक्ति से अपवर्जित किया गया हो, उच्च न्यायालय या इस न्यायालय के लिए संविधान द्वारा निहित अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए वर्जन नहीं होंगे क्योंकि कोई कानूनी उपबंध संविधान द्वारा निहित किसी शक्ति को छीन नहीं सकता है । इसलिए, न्यायालय के मत में, किसी व्यथित पक्षकार द्वारा मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट के विनिश्चय को संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के अधीन उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी जा सकती है और यदि ऐसी कोई चुनौती दी जाती है तो उच्च न्यायालय, यथास्थिति, मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट के विनिश्चय की विधि के स्थिर सिद्धांतों के अनुसार परीक्षा कर सकता है । (पैरा 22)

वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 17 की उपधारा (1) को पढ़ने पर न्यायालय इस उपधारा के अधीन यह पाता है कि इस अध्याय के अधीन प्रतिभूत लेनदार या उसके प्राधिकृत अधिकारी द्वारा धारा 13 की उपधारा (4) में निर्दिष्ट कोई उपाय करने से "व्यथित कोई व्यक्ति (जिसमें उधार लेने वाला भी सम्मिलित है)" उस तारीख से जिसको ऐसा उपाय किया गया था, पैंतालीस दिन के भीतर इस विषय में अधिकारिता रखने वाले ऋण वसूली प्राधिकरण को आवेदन कर सकेगा । न्यायालय श्री विकास सिंह की इस दलील से सहमत हैं कि "कोई व्यक्ति" शब्द पर्याप्त व्यापक हैं जिसमें पट्टेदार भी सम्मिलित है । यह दृष्टिकोण अपनाना भी संभव है कि पट्टेदार, यदि उसे प्रतिभूत आस्ति से बेकब्जा किया जाता है, कब्जे के प्रत्यावर्तन के लिए इस विषय में अधिकारिता रखने वाले ऋण वसूली अधिकरण के समक्ष प्रतिभूति हित (प्रवर्तन) नियम, 2002 के नियम 8 के उप-नियम (1) और (2) के अधीन उस तारीख से पैंतालीस दिन के भीतर जिस तारीख को कब्जे की सूचना दी जाती है या चिपकाई जाती है या प्रकाशित की जाती है, आवेदन फाइल कर सकता है । किंतु जब न्यायालय वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 17 की उपधारा (3) को पढ़ता है, तो यह पाता है कि ऋण वसूली अधिकरण को केवल उधार लेने वाले को प्रतिभूत आस्ति का कब्जा प्रत्यावर्तित करने की शक्ति है और पट्टेदार जैसे किसी अन्य व्यक्ति को नहीं । इसलिए, भले ही ऋण वसूली अधिकरण इस

निष्कर्ष पर पहुंचता है कि प्रतिभूत लेनदार द्वारा किए गए धारा 13 की उपधारा (4) में निर्दिष्ट कोई उपाय अधिनियम के उपबंधों के अनुसार नहीं हैं, तो भी अधिकरण पट्टेदार को प्रतिभूत आस्ति का कब्जा प्रत्यावर्तित नहीं कर सकता है । अतः, जहां ऋण वसूली अधिकरण पट्टेदार के आवेदन पर विचार करता है और इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि पट्टेदार के पक्ष में पट्टा बंधक के सृजन से पूर्व किया गया था या हालांकि पट्टा बंधक के सृजन के पश्चात् किया गया था, किंतु संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क की अपेक्षाओं के अनुसार है और पट्टा विधिमान्य है तथा बंधककर्ता पर आबद्धकारी है और पट्टे का अभी पर्यवसान होना है, ऋण वसूली अधिकरण को प्रतिभूत आस्ति का कब्जा पट्टेदार को प्रत्यावर्तित करने की शक्ति नहीं होगी । इसलिए न्यायालय की सुविचारित राय में, पट्टेदार को एक विधिमान्य पट्टे के अधीन अपने विधिपूर्ण कब्जे के संरक्षण के लिए वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 17 के अधीन कोई उपचार उपलब्ध नहीं है । (पैरा 24)

इन अपीलों में उठाया गया विधि का एक अगला प्रश्न यह है कि क्या अभिधारियों को संबंधित अभिधृति विधि में उपचार प्राप्त हैं । महाराष्ट्र राज्य में, महाराष्ट्र किराया नियंत्रण अधिनियम, 1999 प्रवृत्त है और यह अधिनियम अनुसूची 1 और अनुसूची 2 में विनिर्दिष्ट निवास, शिक्षा, कारबार, व्यापार या भंडारण के प्रयोजनों के लिए किराए पर दिए जाने वाले परिसरों तथा ऐसे क्षेत्रों में किराए पर दिए गए मकानों पर लागू होता है जिन पर बाम्बे रेंट्स, होटल एंड लोजिंग हाउस रेंट्स कंट्रोल ऐक्ट, 1947 इस अधिनियम के आरंभ से पूर्व लागू था । महाराष्ट्र किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 33 का शीर्षक "न्यायालयों की अधिकारिता" है और इसमें यह उपबंधित है कि इसमें नामित न्यायालयों को किराए की वसूली या किन्हीं परिसरों के कब्जे से संबंधित भू-स्वामी और अभिधारी के बीच किसी वाद या कार्यवाही को ग्रहण करने और विचारण करने तथा अधिनियम के अधीन किए गए किसी आवेदन और ऐसे आवेदनों, जो राज्य सरकार या इसके द्वारा प्राधिकृत अधिकारी या सक्षम प्राधिकारी द्वारा विनिश्चित किए जाने हैं, का विनिश्चय करने की अधिकारिता होगी । विधि के जिस प्रश्न पर हमें विचार करना है, यह है कि क्या अपीलार्थियों को मुम्बई सहित महाराष्ट्र राज्य में स्थित परिसरों के अभिधारियों के रूप में महाराष्ट्र किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 33 के अधीन अधिकारिता रखने वाले इन न्यायालयों में समावेदन करने और अपीलार्थियों से प्रतिभूत

आस्ति का कब्जा लेने के लिए प्रतिभूत लेनदार के विरुद्ध व्यादेश का अनुतोष अभिप्राप्त करने का कोई उपचार है या नहीं । वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 34 के द्वितीय भाग से यह दर्शित होता है कि किसी न्यायालय या अन्य प्राधिकारी द्वारा इस अधिनियम द्वारा इसके अधीन प्रदत्त किसी शक्ति के अनुसरण में की गई या की जाने वाली किसी कार्रवाई की बाबत कोई व्यादेश अनुदत्त नहीं किया जाएगा । इस प्रकार, जब वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 के अधीन प्रतिभूत लेनदार द्वारा या अधिनियम की धारा 14 के अधीन मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा कार्रवाई की जानी ईप्सित हो, तो महाराष्ट्र किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 33 में वर्णित न्यायालय अथवा प्राधिकारी प्रतिभूत लेनदार द्वारा की गई या मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा की जाने वाली ऐसी कार्रवाई को निवारित करने के लिए व्यादेश अनुदत्त नहीं कर सकता है । अन्यथा भी, महाराष्ट्र किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 33 में भू-स्वामी और अभिधारी के बीच विवादों का न कि प्रतिभूत लेनदार और भू-स्वामी, जो कि प्रतिभूत आस्तियों का उधार लेने वाला है, के अधीन अभिधारी के बीच विवादों का, विनिश्चय करने के लिए इस धारा में नामित न्यायालयों में अधिकारिता निहित की गई है । (पैरा 26)

अब न्यायालय प्रत्यर्थियों की इस दलील पर विचार करेगा कि कुछ अपीलार्थियों ने यह साबित करने के लिए कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया है कि वे प्रतिभूत आस्तियों के सद्भावी पट्टेदार हैं । न्यायालय ने पाया है कि न्यायालय के समक्ष मामलों में अपीलार्थियों ने लिखित लिखतों या भू-स्वामी द्वारा अभिधारी को जारी की गई किराया रसीदों का अवलंब लिया है । संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 107 में यह उपबंधित है कि स्थावर संपत्ति का वर्षानुवर्षी या एक वर्ष से अधिक किसी अवधि का या वार्षिक भाटक आरक्षित करने वाला पट्टा "केवल रजिस्ट्रीकृत लिखत द्वारा" किया जा सकेगा और स्थावर संपत्ति के अन्य सब पट्टे या तो रजिस्ट्रीकृत लिखत द्वारा या कब्जे के परिदान सहित मौखिक करार द्वारा किए जा सकेंगे । इसलिए यदि अपीलार्थियों में से कोई यह दावा करता है कि वह अपने पक्ष में किए गए पट्टे की तारीख से एक वर्ष से अधिक किसी अवधि की प्रतिभूत आस्ति के कब्जे का हकदार है, तो उसे पट्टाकर्ता द्वारा उसके पक्ष में रजिस्ट्रीकृत लिखत के निष्पादन का सबूत प्रस्तुत करना होगा । जहां वह अपने पक्ष में रजिस्ट्रीकृत लिखत के निष्पादन का सबूत

प्रस्तुत नहीं करता है और इसके बजाय अरजिस्ट्रीकृत लिखत या कब्जे के परिदान सहित मौखिक करार का अवलंब लेता है, तो यथास्थिति, मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट इस निष्कर्ष पर पहुंचेंगे कि वह प्रतिभूत आस्ति के कब्जे के लिए लिखत की तारीख से या भू-स्वामी द्वारा उसके पक्ष में कब्जे के परिदान की तारीख से एक वर्ष से अधिक अवधि के लिए हकदार नहीं है । (पैरा 27)

इन अपीलों में उठाए गए विधि के विभिन्न प्रश्नों पर अपनी राय व्यक्त करने के पश्चात्, न्यायालय अब अपने समक्ष तीन अलग-अलग प्रवर्ग के मामलों के विस्तृत तथ्यों पर विचार करने के पश्चात् आदेश और निदेश पारित कर सकता है : (i) 2012 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 9426, 9170, 9163, 9253, 9164, 9160, 2013 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 379, 1467, 1782, 3575, 2012 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 4062, 4063, 4053, 4068, 4119, 4129, 2013 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 7835, 8365, 9217, 10346, 2012 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 6587, 6639, 6523, 6622, 7731, 7747 और 4618 से उद्भूत दांडिक अपीलों में अपीलार्थियों का यह दावा है कि वे बंधक से पूर्व किए गए पट्टे के अधीन प्रतिभूत पर काबिज है किंतु मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट, मुम्बई ने प्रतिभूत आस्ति के कब्जे का परिदान संबंधित प्रतिभूत लेनदारों को करने के लिए वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 के अधीन आदेश पारित किए हैं । मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट, मुम्बई द्वारा पारित किए गए ये आदेश अपास्त किए जाते हैं और ये मामले मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट को इस निर्णय और किसी अन्य विधि, जो सुसंगत हो, के अनुसार अपीलार्थियों और प्रतिभूत लेनदारों को सुनवाई का अवसर देने के पश्चात् नए सिरे से आदेश पारित करने के लिए विप्रेषित किए जाते हैं । (ii) 2012 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 4064, 4117, 4114, 4124, 4052, 4058, 4061, 4057, 4620, 6612, 7722, 7744, 7749, 7743, 4130 और 4125 से उद्भूत दांडिक अपीलों में जब अपीलार्थियों ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन विशेष इजाजत याचिकाएं फाइल की गई थीं, तब प्रतिभूत लेनदारों की वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 के अधीन किए गए आवेदन लंबित थे । यदि वे आवेदन अभी भी लंबित हैं, तो यथास्थिति, मुख्य महानगर

मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट अपीलार्थियों के इस दावे पर विचार करेगा कि वे बंधक के सृजन से पूर्व किए गए पट्टे के अधीन प्रतिभूत आस्ति पर काबिज हैं और इस निर्णय तथा किसी अन्य विधि, जो सुसंगत हो, के अनुसार धारा 14 के अधीन किए गए आवेदनों का विनिश्चय करेगा । यदि इन अपीलों के लंबित रहने के दौरान, मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 के अधीन आदेश पारित किए गए हैं, तो ऐसे आदेश अभिखंडित हो जाएंगे और मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट इस निर्णय या किसी अन्य विधि, जो सुसंगत हो, के अनुसार, अपीलार्थियों और प्रतिभूत लेनदारों को सुनवाई का अवसर देने के पश्चात्, नए सिरे से आदेश पारित करेगा । (iii) 2012 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 4619, 6598, 6522, 7745, 7746 और 4120 से उद्भूत दांडिक अपीलों में, जब भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन विशेष इजाजत याचिकाएं फाइल की गईं थीं, तब प्रतिभूत लेनदारों द्वारा वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 के अधीन कोई आवेदन फाइल नहीं किया गया था । यदि इस बीच वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 के अधीन ऐसा आवेदन फाइल किया गया है या भविष्य में फाइल किया जाता है, तो यथास्थिति, मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट इस निर्णय और किसी अन्य विधि, जो सुसंगत हो, के अनुसार, अपीलार्थियों और प्रतिभूत लेनदारों को सुनवाई का अवसर देने के पश्चात्, आवेदनों का विनिश्चय करेगा । (iv) इन सभी अपीलों में, यथास्थिति, मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट पट्टेदार/किराएदार या प्रतिभूत लेनदार किसी के द्वारा भी इस निर्णय की प्रमाणित प्रति फाइल करने की तारीख से चार माह के भीतर वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 के अधीन अंतिम आदेश पारित करेगा । (पैरा 28)

अवलंबित निर्णय

		पैरा
[2012]	(2012) 11 एस. सी. सी. 224 : **कोलम्बिया स्पोर्ट्सवियर कंपनी** बनाम **आयकर निदेशक, बंगलौर** ।	22

निर्दिष्ट निर्णय

[2013]	(2013) 10 एस. सी. सी. 258 : **सुनीता जुगल किशोर जिलदा** बनाम **रामलाल उधोजी ताना (मृत) विधिक प्रतिनिधियों की मार्फत और अन्य** ;	8
[2010]	(2010) 8 एस. सी. सी. 110 : **यूनाइटेड बैंक आफ इंडिया** बनाम **सत्यवती टंडन और अन्य** ;	9
[2009]	(2009) 4 एस. सी. सी. 94 : **सेंट्रल बैंक आफ इंडिया** बनाम **केरल राज्य और अन्य** ;	9
[2009]	(2009) 8 एस. सी. सी. 366 : **प्राधिकृत अधिकारी, इंडियन ओवरसीज बैंक और एक अन्य** बनाम **अशोक सॉ मिल** ;	9
[2008]	(2008) 1 एस. सी. सी. 125 : **ट्रांसकोर** बनाम **भारत संघ और एक अन्य** ;	25
[2007]	2007 क्रिमिनल ला जर्नल 2544 : **मैसर्स ट्रेड वैल, ए प्रोप्राइटरशिप फर्म, मुम्बई और एक अन्य** बनाम **इंडियन बैंक और एक अन्य** ;	2, 5
[2007]	ए. आई. आर. 2007 मद्रास 148 : **श्री लक्ष्मी प्रोडक्ट्स** बनाम **भारतीय स्टेट बैंक** ;	8
[2007]	(2007) 2 एस. सी. सी. 230 : **रघुनाथ राय बरेजा और एक अन्य** बनाम **पंजाब नेशनल बैंक और अन्य** ;	10
[2006]	(2006) 10 एस. सी. सी. 452 : **आईसीआईसीआई बैंक लिमिटेड** बनाम **सिडको लेदर्स लिमिटेड और अन्य** ;	4
[2006]	(2006) 131 डीएलटी 729 : **श्री संजीव बंसल** बनाम **ओमान इंटरनेशनल बैंक एसएओजी और एक अन्य** ;	8

[1993] (1993) 1 एस. सी. सी. 78 :
सी. बी. गौतम बनाम **भारत संघ और अन्य** । 4

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2014 की दांडिक अपील सं. 736 और इसके साथ 2014 की दांडिक अपील सं. 737, 738, 739, 740, 741, 742, 743, 744, 745, 746, 747, 748, 749, 750, 751, 752, 753, 754, 755, 756, 757, 758, 759, 760, 761, 762, 763, 764, 765, 766, 767, 768, 769, 770, 771, 772, 773, 774, 775, 776, 777, 778, 779, 780, 781, 782, 783, 784, 785, 786, 787, 788, 789, 790, 791, 792, 793, 794, 795, 796, 797, 798, 799, 800, 801, 802, 803, 804, 805, 806 और 807.

2011 की दांडिक जनहित याचिका सं. 24 में मुम्बई उच्च न्यायालय के तारीख 20 अगस्त, 2011 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपीलें ।

उपस्थित पक्षकारों की ओर से सर्वश्री सी. ए. सुन्दरम्, विकास सिंह, राजू रामचन्द्रन्, प्रदीप दिवान, एस. बालकृष्णन्, आर. एस. सूरी और संजय जैन, ज्येष्ठ अधिवक्ता और उनके साथ रमेश सिंह, श्रवण मजूमदार, निखिल गोयल, मरसूक बफाकी, (सुश्री) नवीन गोयल, ए. विनायगम बालन, डा. कैलाश चंद, प्रताप वेणूगोपाल, (सुश्री) मीनाक्षी चौहान, गौरव नायर (मैसर्स के. जे. जॉन एंड कं. की ओर से), (सुश्री) रुचि कोहली, एच. पी. शर्मा, पंकज कुमार, सुब्रह्मण्यम प्रसाद, संजय कुमार सिंह, विजय कुमार, अनिल कुमार सांगल, सिद्धार्थ सांगल, (सुश्री) नीना

गुप्ता, मुदित शर्मा, ललित भसीन, रंजन झा, अमर दवे, कृष्णयन् सेन, ऋषद ए. चौधरी, कुणाल चटर्जी, (सुश्री) समता थापा, (सुश्री) दीपिका कालिया, कपिश सेठ, दीपक प्रकाश, (सुश्री) हरीता वी. ए., (सुश्री) योगमाया, (सुश्री) उषा नंदिनी वी., ओ. पी. गघर, एम. टी. जार्ज, (सुश्री) सोनल जैन, राजीव एम. ब्रह्मा, शरीष कुमार मिश्रा, अजय कुमार सिंह, सूर्य नाथ पांडे, संजय जैन, संजीव सागर, चंद्र भूषण प्रसाद, नीरज गुप्ता, अनुपम ढींगरा, विनय नवारे, केशव रंजन, सत्यजीत कुमार, (सुश्री) आभा आर. शर्मा, (सुश्री) प्रवीना गौतम, सर्वेश सिंह बाघेल, आर. एन. केशवानी, राम लाल रॉय, (सुश्री) अमरीता सिंह, (सुश्री) पल्लवी तायल चड्डा, चंचल कुमार गांगुली, संजय कपूर, (सुश्री) निधि, अरुण अग्रवाल, बालाजी श्रीनिवासन्, चन्द्र भूषण, एस. एस. शमशेरी, भक्ति वर्धन, शुभाशीष आर. सोरेन, भरत सूद, आर. सी. कोहली, संजय भट्ट, दुष्यंत कुमार और रबीन मजूमदार

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति ए. के. पटनायक ने दिया ।

न्या. पटनायक – इजाजत दी जाती है ।

तथ्य :

2. अपीलार्थियों ने मुम्बई में स्थित विभिन्न परिसरों के अभिधारी होने का दावा किया है । ये परिसर बैंको (जिन्हें इसमें इसके पश्चात् "प्रतिभूत लेनदार" कहा गया है) द्वारा दिए गए उधारों के लिए प्रत्याभूति के रूप में विभिन्न बैंकों को बंधक किए गए थे । क्योंकि उधार लेने वालों ने अपने प्रतिभूत उधारों या उनकी किस्तों के प्रतिसंदाय में व्यतिक्रम किया और इन उधारों

की बाबत उनके लेखों को प्रतिभूत लेनदारों द्वारा गैर-निष्पादनीय आस्तियों के रूप में वर्गीकृत किया गया और प्रतिभूत लेनदारों ने वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 की धारा 13 की उपधारा (2) के अधीन उधार लेने वालों को यह सूचित करते हुए साठ दिन की सूचनाएं जारी कीं कि प्रतिभूत उधारों के असंदाय की दशा में उनका आशय प्रतिभूत आस्तियों को प्रवर्तित करने का है । क्योंकि उधार लेने वाले सूचना की तारीख से साठ दिन के भीतर अपने दायित्व का पूर्णतया निर्वहन करने में असफल रहे, इसलिए प्रतिभूत लेनदारों ने उधार लेने वालों की प्रतिभूत आस्तियों को कब्जे में लेने के लिए वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (4) के अधीन अपने अधिकार का प्रयोग किया । तथापि, प्रतिभूत आस्तियां अपीलार्थियों के कब्जा अधीन परिसरों में हैं । इसलिए प्रतिभूत लेनदारों ने वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14(1) के अधीन मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट, मुम्बई को परिसरों का कब्जा लेने और अधिनियम की धारा 14 के उपबंधों के अनुसार प्रतिभूत लेनदारों को परिसरों का कब्जा सौंपने का अनुरोध किया । मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट द्वारा उन्हें उनके कब्जा अधीन परिसरों से वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम के अधीन बेकब्जा करने की धमकी देने पर अपीलार्थियों ने मामलों के इस समूह में इस न्यायालय में समावेदन किया है । उनका पक्षकथन यह है कि वे उधार लेने वाले नहीं हैं, अपितु वे उधार लेने वालों के पट्टेदार हैं और प्रतिभूत आस्तियों पर काबिज बने रहने के हकदार हैं । तथापि, **मैसर्स ट्रेड वैल, ए प्रोप्राइटरशिप फर्म, मुम्बई और एक अन्य** बनाम **इंडियन बैंक और एक अन्य**[1] वाले मामले में मुम्बई उच्च न्यायालय की एक खंड न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया है कि जब कोई प्रतिभूत लेनदार उधार लेने वाले द्वारा अपने दायित्व का प्रतिसंदाय करने में असफल रहने के कारण वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (4) के अधीन उपाय करता है और प्रतिभूत आस्तियों का कब्जा लेने के लिए मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट की सहायता के लिए समावेदन करता है, तो उधार लेने वाले का दायित्व सुस्पष्ट हो जाने के कारण मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट द्वारा कोई न्यायनिर्णयन

---

[1] 2007 क्रिमिनल ला जर्नल 2544.

नहीं किया जा सकता और कब्जा एक अन्यायनिर्णयन प्रक्रिया द्वारा लिया जाना चाहिए और इस प्रक्रम पर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को यह बताने का प्रश्न ही नहीं है कि जिस व्यक्ति को बेकब्जा किया जाना है, वह एक अभिधारी है । **मैसर्स ट्रेड वैल** (उपरोक्त) वाले मामले में मुम्बई उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि उधार लेने वाले तथा तृतीय पक्षकार के पास यह उपचार है कि वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 17 के अधीन ऋण वसूली अधिकरण के समक्ष आवेदन फाइल करे और यदि उधार लेने वाला या तृतीय पक्षकार सफल रहता है, तो ऋण वसूली अधिकरण उधार लेने वाले या तृतीय पक्षकार को प्रतिभूत आस्तियों का कब्जा प्रत्यावर्तित कर सकता है । **मैसर्स ट्रेड वैल** (उपरोक्त) वाले मामले में मुम्बई उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए इस दृष्टिकोण का अनुसरण इंटरनेशनल एसेट्स रिकंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड बनाम भारत संघ और अन्य वाले मामले में उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 20 अगस्त, 2011 को पारित किए गए आक्षेपित निर्णय में किया गया है । अपीलार्थियों की शिकायत यह है कि यदि उच्च न्यायालय का निर्णय कार्यान्वित किया जाता है, तो अपीलार्थियों के पास मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट, मुम्बई को कब्जा अभ्यर्पित करने और वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 17 के अधीन ऋण वसूली अधिकरण में समावेदन करने के सिवाय कोई विकल्प नहीं है । अपीलार्थियों के अनुसार, वास्तव में वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 17 के अधीन ऐसा कोई उपचार उपलब्ध ही नहीं है और यदि उपचार उपलब्ध है, तो भी यह निरर्थक है क्योंकि उन्हें अभिधृत परिसरों को छोड़कर जाना होगा और यदि ऋण वसूली अधिकरण अपीलार्थियों के पक्ष में विनिश्चय करता है तो केवल उस स्थिति में ही वे अभिधृत परिसरों में वापस आ सकते हैं । इसलिए उन्होंने आक्षेपित निर्णय से व्यथित होकर संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन विशेष इजाजत लेकर ये अपीलें फाइल की हैं ।

अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल की दलीलें :

3. अपीलार्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री सी. ए. सुंदरम् ने यह दलील दी कि संविधान के अनुच्छेद 300-क के अधीन प्रत्येक व्यक्ति को सांविधानिक अधिकार है कि विधि के प्राधिकार के सिवाय उसकी संपत्ति से वंचित न किया जाए । विद्वान् काउंसेल ने यह

दलील दी कि अभिधारी एक पट्टेदार है और पट्टे की अवधि के दौरान पट्टाकर्ता की संपत्ति पर काबिज रहने का अधिकार है और इस अधिकार को विधि के प्राधिकार के सिवाय छीना नहीं जा सकता है । उसने यह दलील दी कि वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम के उपबंधों में, विशिष्ट रूप से उक्त अधिनियम की धारा 13 में, यह दर्शित करने वाली ऐसी कोई बात नहीं है कि जब प्रतिभूत लेनदार वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 के अधीन कार्यवाही आरंभ करता है, तो पट्टेदार का पट्टे की अवधि के दौरान प्रतिभूत आस्ति पर काबिज रहने का यह अधिकार निर्वापित हो जाता है । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि तथापि, वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (13) की भाषा से यह दर्शित होता है कि कोई उधार लेने वाला धारा 13 की उपधारा (2) के अधीन सूचना की प्राप्ति के पश्चात्, प्रतिभूत लेनदार की पूर्व लिखित सहमति के बिना, सूचना में निर्दिष्ट अपनी किन्हीं प्रतिभूत आस्तियों को क्रय द्वारा या पट्टे द्वारा या अन्यथा अंतरण नहीं करेगा । उसने यह दलील दी कि वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम का यह उपबंध इस बात का स्पष्ट उपदर्शन है कि उधार लेने वाले द्वारा, उसे अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (2) के अधीन सूचना की प्राप्ति से पूर्व, प्रतिभूत आस्ति का पट्टा करना उक्त अधिनियम के अधीन प्रतिषिद्ध नहीं है । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम में उधार लेने वाले द्वारा प्रतिभूत आस्ति के किए गए किसी पट्टे को प्रभावित करने वाली किसी अभिव्यक्त भाषा के अभाव में, प्रतिभूत लेनदार द्वारा अधिनियम की धारा 13 के अधीन कार्यवाही आरंभ करने के पश्चात् भी पट्टा एक विधिमान्य पट्टा बना रहता है ।

4. विद्वान् काउंसेल ने इस दलील के समर्थन में **सी. बी. गौतम** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की सांविधानिक न्यायपीठ के विनिश्चय को उद्धृत किया । इस मामले में, संपत्ति के प्रकट बाजार मूल्य की अपेक्षा कम प्रतिफल पर स्थावर संपत्ति के अंतरण द्वारा कर-अपवंचना को रोकने के लिए संसद् द्वारा बनाए गए आयकर

---

[1] (1993) 1 एस. सी. सी. 78.

अधिनियम, 1961 की धारा 269-पघ और धारा 269-पङ के उपबंधों को संविधान के अधिकारातीत होने के रूप में चुनौती दी गई थी । आयकर अधिनियम, 1961 की धारा 269-पघ में यह उपबंध किया गया है कि केन्द्रीय सरकार द्वारा किसी स्थावर संपत्ति के क्रय के लिए आदेश करने पर, केन्द्रीय सरकार संपत्ति के स्वामी को प्रकट प्रतिफल की रकम के बराबर रकम प्रतिकर के रूप में संदाय करने के लिए दायी होगी और धारा 269-पङ में यह उपबंध किया गया है कि यदि धारा 269-पघ की उपधारा (1) के अधीन अनिवार्य क्रय के लिए आदेश किया जाता है, तो संपत्ति जिसकी बाबत आदेश किया जाता है, सभी विलंगमों से मुक्त होकर केन्द्रीय सरकार में निहित हो जाएगी और धारा 269-पङ की उपधारा (2) में यह भी उपबंध किया गया है कि अंतरिती या कोई अन्य व्यक्ति, जो उस स्थावर संपत्ति पर काबिज हो जिसकी बाबत धारा 269-पघ की उपधारा (1) के अधीन आदेश किया जाता है, के लिए यह अपेक्षित है कि उस पर आदेश की तामीली के पंद्रह दिन के भीतर वह संपत्ति के कब्जे का अभ्यर्पण या परिदान समुचित प्राधिकारी या समुचित प्राधिकारी द्वारा सम्यक् रूप से प्राधिकृत किसी अन्य व्यक्ति को करे । न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यदि संबंधित संपत्ति पट्टेदार के अधिभोग में है, तो उसके पट्टाधृति अधिकार समाप्त हो जाएंगे और उसे संपत्ति का कब्जा समुचित प्राधिकारी या समुचित प्राधिकारी द्वारा नामनिर्दिष्ट किसी अन्य व्यक्ति को सौंपना होगा और इससे स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि अनिवार्य क्रय के आदेश के परिणामस्वरूप पट्टाधृति अधिकार समाप्त हो जाते हैं । इस न्यायालय ने आगे यह भी अभिनिर्धारित किया कि ऐसे मामलों में अनिवार्य क्रय के आदेश के परिणामस्वरूप पट्टेदार के साथ आवश्यक रूप से घोर अन्याय होगा और किसी कर अपवंचना के प्रयत्न में किसी प्रकार से अंतर्ग्रस्त न हुए बिना भी उन्हें उनके अधिकारों से वंचित होना पड़ेगा । इसलिए इस न्यायालय ने धारा 269-पङ की उपधारा (2) का निर्वचन किया ताकि इसे संपत्ति पर काबिज सद्भावी पट्टेदारों पर अप्रयोज्य बनाया जा सके । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि इस न्यायालय को तद्नुसार यह अभिनिर्धारित करना चाहिए कि उधार लेने वाले द्वारा वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (2) के अधीन सूचना की प्राप्ति से पूर्व निष्पादित किए गए पट्टे के अधीन सद्भावी पट्टेदारों के अधिकार अधिनियम की धारा 13 के अधीन प्रतिभूत लेनदार द्वारा की गई कार्यवाही से प्रभावित नहीं होते हैं । विद्वान् काउंसेल ने **आईसीआईसीआई**

बैंक लिमिटेड बनाम **सिडको लेदर्स लिमिटेड और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की इस मताभिव्यक्ति का अवलंब लिया कि किसी कानून को अधिनियमित करते समय संसद् से यह उपधारणा नहीं की जा सकती कि संपत्ति के अधिकार को छीन लिया जाए जोकि एक सांविधानिक अधिकार है ।

5. श्री सुंदरम् ने अगली यह दलील दी कि **मैसर्स ट्रेड वेल** (उपरोक्त) वाले मामले में और आक्षेपित निर्णय में मुम्बई उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया यह दृष्टिकोण, कि पट्टेदार जैसा कोई तृतीय पक्षकार वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 17 के अधीन ऋण वसूली अधिकरण के समक्ष आवेदन कर सकता है और यदि वह सफल रहता है तो ऋण वसूली अधिकरण पट्टेदार को प्रतिभूत आस्तियों का कब्जा प्रत्यावर्तित कर सकता है, कतई ठीक नहीं है । उसने वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 17 की उपधारा (3) के उपबंधों को यह दर्शित करने के लिए निर्दिष्ट किया कि ऋण वसूली अधिकरण प्रतिभूत आस्तियों का कब्जा केवल उधार लेने वाले को प्रत्यावर्तित कर सकता है, पट्टेदार को नहीं । उसने यह दलील दी कि ऋण वसूली अधिकरण को वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 17 के अधीन किसी पट्टेदार को प्रतिभूत आस्तियों का कब्जा प्रत्यावर्तित करने की कोई शक्ति नहीं है । उसने यह दलील दी कि वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम के अधीन कोई सूचना न तो प्रतिभूत लेनदार द्वारा और न ही मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा प्रतिभूत लेनदार के कब्जे में की प्रतिभूत आस्तियों के पट्टेदार को दी जानी अपेक्षित है और ऐसी किसी सूचना के अभाव में पट्टेदार के पास न तो अधिनियम की धारा 17 के अधीन ऋण वसूली अधिकरण को और न ही अधिनियम की धारा 14 के अधीन मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट को समावेदन करने का कोई अवसर मिलेगा । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 की उपधारा (3) में यह भी उपबंधित है कि मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा प्राधिकृत किसी अधिकारी का प्रतिभूत

---

[1] (2006) 10 एस. सी. सी. 452.

आस्तियों का कब्जा लेने के लिए किया गया कोई कार्य किसी न्यायालय या किसी प्राधिकारी के समक्ष प्रश्नगत नहीं किया जाएगा और इसका यह अर्थ है कि पट्टेदार को मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट के विनिश्चय के विरुद्ध कोई उपचार प्राप्त नहीं होगा । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि क्योंकि वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम के अधीन किसी पट्टे के पट्टेदार के विधिपूर्ण कब्जे की संरक्षा करने के लिए कोई उपचार नहीं है और अधिनियम में संबंधित स्थानीय अभिधृति विधियों के अधीन उपलब्ध उपचारों का वर्जन नहीं किया गया है, इसलिए इस न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करना चाहिए कि ऐसे मामले में, जहां प्रतिभूत आस्तियां पट्टेदारों के कब्जे में हैं, पक्षकारों के लिए उपचार संबंधित अभिधृति विधियों के अधीन उपलब्ध हैं । श्री सुंदरम की इन दलीलों को पट्टेदारों की ओर से हाजिर होने वाले अन्य सभी काउंसेलों द्वारा अंगीकार किया गया ।

प्रत्यर्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल की दलीलें :

6. भारतीय स्टेट बैंक और इंडियन बैंक्स एसोसिएशन की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री विकास सिंह ने यह दलील दी कि स्थावर संपत्ति को बंधक करने से पूर्व इसका पट्टा करने के उधार लेने वाले के अधिकार पर कोई निर्बंधन नहीं हैं, किंतु जब एक बार बंधक सृजित हो जाता है, तो बंधक संपत्ति का पट्टा करने का उसका अधिकार संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 65-क के उपबंधों द्वारा विनियमित होता है । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क के अधीन, जब बंधककर्ता का बंधक संपत्ति पर विधिपूर्ण कब्जा हो तब उसे उक्त अधिनियम की धारा 65-क की उपधारा (2) के उपबंधों के अध्यधीन उसका पट्टा करने का अधिकार है । उसने यह दलील दी कि यदि बंधककर्ता द्वारा किए गए पट्टे से संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क की उपधारा (2) की अपेक्षाओं का समाधान होता है, तो यह एक विधिमान्य पट्टा होगा और प्रतिभूत लेनदार पर आबद्धकारी होगा । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क की उपधारा (3) में यह भी स्पष्ट किया गया है कि यदि बंधक विलेख में बंधककर्ता को बंधक संपत्ति का तब जब उसका उस संपत्ति पर विधिपूर्ण कब्जा हो, पट्टा करने के लिए प्रतिषिद्ध करते हुए कोई तत्प्रतिकूल आशय अभिव्यक्त किया गया है, तो बंधककर्ता कोई पट्टा नहीं कर सकता है और यदि ऐसा पट्टा किया जाता है, तो वह

बंधकदार पर आबद्धकारी नहीं होगा । विद्वान् काउंसेल के अनुसार, पट्टों के निम्नलिखित दो प्रवर्गों के अधीन सृजित किए गए पट्टे विधि द्वारा संरक्षित हैं : (i) बंधक से पूर्व सृजित किए पट्टे और (ii) संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क के अनुसार सृजित किए गए पट्टे तथा पट्टेदार होने का दावा करने वाले अन्य व्यक्तियों का कब्जा विधि द्वारा संरक्षित नहीं है ।

7. श्री विकास सिंह ने अगली यह दलील दी कि वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (13) में यह भी उपबंधित है कि कोई उधार लेने वाला अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (2) में निर्दिष्ट सूचना की प्राप्ति के पश्चात्, प्रतिभूत लेनदार की पूर्व लिखित सहमति के बिना, सूचना में निर्दिष्ट अपनी किन्हीं प्रतिभूत आस्तियों का पट्टे द्वारा अंतरण नहीं करेगा । उसने यह दलील दी कि यदि उधार लेने वाला अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (2) के अधीन लिखित सूचना की प्राप्ति के पश्चात् प्रतिभूत लेनदार की पूर्व लिखित सहमति के बिना प्रतिभूत आस्तियों को कोई पट्टा करता है, तो पट्टा, तद्नुसार, शून्य होगा और पट्टेदार की प्रतिभूत आस्ति का कब्जा विधि द्वारा संरक्षित नहीं होगा ।

8. श्री विकास सिंह ने अपनी दलीलों के समर्थन में **श्री संजीव बंसल** बनाम **ओमान इंटरनेशनल बैंक एसएओजी और एक अन्य**[1] वाले मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय के विनिश्चय और **श्री लक्ष्मी प्रोडक्ट्स** बनाम **भारतीय स्टेट बैंक**[2] वाले मामले में मद्रास उच्च न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लिया, जिनमें दोनों उच्च न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित किया है कि संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क का उल्लंघन करके सृजित की गई अभिधृतियां प्रतिभूत लेनदार पर आबद्धकारी नहीं हैं और वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम के अधीन अभिधृत परिसरों का कब्जा लेने के लिए प्रतिभूत लेनदार के लिए रुकावट नहीं बन सकती हैं । उसने **सुनीता जुगल किशोर जिलदा** बनाम **रामलाल उधोजी ताना (मृत) विधिक प्रतिनिधियों की मार्फत और अन्य**[3] वाले मामले को भी उद्धृत किया, जिसमें इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 52 में

---

[1] (2006) 131 डी. एल. टी. 729.

[2] ए. आई. आर. 2007 मद्रास 148.

[3] (2013) 10 एस. सी. सी. 258.

विचाराधीन वाद का नियम बंधक के आधार पर किए गए वाद/बंधकदार द्वारा किए गए वाद पर भी लागू होता है और इसलिए यदि कोई बंधककर्ता बंधकदार द्वारा विक्रय के लिए किए गए वाद के लंबित रहने के दौरान कोई पट्टा अनुदत्त करता है, तो पट्टेदार वाद के परिणाम से आबद्ध है । विद्वान् काउंसेल ने इस विनिश्चय का अवलंब लेते हुए यह दलील दी कि जब एक बार प्रतिभूत लेनदार प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने के लिए उधार लेने वाले को सूचना जारी कर देता है और उधार लेने वाला ऐसी सूचना के बावजूद प्रतिभूत लेनदार की पूर्व सहमति के बिना प्रतिभूत आस्ति का कब्जा पट्टे के द्वारा अंतरित करता है, तो ऐसे पट्टे का पट्टेदार प्रतिभूत आस्ति का कब्जा प्रतिभूत लेनदार को सौंपने के लिए आबद्ध है ।

9. श्री विकास सिंह ने यह दलील दी कि हालांकि वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम ऐसे पट्टेदार को उपलब्ध उपचारों पर मौन है, जिसका किसी प्रतिभूत आस्ति पर विधिपूर्ण कब्जा है और संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क के अनुसार बंधक करने से पूर्व सृजित किए गए और बंधक करने के पश्चात् सृजित किए गए पूर्वोक्त दोनों प्रवर्गों के पट्टों के मामले में पट्टेदार को वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 17(1) के अधीन आवेदन फाइल करने का उपचार है क्योंकि अधिनियम की धारा 17(1) के अधीन आवेदन "किसी भी व्यक्ति" द्वारा फाइल किया जा सकता है, न कि केवल उधार लेने वाले द्वारा ही । श्री विकास सिंह ने यह दलील दी कि वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम प्रतिभूत ऋणों को न्यायालयों और अधिकरणों के मध्यक्षेप के बिना वसूल करने के लिए प्रतिभूत लेनदारों को समर्थ बनाने हेतु अधिनियमित किया गया है और पट्टेदार होने का दावा करने वाले ऐसे तृतीय पक्षकारों को, जो संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क के अनुसार ऐसे पट्टों के सद्भावी पट्टेदार नहीं हैं, प्रतिभूत लेनदारों द्वारा प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने और प्रतिभूत ऋणों की वसूली करने के लिए निवारित करके अधिनियम के इस प्रशंसनीय प्रयोजन को निष्फल करने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जा सकता है । विद्वान् काउंसेल ने इस दलील के समर्थन में **सेंट्रल बैंक आफ इंडिया** बनाम **केरल राज्य और अन्य**[1], **प्राधिकृत**

---

[1] (2009) 4 एस. सी. सी. 94.

अधिकारी, इंडियन ओवरसीज बैंक और एक अन्य बनाम **अशोक सॉ मिल**[1] और **यूनाइटेड बैंक आफ इंडिया** बनाम **सत्यवती टंडन और अन्य**[2] वाले मामलों में इस न्यायालय की मताभिव्यक्तियों को निर्दिष्ट किया । उसने यह दलील दी कि इसलिए सद्भावी पट्टेदार वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 के अधीन कब्जे का अभ्यर्पण करे और अधिनियम की धारा 17 के अधीन ऋण वसूली अधिकरण के समक्ष आवेदन फाइल करे और यदि वह ऋण वसूली अधिकरण के समक्ष यह सिद्ध करने में सफल रहता है कि पट्टा बंधक से पूर्व सृजित किया गया था और प्रतिभूत लेनदार को पट्टे की जानकारी थी या पट्टा बंधक के पश्चात् संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क के अनुसार सृजित किया गया था, तो ऋण वसूली अधिकरण प्रतिभूत आस्ति का कब्जा प्रत्यावर्तित कर देगा । प्रत्यर्थियों की ओर से हाजिर होने वाले अन्य काउंसेलों ने श्री विकास सिंह की पूर्वोक्त दलीलों को अंगीकार किया और आगे यह दलील दी कि अपीलार्थियों, जिन्होंने यह दर्शित करने के लिए कोई दस्तावेज फाइल नहीं किया है कि वे सद्भावी पट्टेदार हैं, को प्रतिभूत लेनदारों द्वारा अधिनियम की धारा 13 के अधीन प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने के लिए आरंभ की गई कार्यवाही के विरुद्ध संरक्षण नहीं दिया जाना चाहिए ।

10. तथापि, 2012 की विशेष इजाजत याचिका (सिविल) सं. 6639 से उद्भूत सिविल अपील में ओरियंटल बैंक आफ कामर्स की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री श्रीश कुमार मिश्रा ने श्री विकास सिंह द्वारा दी गई दलीलों से असहमति जताई । उसने यह दलील दी कि वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (4) के अधीन प्रतिभूत लेनदार को प्रतिभूत आस्तियों का कब्जा लेने का अधिकार है और चूंकि अधिनियम की धारा 35 में यह उपबंधित है कि इस अधिनियम के उपबंध, तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अंतर्विष्ट इससे असंगत किसी बात के होते हुए भी, प्रभावी होंगे, इसलिए अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (4) प्रतिभूत आस्तियों पर पट्टेदार के काबिज रहने के अधिकारों पर अध्यारोही होगी । उसने इस प्रतिपादना के लिए **रघुनाथ राय बरेजा और एक अन्य** बनाम

---

[1] (2009) 8 एस. सी. सी. 366.

[2] (2010) 8 एस. सी. सी. 110.

पंजाब नेशनल बैंक और अन्य[1] वाले मामले में इस न्यायालय के उस विनिश्चय का अवलंब लिया कि न्यायालय को निर्वचन के रिष्टि के नियम के अनुसार कानून के उपबंधों का अवश्य ही प्रयोजनात्मक निर्वचन करना चाहिए । उसने यह दलील दी कि यदि इस न्यायालय द्वारा निर्वचन के इस रिष्टि के नियम को अपनाया जाता है, तब अधिनियम की धारा 35 के साथ पठित धारा 13 की उपधारा (4) का सही निर्वचन यह होगा कि प्रतिभूत लेनदार द्वारा अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (4) के अधीन अनुध्यात उपाय करने का विनिश्चय कर लेने पर पट्टे का समापन हो जाएगा ।

इन अपीलों में उठाए गए विधि के प्रश्नों पर न्यायालय की राय :

11. प्रथम प्रश्न जिसका हमें विनिश्चय करना है यह है कि क्या वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम के उपबंधों से पट्टे की अवधि के दौरान प्रतिभूत आस्ति पर पट्टेदार के काबिज रहने का अधिकार प्रभावित होता है या नहीं । "प्रतिभूत आस्ति" को अधिनियम की धारा 2(यग) में परिभाषित किया गया है जिससे ऐसी संपत्ति अभिप्रेत है जिस पर प्रतिभूत हित का सृजन किया जाता है । स्थावर संपत्ति की दशा में, किसी प्रतिभूत आस्ति में प्रतिभूत हित प्रतिभूत लेनदार के पक्ष में बंधक द्वारा सृजित किया जाता है । ऐसे मामले हो सकते हैं जहां स्थावर संपत्ति की बाबत बंधक सृजित करने से पूर्व ही उधार लेने वाले ने संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 7 के अनुसार या तो भू-स्वामी के रूप में या स्थावर संपत्ति का अंतरण करने के लिए सक्षम या प्राधिकृत व्यक्ति के रूप में पहले ही किसी पट्टेदार को पट्टे पर दे दिया था । यदि ऐसा पट्टा किया जाता है, तो पट्टेदार को संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 8 के फलस्वरूप पट्टाकृत संपत्ति का पट्टे के निबंधनों और शर्तों के अनुसार उपभोग करने का अधिकार इस बात को विचार में लाए बिना होगा कि स्थावर संपत्ति के किसी पश्चात्वर्ती बंधकदार को ऐसे पट्टे की जानकारी है या नहीं ।

12. उधार लेने वाले द्वारा किसी स्थावर संपत्ति का किसी प्रतिभूत लेनदार के पक्ष में बंधक सृजित करने के पश्चात्, उसका बंधक संपत्ति का पट्टा करने का अधिकार संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क द्वारा विनियमित होता है । संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क इसमें नीचे उद्धृत की जाती है :–

---

[1] (2007) 2 एस. सी. सी. 230.

"65-क. बंधककर्ता की पट्टा करने की शक्ति – (1) उपधारा (2) के उपबंधों के अध्यधीन जब बंधककर्ता का बंधक संपत्ति पर विधिपूर्ण रूप से कब्जा हो तब उसकी यह शक्ति होगी कि उसे पट्टों पर दे दे, जो पट्टे बंधकदार पर आबद्धकर होंगे ।

(2) हर ऐसा पट्टा ऐसा होगा, जो सम्पृक्त संपत्ति के प्रबंध के मामूली अनुक्रम में और किसी स्थानीय विधि, रूढ़ि या प्रथा के अनुसार किया जाता ।

(ख) हर ऐसे पट्टे में वह सर्वोत्तम भाटक आरक्षित होगा जो युक्तियुक्ततः अभिप्राप्त किया जा सकता हो और कोई भी प्रीमियम न तो दिया जाएगा और न उसके लिए वचन दिया जाएगा तथा कोई भी भाटक अग्रिम देय नहीं होगा ।

(ग) किसी भी पट्टे में नवीकरण के लिए प्रसंविदा नहीं होगी ।

(घ) हर ऐसा पट्टा ऐसी तारीख से प्रभावी होगा जो उसके लिए किए जाने की तारीख से छह मास से अधिक पश्चात् की न हो ।

(ङ) निर्माणों के पट्टे की दशा में, चाहे वे उस भूमि के, जिस पर वे स्थित हैं, सहित या बिना पट्टे पर दिए गए हों, पट्टे की अस्तित्वावधि किसी दशा में भी तीन वर्ष से अधिक की न होगी और पट्टे में भाटक देने के लिए प्रसंविदा और उसमें विनिर्दिष्ट समय के भीतर भाटक न चुकाए जाने पर पुनः प्रवेश करने की शर्त अंतर्विष्ट होगी ।

(3) उपधारा (1) के उपबंध केवल तभी और वहीं तक लागू होते हैं जब और जहां तक कि बंधक विलेख में कोई तत्प्रतिकूल आशय अभिव्यक्त न किया गया हो और उपधारा (2) के उपबंधों में फेरफार या उनका विस्तारण बंधक विलेख द्वारा किया जा सकेगा और इस प्रकार फेरफार किए गए या विस्तारित उपबंध यावत्शक्य वैसे ही प्रकार से और वैसी ही प्रसंगतियों, प्रभावों और परिणामों सहित प्रवर्तित होंगे, मानो ऐसे फेरफार या विस्तारण उस उपधारा में अंतर्विष्ट हों ।"

इस प्रकार, संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क में यह उपबंधित है कि बंधककर्ता को संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क की उपधारा (2) के उपबंधों के अध्यधीन बंधक संपत्ति को, जब उसका उस संपत्ति पर

विधिपूर्ण कब्जा हो, पट्टे पर देने की शक्ति है और ऐसा पट्टा बंधकदार पर आबद्धकर है । धारा 65-क की उपधारा (3) में यह भी उपबंधित है कि बंधककर्ता को बंधक संपत्ति को पट्टे पर देने की ऐसी शक्ति केवल तभी और वहीं तक उपलब्ध है जब और जहां तक कि बंधक विलेख में कोई तत्प्रतिकूल आशय अभिव्यक्त न किया गया हो । इस प्रकार, जब तक बंधक विलेख बंधककर्ता को बंधक संपत्ति को पट्टे पर देने से प्रतिषिद्ध न करता हो और जब तक पट्टे से धारा 65-क की उपधारा (2) की अपेक्षाओं का समाधान होता हो, उधार लेने वाले द्वारा बंधककर्ता के रूप में दिया गया पट्टा न केवल विधिमान्य होगा अपितु बंधकदार के रूप में प्रतिभूत लेनदार पर भी आबद्धकर होगा ।

13. अब हम इस बात पर विचार कर सकते हैं कि क्या उधार लेने वाले या बंधककर्ता द्वारा संपत्ति अंतरण अधिनियम के उपबंधों के अनुसार किए गए इन विधिमान्य पट्टों को समाप्त करने के लिए वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम के उपबंधों का प्रभाव होगा । वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 35, जिसका **मैसर्स ट्रेड वैल** (उपरोक्त) वाले मामले तथा आक्षेपित निर्णय में उच्च न्यायालय द्वारा अवलंब लिया गया है, इसमें नीचे उद्धृत की जाती है :–

> "35. **इस अधिनियम के उपबंधों का अन्य विधियों पर अध्यारोही होना –** इस अधिनियम के उपबंध, तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अंतर्विष्ट इससे असंगत किसी बात या ऐसी किसी विधि के कारण प्रभावी किसी लिखत के होते हुए भी, प्रभावी होंगे ।"

अतः, वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 35 में यह उपबंधित है कि अधिनियम के उपबंध, तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अंतर्विष्ट इससे असंगत किसी बात के होते हुए भी प्रभावी होंगे । इस प्रकार, यदि वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम में कोई उपबंध है और यदि किसी अन्य विधि में कोई ऐसा उपबंध है जो इससे असंगत है, तो वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम का उपबंध प्रभावी होगा, न कि किसी अन्य विधि का उपबंध । वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम में एकमात्र धारा, जो प्रतिभूत लेनदार को प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने और प्रतिभूत ऋण की वसूली के

लिए प्रतिभूत आस्ति को प्रवर्तित करने का अधिकार प्रदत्त करती है, धारा 13 है । इसलिए हमें यह पता लगाना है कि क्या वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 में ऐसा कोई उपबंध है जो उधार लेने वाले या बंधककर्ता के संपत्ति अंतरण अधिनियम के उपबंधों के अनुसार पट्टा देने के अधिकार और पट्टेदार को पट्टे पर दी गई संपत्ति पर पट्टे की अवधि के दौरान काबिज रहने के उसके तत्संबंधी अधिकार के असंगत है या नहीं ।

14. वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 इसमें नीचे उद्धृत की जाती है :–

> "13. **प्रतिभूति हित का प्रवर्तन** – (1) संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 (1882 का 4) की धारा 69 या धारा 69-क में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, किसी प्रतिभूत लेनदार के पक्ष में सृजित कोई प्रतिभूति हित, ऐसे लेनदार द्वारा न्यायालय या अधिकरण के मध्यक्षेप के बिना, इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार प्रवृत्त किया जा सकेगा ।
>
> (2) जहां कोई उधार लेने वाला, जो किसी प्रतिभूति करार के अधीन किसी प्रतिभूत लेनदार के प्रति दायित्वाधीन है, प्रतिभूत ऋण या उसकी किसी किस्त के प्रतिसंदाय में व्यतिक्रम करता है और उसके ऐसे ऋण से संबंधित लेखे को प्रतिभूत लेनदार द्वारा गैर-निष्पादनीय आस्ति के रूप में वर्गीकृत किया गया है, तब प्रतिभूत लेनदार, लिखित सूचना देकर उधार लेने वाले से सूचना की तारीख से साठ दिन के भीतर प्रतिभूत लेनदार के प्रति उसके दायित्वों का पूर्णतया निर्वहन किए जाने की अपेक्षा कर सकेगा, जिसके न होने पर प्रतिभूत लेनदार उपधारा (4) के अधीन सभी या किन्हीं अधिकारों का प्रयोग करने का हकदार होगा ।
>
> (3) उपधारा (2) में निर्दिष्ट सूचना में उधार लेने वाले द्वारा संदेय रकम और उधार लेने वाले द्वारा प्रतिभूत ऋणों के असंदाय की दशा में प्रतिभूत लेनदार द्वारा प्रवर्तित किए जाने के लिए आशयित आस्तियों के ब्यौरे होंगे ।
>
> (3-क) यदि, उपधारा (2) के अधीन सूचना की प्राप्ति पर, उधार लेने वाला कोई अभ्यावेदन करता है या कोई आक्षेप करता है, तो प्रतिभूत लेनदार ऐसे अभ्यावेदन या आक्षेप पर विचार करेगा और यदि

प्रतिभूत लेनदार इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि ऐसा अभ्यावेदन या आक्षेप स्वीकार्य या व्यवहार्य नहीं है, तो वह ऐसे अभ्यावेदन या आक्षेप की प्राप्ति के पंद्रह दिन के भीतर अभ्यावेदन या आक्षेप को अस्वीकार करने के कारणों को उधार लेने वाले को संसूचित करेगा :

परंतु इस प्रकार संसूचित किए गए कारणों या कारणों को संसूचित करने के प्रक्रम पर प्रतिभूत लेनदार द्वारा की जाने वाली कार्यवाही से उधार लेने वाले को अधिनियम की धारा 17 के अधीन ऋण वसूली अधिकरण को या धारा 17-क के अधीन जिला न्यायाधीश के न्यायालय में आवेदन करने का कोई अधिकार प्रदत्त नहीं होगा ।

(4) यदि उधार लेने वाला, उपधारा (2) में विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर अपने दायित्व का पूर्णतः निर्वहन करने में असफल रहता है तो प्रतिभूत लेनदार, अपने प्रतिभूत ऋण की वसूली के लिए निम्नलिखित में से एक या अधिक उपाय कर सकेगा, अर्थात् –

(क) उधार लेने वाले की प्रतिभूत आस्तियों का कब्जा लेना, जिसके अंतर्गत प्रतिभूत आस्ति की वसूली के लिए पट्टे, समनुदेशन या विक्रय द्वारा अंतरण का अधिकार भी है ;

(ख) उधार लेने वाले की प्रतिभूत आस्तियों का प्रबंध ग्रहण करना, जिसके अंतर्गत प्रतिभूत आस्ति की वसूली के लिए पट्टे, समनुदेशन या विक्रय द्वारा अंतरण का अधिकार भी है :

परंतु पट्टे, समनुदेशन या विक्रय द्वारा अंतरण का अधिकार केवल वहां प्रयुक्त किया जाएगा, जहां उधार लेने वाले के कारबार का सारभूत भाग ऋण के लिए प्रतिभूति के रूप में धारित किया गया है :

परंतु यह भी कि जहां संपूर्ण कारबार या कारबार के भाग का प्रबंधन पृथक्करणीय है, वहां प्रतिभूत लेनदार उधार लेने वाले के कारबार के ऐसे प्रबंधन को ग्रहण करेगा जो प्रतिभूति या ऋण से संबंधित है ;

(ग) प्रतिभूत आस्तियों, जिसका कब्जा प्रतिभूत लेनदार द्वारा ग्रहण किया गया है, का प्रबंध करने के लिए किसी व्यक्ति को नियुक्त करना (इसे इसमें इसके पश्चात् प्रबंधक कहा गया है) ;

(घ) ऐसे किसी व्यक्ति, जिसने उधार लेने वाले से किन्हीं प्रतिभूत आस्तियों का अर्जन किया है और जिससे कोई धन शोध्य है या उधार लेने वाले को शोध्य हो सकता है, लिखित में सूचना द्वारा किसी भी समय उतने धन का प्रतिभूत लेनदार को संदाय किए जाने की अपेक्षा करना, जो प्रतिभूत ऋण के संदाय के लिए पर्याप्त हो ।

(5) उपधारा (4) के खंड (घ) में निर्दिष्ट किसी व्यक्ति द्वारा प्रतिभूत लेनदार को किया गया कोई संदाय ऐसे व्यक्ति को विधिमान्य उन्मोचन देगा मानो उसने उधार लेने वाले को संदाय कर दिया हो ।

(5-क) जहां ऐसी किसी स्थावर संपत्ति, जिसके लिए आरक्षित कीमत विनिर्दिष्ट की गई है, के विक्रय को उस आरक्षित कीमत से कम रकम की बोली होने के कारण मुल्तवी किया गया है, वहां प्रतिभूत लेनदार के किसी अधिकारी के लिए, यदि प्रतिभूत लेनदार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किया गया हो, यह विधिपूर्ण होगा कि वह किसी पश्चात्वर्ती विक्रय में प्रतिभूत लेनदार की ओर से स्थावर संपत्ति के लिए बोली लगाए ।

(5-ख) जहां उपधारा (5) में निर्दिष्ट प्रतिभूत लेनदार को किसी पश्चात्वर्ती विक्रय पर स्थावर संपत्ति का क्रेता होना घोषित किया जाता है, वहां क्रय कीमत की रकम समायोजन प्रतिभूत लेनदार के दावे की उस रकम के मद्दे किया जाएगा, जिसके लिए प्रतिभूत लेनदार द्वारा धारा 13 की उपधारा (4) के अधीन प्रतिभूत हित के प्रवर्तन के लिए नीलामी की गई है ।

(5-ग) बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 (1949 का 10) की धारा 9 के उपबंध, यथाशक्य, उपधारा (5-क) के अधीन प्रतिभूत लेनदार द्वारा अर्जित की गई स्थावर संपत्ति पर लागू होंगे ।

(6) प्रतिभूत लेनदार या प्रतिभूत लेनदार की ओर से प्रबंधक द्वारा, उपधारा (4) के अधीन कब्जा लेने या प्रबंध ग्रहण करने के पश्चात् प्रतिभूत आस्ति का कोई अंतरण, अंतरिती में अंतरित प्रतिभूत आस्ति में या उसके संबंध में सभी अधिकार ऐसे निहित कर देगा मानो वह अंतरण उसे प्रतिभूत आस्ति के स्वामी द्वारा किया गया था ।

(7) जहां उपधारा (4) के उपबंधों के अधीन किसी उधार लेने वाले के विरुद्ध कोई कार्रवाई की गई है, वहां ऐसे सभी खर्च, प्रभार

और व्यय जो प्रतिभूत लेनदार की राय में उसके द्वारा उचित तौर पर उपगत किए गए हैं या उससे आनुषंगिक कोई व्यय, उधार लेने वाले से वसूलीय होंगे और वह धन जो प्रतिभूत लेनदार द्वारा प्राप्त किया जाता है, किसी तत्प्रतिकूल संविदा के अभाव में, उसके द्वारा न्यास में धारण किया जाएगा, जिसका उपयोजन प्रथमतः ऐसे खर्चों, प्रभारों और व्ययों के संदाय में और द्वितीयतः प्रतिभूत लेनदार के शोध्यों के उन्मोचन में किया जाएगा और इस प्रकार प्राप्त धन के अतिशेष का संदाय उसके हकदार व्यक्ति को, उसके अधिकारों और हितों के अनुसार, किया जाएगा ।

(8) यदि प्रतिभूत लेनदार के शोध्य, उसके द्वारा उपगत सभी खर्चों, प्रभारों और व्ययों सहित, प्रतिभूत लेनदार को, विक्रय या अंतरण के लिए नियत तारीख से पूर्व किसी समय निविदत्त कर दिए जाते हैं तो प्रतिभूत लेनदार द्वारा प्रतिभूत आस्ति का विक्रय या अंतरण नहीं किया जाएगा और उसके द्वारा उस प्रतिभूत आस्ति के अंतरण या विक्रय के लिए कोई और कदम नहीं उठाए जाएंगे ।

(9) एक से अधिक प्रतिभूत लेनदारों द्वारा किसी वित्तीय आस्ति के वित्तपोषण या प्रतिभूत लेनदारों द्वारा किसी वित्तीय आस्ति के संयुक्त वित्तपोषण की दशा में, कोई प्रतिभूत लेनदार उपधारा (4) के अधीन या उसके अनुसरण में उसे प्रदत्त किसी या सभी अधिकारों का प्रयोग करने का तब तक हकदार नहीं होगा जब तक कि ऐसे अधिकार के प्रयोग के लिए, अभिलेख तारीख को बकाया रकम के कम से कम तीन-चौथाई का प्रतिनिधित्व करने वाले प्रतिभूत लेनदार सहमत न हों और ऐसी कार्रवाई सभी प्रतिभूत लेनदारों पर बाध्यकर होगी :

परंतु किसी समापनाधीन कंपनी की दशा में, प्रतिभूत आस्तियों के विक्रय से वसूल की गई रकम, कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) की धारा 529-क के उपबंधों के अनुसार वितरित की जाएगी :

परंतु यह और कि ऐसे कंपनी की दशा में जिसका परिसमापन इस अधिनियम के प्रारंभ पर या उसके पश्चात् किया जा रहा है, उस कंपनी का प्रतिभूत लेनदार, जो अपनी प्रतिभूति का त्याग करने की अपेक्षा अपनी प्रतिभूति को वसूली करने और कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) की धारा 529 की उपधारा (1) के परंतुक के अधीन

अपने ऋण को साबित करने का विकल्प लेता है, वहां वह उक्त अधिनियम की धारा 529-क के उपबंधों के अनुसार समापक के पास कर्मकारों के शोध्य जमा करवाने के पश्चात् अपनी प्रतिभूत आस्तियों के विक्रय आगम रख सकेगा :

परंतु यह भी कि दूसरे परंतुक में निर्दिष्ट समापक, प्रतिभूत लेनदारों को, कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) की धारा 529-क के उपबंधों के अनुसार कर्मकारों के शोध्यों के संबंध में प्रज्ञापित करेगा और यदि कर्मकारों के ऐसे शोध्यों को अभिनिश्चित न किया जा सके तो समापक उक्त धारा के अधीन कर्मकारों के शोध्यों की प्राक्कलित रकम के संबंध में लेनदारों को प्रज्ञापित करेगा और ऐसी दशा में प्रतिभूत लेनदार ऐसे प्राक्कलित शोध्यों की रकम समापक के पास जमा करने के पश्चात् प्रतिभूत आस्तियों के विक्रय आगमों को अपने पास रख सकेगा :

परंतु यह भी कि यदि प्रतिभूत लेनदार कर्मकारों के शोध्यों की प्राक्कलित रकम जमा कर देता है तो लेनदार, कर्मकारों के शोध्यों के अतिशेष का संदाय करने के लिए दायी होगा या प्रतिभूत लेनदार द्वारा समापक के पास जमा की गई अधिक रकम, यदि कोई हो, प्राप्त करने का हकदार होगा :

परंतु यह भी प्रतिभूत लेनदार, कर्मकारों के शोध्यों के अतिशेष, यदि कोई हों, का संदाय करने के लिए समापक को एक वचनबंध देगा ।

स्पष्टीकरण – इस उपधारा के प्रयोजनों के लिए, –

(क) अभिलेख तारीख से वह तारीख अभिप्रेत है जो उस तारीख को बकाया रकम के मूल्य के तीन-चौथाई से अन्यून का प्रतिनिधित्व करने वाले प्रतिभूत लेनदारों द्वारा तय की जाए ;

(ख) बकाया रकम में प्रतिभूत लेनदार की लेखा बहियों के अनुसार प्रतिभूत आस्ति की बाबत प्रतिभूत लेनदार को उधार लेने वाले द्वारा संदेय मूल रकम, ब्याज और कोई अन्य शोध्य सम्मिलित है ।

(10) जहां प्रतिभूत लेनदार के शोध्यों का प्रतिभूत आस्तियों के विक्रय आगमों से पूर्णतः समाधान न हो, वहां प्रतिभूत लेनदार उधार

लेने वाले से अतिशेष रकम की वसूली के लिए, यथास्थिति, अधिकारिता रखने वाले ऋण वसूली अधिकरण या सक्षम न्यायालय को एक आवेदन ऐसे प्ररूप और ऐसी रीति में कर सकेगा जो विहित की जाए ।

(11) इस धारा के अधीन या इसके द्वारा प्रतिभूत लेनदार को प्रदत्त अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, प्रतिभूत लेनदार इस अधिनियम के अधीन प्रतिभूत आस्तियों के संबंध में उपधारा (4) के खंड (क) से खंड (घ) में विनिर्दिष्ट किसी उपाय को पहले किए बिना प्रत्याभूतिदाताओं के विरुद्ध कार्रवाई करने या गिरवी रखी गई आस्तियों का विक्रय करने का हकदार होगा ।

(12) इस अधिनियम के अधीन प्रतिभूत लेनदार के अधिकारों का प्रयोग, इस निमित्त प्राधिकृत उसके एक या अधिक अधिकारियों द्वारा ऐसी रीति से किया जा सकेगा जो विहित की जाए ।

(13) कोई उधार लेने वाला, उपधारा (2) में निर्दिष्ट सूचना की प्राप्ति के पश्चात्, प्रतिभूत लेनदार की पूर्व लिखित सहमति के बिना, सूचना में निर्दिष्ट अपनी किन्हीं प्रतिभूत आस्तियों को विक्रय द्वारा या पट्टे द्वारा या अन्य (अपने कारबार के साधारण अनुक्रम से भिन्न) अंतरण नहीं करेगा ।"

15. ऊपर उद्धृत वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 के विभिन्न उपबंधों को पढ़ने पर हम यह पाते हैं कि धारा 13 की उपधारा (4) में यह उपबंधित है कि यदि उधार लेने वाला अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (2) में उपबंधित सूचना की प्राप्ति से साठ दिन के भीतर अपने दायित्व का पूर्णतः निर्वहन करने में असफल रहता है, तो प्रतिभूत लेनदार अपने प्रतिभूत ऋण की वसूली के लिए इसमें उल्लिखित एक या अधिक उपाय कर सकेगा । अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (4) के खंड (क) में उल्लिखित उपायों में से एक उपाय उधार लेने वाले की आस्तियों का कब्जा लेना है, जिसके अंतर्गत पट्टे द्वारा अंतरण का अधिकार भी है । तथापि, जहां प्रतिभूत आस्ति का विधिपूर्ण कब्जा उधार लेने वाले के पास नहीं है, अपितु एक विधिमान्य पट्टे के अधीन पट्टेदार के पास है, तो प्रतिभूत लेनदार प्रतिभूत आस्ति का कब्जा तब तक ग्रहण नहीं कर सकता जब तक कि पट्टेदार के विधिपूर्ण कब्जे का पर्यवसान नहीं हो जाता ।

तथापि, अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (4) में ऐसा कोई उल्लेख नहीं है कि उधार लेने वाले द्वारा पट्टेदार के पक्ष में किए गए पट्टे का पर्यवसान उक्त अधिनियम की धारा 13 में उल्लिखित उपायों में से कोई उपाय करने का विनिश्चय कर लेने पर हो जाएगा । तथापि, उक्त अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (13) में यह उपबंधित है कि कोई उधार लेने वाला अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (2) में निर्दिष्ट सूचना की प्राप्ति के पश्चात्, प्रतिभूत लेनदार की पूर्व लिखित सहमति के बिना सूचना में निर्दिष्ट अपनी किन्हीं प्रतिभूत आस्तियों को पट्टे पर नहीं देगा । वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (13) में का यह उपबंध और उधार लेने वाले या बंधककर्ता को पट्टा करने के लिए समर्थ बनाने वाले संपत्ति अंतरण अधिनियम के उपबंध परस्पर असंगत हैं । इसलिए वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (13) उक्त अधिनियम की धारा 35 के फलस्वरूप संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क के उपबंधों पर अध्यारोही होगी, और उधार लेने वाले द्वारा प्रतिभूत आस्ति का प्रतिभूत लेनदार से धारा 13 की उपधारा (2) के अधीन उस प्रतिभूत आस्ति के प्रवर्तन के लिए आशयित सूचना की प्राप्ति के पश्चात् दिया गया पट्टा एक विधिमान्य पट्टा नहीं होगा ।

16. अब हम पट्टेदार के अधिकार की प्रकृति और संपत्ति अंतरण अधिनियम के अधीन दिए गए पट्टे का कब पर्यवसान हो जाता है, पर विचार कर सकते हैं । संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 105 और 111, जो इस संबंध में सुसंगत हैं, इसमें नीचे उद्धृत की जाती हैं :–

> "105. **पट्टे की परिभाषा** – स्थावर संपत्ति का पट्टा ऐसी संपत्ति का उपभोग करने के अधिकार का ऐसा अंतरण है, जो एक अभिव्यक्त या विवक्षित समय के लिए या शाश्वत काल के लिए किसी कीमत के, जो दी गई हो या जिसे देने का वचन दिया गया हो, अथवा धन, या फसलों के अंश या सेवा या किसी अन्य मूल्यवान वस्तु के, जो कालावधीय रूप से या विनिर्दिष्ट अवसरों पर अंतरिती द्वारा, जो उस अंतरण को ऐसे निबंधनों पर प्रतिगृहीत करता है, अंतरक को की या दी जानी है, प्रतिफल के रूप में किया गया हो ।
>
> **पट्टाकर्ता, पट्टेदार, प्रीमियम और भाटक की परिभाषा** – अंतरक पट्टाकर्ता कहलाता है, अंतरिती पट्टेदार कहलाता है, कीमत

प्रीमियम कहलाती है और इस प्रकार देय या करणीय धन, अंश, सेवा या अन्य वस्तु भाटक कहलाती है ।

111. **पट्टे का पर्यवसान** – स्थावर संपत्ति के पट्टे का पर्यवसान हो जाता है –

(क) तद्द्वारा परिसीमित समय के बीत जाने से ;

(ख) जहां कि ऐसा समय किसी घटना के घटित होने की शर्त पर परिसीमित है, वहां ऐसी घटना के घटित होने से ;

(ग) जहां कि उस संपत्ति में पट्टाकर्ता के हित का पर्यवसान किसी घटना के घटित होने पर होता है या उसका व्ययन करने की उसकी शक्ति का विस्तार किसी घटना के घटित होने तक ही है, वहां ऐसी घटना के घटित होने से ;

(घ) उस दशा में, जबकि उस संपूर्ण सम्पत्ति के पट्टेदार और पट्टाकर्ता के हित एक ही व्यक्ति में एक ही समय एक ही अधिकार के नाते निहित हो जाते हैं ;

(ङ) अभिव्यक्त अभ्यर्पण द्वारा, अर्थात् उस दशा में, जबकि पट्टेदार पट्टे के अधीन अपना हित पारस्परिक करार द्वारा पट्टाकर्ता के प्रति छोड़ देता है ;

(च) विवक्षित अभ्यर्पण द्वारा ;

(छ) समपहरण द्वारा, अर्थात् (1) उस दशा में जबकि पट्टेदार किसी ऐसी अभिव्यक्त शर्त को भंग करता है, जिससे यह उपबंधित है कि उसका भंग होने पर पट्टाकर्ता पुनः प्रवेश कर सकेगा ; या (2) उस दशा में, जबकि पट्टेदार किसी अन्य व्यक्ति का हक खड़ा करके या यह दावा करके कि वह स्वयं हकदार है अपनी पट्टेदारी हैसियत का त्याग करता है ; या (3) जबकि पट्टेदार दिवालिया न्यायनिर्णीत हो जाता है और पट्टे में यह उपबंधित है कि पट्टाकर्ता ऐसी घटना के घटित होने पर पुनः प्रवेश कर सकेगा ; और जबकि उन दशाओं में से किसी में पट्टाकर्ता या उसका अंतरिती पट्टेदार को पट्टे का पर्यवसान करने के अपने आशय की लिखित सूचना देता है ;

(ज) पट्टे का पर्यवसान करने या पट्टे पर दी गई संपत्ति को छोड़ देने के आशय की एक पक्षकार द्वारा दूसरे पक्षकार को

सम्यक् रूप से दी गई सूचना के अवसान पर ।"

इस प्रकार, धारा 105 में यह उपबंधित है कि जब कोई पट्टाकर्ता स्थावर संपत्ति को उस संपत्ति का उपभोग करने के अपने अधिकार का अंतरण करके, निश्चित समय के लिए या शाश्वत काल के लिए, पट्टे पर दे देता है तो स्थावर संपत्ति के पट्टेदार को ऐसी संपत्ति का उपभोग, निश्चित समय के लिए या शाश्वत काल के लिए, करने का अधिकार है । संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 111 में वे विभिन्न प्रकार उपबंधित हैं जिनके द्वारा पट्टे का पर्यवसान हो जाता है । इस प्रकार, जब तक किसी स्थावर संपत्ति के पट्टे का पर्यवसान नहीं हो जाता है, तब तक पट्टेदार को उस संपत्ति के उपभोग का अधिकार है तथा यह अधिकार संपत्ति का अधिकार है और इस अधिकार को संविधान के अनुच्छेद 300-क में यथा उपबंधित विधि के प्राधिकार के बिना छीना नहीं जा सकता है । जैसाकि हमने पाया है, वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 में ऐसा कोई उपबंध नहीं है कि जब प्रतिभूत लेनदार उक्त अधिनियम की धारा 13 में उल्लिखित उपाय करने का विनिश्चय करता है, तो प्रतिभूत आस्ति के पट्टे का पर्यवसान हो जाएगा । किसी विधिमान्य पट्टे का पर्यवसान हुए बिना, पट्टेदार का कब्जा विधिपूर्ण है और पट्टेदार के ऐसे विधिपूर्ण कब्जे को सभी न्यायालयों और अधिकरणों द्वारा संरक्षित किया जाना चाहिए ।

17. अब हम वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 का यह पता लगाने के लिए अवलोकन कर सकते हैं कि क्या यह धारा मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट को ऐसी प्रतिभूत आस्ति, जो किसी विधिमान्य पट्टाधीन पट्टेदार के विधिपूर्ण कब्जे में है, का कब्जा लेने में प्रतिभूत लेनदार की सहायता करने के लिए कोई शक्ति प्रदत्त करती है या नहीं । वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 इसमें नीचे उद्धृत की जाती है :–

> "14. **मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा प्रतिभूत लेनदार की प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने में सहायता करना** – (1) जहां किसी प्रतिभूत आस्ति का कब्जा प्रतिभूत लेनदार द्वारा लिया जाना अपेक्षित है या किसी प्रतिभूत आस्ति का, प्रतिभूत लेनदार द्वारा इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन विक्रय या अंतरित किया जाना अपेक्षित है, वहां प्रतिभूत लेनदार ऐसी किसी प्रतिभूत

आस्ति का कब्जा या नियंत्रण लेने के प्रयोजनार्थ, मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट, जिसकी अधिकारिता के भीतर ऐसी कोई प्रतिभूत आस्ति या उससे संबंधित अन्य दस्तावेज स्थित हैं या पाए जाते हैं, लिखित में उनका कब्जा लेने के लिए आवेदन कर सकेगा और, यथास्थिति, मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट, उसे ऐसा निवेदन किए जाने पर, –

(क) ऐसी आस्ति और उससे संबंधित दस्तावेजों का कब्जा ले लेगा ; और

(ख) ऐसी आस्ति और दस्तावेजों को प्रतिभूत लेनदार को अग्रेषित करेगा :

परंतु प्रतिभूत लेनदार द्वारा किए गए किसी आवेदन के साथ प्रतिभूत लेनदार के प्राधिकृत अधिकारी द्वारा सम्यक् रूप से प्रतिज्ञात एक शपथपत्र सलंग्न किया जाएगा जिसमें यह घोषित किया जाएगा कि –

(i) आवेदन फाइल करने की तारीख को अनुदत्त वित्तीय सहायता की कुल रकम और बैंक का कुल दावा ;

(ii) उधार लेने वाले ने विभिन्न संपत्तियों पर प्रतिभूति हित सृजित किया है और बैंक या वित्तीय संस्था ऐसी संपत्तियों पर विधिमान्य और अस्तित्वशील प्रतिभूत हित धारण किए हुए हैं तथा बैंक या वित्तीय संस्था का दावा परिसीमा अवधि के भीतर है ;

(iii) उधार लेने वाले ने उपर्युक्त उपखंड (ii) में निर्दिष्ट संपत्तियों का ब्यौरा देते हुए विभिन्न संपत्तियों पर प्रतिभूति हित सृजित किया है ;

(iv) उधार लेने वाले ने विनिर्दिष्ट रकम के अनुदत्त कुल योग की वित्तीय सहायता का प्रतिसंदाय करने में व्यतिक्रम किया है ;

(v) वित्तीय सहायता के प्रतिसंदाय में ऐसे व्यतिक्रम के परिणामस्वरूप उधार लेने वाले के खाते को एक गैर-निष्पादनीय आस्ति के रूप में वर्गीकृत कर दिया गया है ;

(vi) इस बात की अभिपुष्टि करते हुए कि धारा 13 की उपधारा (2) के उपबंधों द्वारा यथा अपेक्षित साठ दिन की अवधि की सूचना की, जिसमें वित्तीय सहायता के उस संदाय की, जिसका व्यतिक्रम किया गया है, मांग की गई, उधार लेने वाले पर तामील कर दी गई है ;

(vii) उधार लेने वाले से सूचना के उत्तर में प्राप्त आक्षेप या अभ्यावेदन पर प्रतिभूत लेनदार द्वारा विचार कर लिया गया है और ऐसे आक्षेप या अभ्यावेदन को स्वीकार न करने के कारण उधार लेने वाले को संसूचित कर दिए गए हैं ;

(viii) उधार लेने वाले ने उपर्युक्त सूचना के बावजूद वित्तीय सहायता का कोई प्रतिसंदाय नहीं किया है और इसलिए प्राधिकृत अधिकारी, मूल अधिनियम की धारा 14 के साथ पठित धारा 13 की उपधारा (4) के उपबंधों के अधीन प्रतिभूत आस्तियों को कब्जे में लेने का हकदार है ;

(ix) इस अधिनियम और इसके अधीन बनाए गए नियमों के उपबंधों का अनुपालन किया गया है :

परंतु यह और कि प्राधिकृत अधिकारी से शपथपत्र प्राप्त होने पर, यथास्थिति, जिला मजिस्ट्रेट या मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट, शपथपत्र की अंतर्वस्तुओं के प्रति समाधान हो जाने के पश्चात् प्रतिभूत आस्तियों को कब्जे में लेने के प्रयोजन के लिए उपयुक्त आदेश पारित करेगा :

परंतु यह भी कि प्रथम परंतुक में उल्लिखित शपथपत्र फाइल करने की अपेक्षा इस अधिनियम के प्रांरभ की तारीख को, यथास्थिति, किसी जिला मजिस्ट्रेट या मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट के समक्ष लंबित कार्यवाही को लागू नहीं होगी ।

(1क) जिला मजिस्ट्रेट या मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट अपने अधीनस्थ के किसी अधिकारी को –

(i) ऐसी आस्तियों और उससे संबंधित दस्तावेजों का कब्जा लेने के लिए, और

(ii) ऐसी आस्तियां और दस्तावेज प्रतिभूत लेनदार को अग्रेषित करने के लिए, प्राधिकृत कर सकेगा ।

(2) मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट, उपधारा (1) के उपबंधों का अनुपालन सुनिश्चित करने के प्रयोजनार्थ, ऐसे कदम उठाएगा या उठवाएगा और ऐसी शक्ति का प्रयोग करेगा या करवाएगा, जो उसकी राय में आवश्यक हो ।

(3) इस धारा के अनुसरण में मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा किया गया कोई कार्य किसी न्यायालय या किसी प्राधिकारी के समक्ष प्रश्नगत नहीं किया जाएगा ।"

18. वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 की उपधारा (1) के आरंभिक शब्दों से यह स्पष्ट होता है कि जहां किसी प्रतिभूत आस्ति का कब्जा प्रतिभूत लेनदार द्वारा लिया जाना अपेक्षित है या किसी प्रतिभूत आस्ति का प्रतिभूत लेनदार द्वारा "इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन" विक्रय या अंतरित किया जाना अपेक्षित है, वहां प्रतिभूत लेनदार, ऐसी किसी प्रतिभूत आस्ति का कब्जा या नियंत्रण लेने के प्रयोजनार्थ, मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट, जिसकी अधिकारिता के भीतर ऐसी कोई प्रतिभूत आस्ति या उससे संबंधित अन्य दस्तावेज स्थित हैं या पाए जाते हैं, उनका कब्जा लेने के लिए, लिखित में, आवेदन कर सकेगा । इस प्रकार, केवल जब प्रतिभूत आस्ति का कब्जा वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम के उपबंधों के अधीन लिया जाना है, तभी प्रतिभूत लेनदार प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने में सहायता करने के लिए मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट को समावेदन कर सकता है । हमने पहले ही यह अभिनिर्धारित किया है कि वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 में यह उपबंधित नहीं है कि जब प्रतिभूत लेनदार उक्त धारा में उपबंधित उपाय करने का विनिश्चय करता है, तो प्रतिभूत आस्ति की बाबत पट्टे का पर्यवसान हो जाएगा । अतः, किसी पट्टेदार से किसी विधिमान्य पट्टा अधीन विधिपूर्ण कब्जे की प्रतिभूत आस्ति का कब्जा वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम के उपबंधों के अधीन लिया जाना अपेक्षित नहीं है और इसलिए मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट को वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 के अधीन किसी ऐसे पट्टेदार से प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने और उस कब्जे को प्रतिभूत लेनदार को सौंपने की कोई शक्ति नहीं है ।

इसलिए जब कोई प्रतिभूत लेनदार प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने में सहायता करने के लिए मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट को समावेदन करता है, तब उसे आवेदन के साथ संलग्न शपथपत्र में अवश्य यह बताना चाहिए कि प्रतिभूत आस्ति उधार लेने वाले द्वारा बंधक के सृजन से पूर्व किए गए या वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (1) के अधीन उधार लेने वाले द्वारा सूचना की प्राप्ति से पूर्व संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क के अनुसार किए गए विधिमान्य पट्टे के अधीन किसी पट्टेदार के कब्जे में नहीं है । हम यह स्पष्ट करना चाहेंगे कि ऐसे मामलों में, जहां प्रतिभूत लेनदार प्रतिभूत ऋण की वसूली करने के लिए उधार लेने वाले को प्रतिभूत आस्ति का प्रवर्तन करने के प्रतिभूत लेनदार के आशय की सूचना की तारीख से साठ दिन की अवधि के अवसान के पश्चात् भी प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने में असमर्थ रहता है, वहां प्रतिभूत लेनदार को उधार लेने वाले के पट्टेदार से कोई शोध्य धन या जो शोध्य हो सकता है जिसके अंतर्गत भाटक भी है, प्राप्त करने का अधिकार होगा । यह बात धारा 13 की उपधारा (4) के खंड (घ) से स्पष्ट हो जाती है, जिसमें यह उपबंधित है कि यदि उधार लेने वाला सूचना की अवधि के भीतर अपने दायित्व का पूर्णतः निर्वहन करने में असफल रहता है, तो प्रतिभूत लेनदार ऐसे किसी व्यक्ति से, जिसने उधार लेने वाले से किन्हीं प्रतिभूत आस्तियों का अर्जन किया है और जिससे कोई धन शोध्य है या उधार लेने वाले को शोध्य हो सकता है, लिखित में सूचना द्वारा किसी भी समय उतने धन का प्रतिभूत लेनदार को संदाय किए जाने की अपेक्षा कर सकता है, जो प्रतिभूत ऋण के संदाय के लिए पर्याप्त हो ।

19. वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 की उपधारा (1) के आरंभिक शब्दों में भी यह उपबंधित है कि यदि प्रतिभूत लेनदार द्वारा किसी प्रतिभूत आस्ति का इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन विक्रय या अंतरित किया जाना अपेक्षित है, तो प्रतिभूत लेनदार मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट की सहायता ले सकेगा । इसलिए, जहां प्रतिभूत लेनदार द्वारा ऐसा निवेदन किया जाता है और मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट यह पाता है कि प्रतिभूत आस्ति पट्टेदार के कब्जे में है किंतु पट्टा, जिसके अधीन पट्टेदार प्रतिभूत आस्ति पर काबिज होने का दावा करता है, का पर्यवसान संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 111 के अनुसार हो जाता है, वहां मुख्य

महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट प्रतिभूत आस्ति का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम के उपबंधों के अधीन विक्रय या अंतरण करने में प्रतिभूत लेनदार को समर्थ बनाने के लिए उस प्रतिभूत आस्ति के कब्जे का परिदान प्रतिभूत लेनदार के पक्ष में करने का आदेश पारित कर सकेगा । वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (6) में यह उपबंधित है कि प्रतिभूत लेनदार द्वारा प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने के पश्चात् प्रतिभूत आस्ति का कोई अंतरण अंतरित प्रतिभूत आस्ति में या उसके संबंध में सभी अधिकार अंतरिती में ऐसे निहित कर देगा, मानो वह अंतरण उसे प्रतिभूत आस्ति के स्वामी द्वारा किया गया था । दूसरे शब्दों में, प्रतिभूत आस्ति के अंतरिती को उक्त अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (6) के अधीन कोई अधिकार तब तक अर्जित नहीं होगा, जब तक कि प्रतिभूत लेनदार द्वारा प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने के पश्चात् वह प्रभावशील न हो गया हो । इस प्रकार, प्रतिभूत आस्ति के अंतरण और प्रतिभूत ऋण की वसूली के प्रयोजन के लिए प्रतिभूत लेनदार को वहां प्रतिभूत आस्ति का पट्टेदार से कब्जा लेने के लिए मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट की सहायता की आवश्यकता होगी, जहां पट्टे का पर्यवसान संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 111 में उल्लिखित प्रकारों में से किसी प्रकार हो जाता है ।

20. अब हम ऐसी स्थिति में पट्टेदार को उपलभ्य उपचारों पर विचार कर सकते हैं, जहां प्रतिभूत लेनदार द्वारा वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 के अधीन की गई किसी कार्रवाई द्वारा उसे बेकब्जा किए जाने की धमकी दी जाती है । प्रतिभूति हित (प्रवर्तन) नियम, 2002 के नियम 8 के उप-नियम (1) और (2) में वहां कब्जा लेने की सूचना देने का उपबंध है जहां प्रतिभूत आस्ति स्थावर संपत्ति हो । प्रतिभूति हित (प्रवर्तन) नियम, 2002 के नियम 8 का उप-नियम (1), (2) और (3) तथा उक्त नियमों का परिशिष्ट 4, जो कि कब्जे की ऐसी सूचना का प्ररूप है, इसमें नीचे उद्धृत किए जाते हैं :–

> "8. **स्थावर प्रतिभूत आस्तियों का विक्रय** – (1) जहां प्रतिभूत आस्ति स्थावर संपत्ति है, वहां प्राधिकृत अधिकारी, उधार लेने वाले को, इन नियमों के परिशिष्ट 4 में दी गई यथासंभव निकटतम रूप से एक कब्जा सूचना देकर और संपत्ति के बाह्य दरवाजे या किसी

सहजदृश्य स्थान पर कब्जे की सूचना चिपकाकर, कब्जा लेगा या दिलवाएगा ।

(2) प्राधिकृत अधिकारी द्वारा, उप-नियम (1) में यथा निर्दिष्ट कब्जे की सूचना, यथासंभव शीघ्र किंतु किसी भी दशा में कब्जा लेने की तारीख से सात दिन के अपश्चात् तक, उस स्थान में पर्याप्त परिचालन वाले दो प्रमुख समाचारपत्रों, जिनमें से एक जन भाषा में हो, में भी प्रकाशित कराई जाएगी ।

(3) प्राधिकृत अधिकारी द्वारा स्थावर संपत्ति का कब्जा वस्तुतः लिए जाने की स्थिति में, ऐसी संपत्ति उसकी अपनी अभिरक्षा में रहेगी या उसके द्वारा प्राधिकृत या नियुक्त अन्य व्यक्ति की अभिरक्षा में रहेगी, जो अपनी अभिरक्षा में संपत्ति की ऐसे देखरेख करेगा, जैसी समान परिस्थितियों में ऐसी संपत्ति को लेने पर सामान्य प्रज्ञा का कोई स्वामी करता .....।"

"परिशिष्ट-4

[नियम 8(1) देखें]

कब्जे की सूचना

(स्थावर संपत्ति के लिए)

यतः,

अधोहस्ताक्षरी प्रतिभूत आस्ति का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 (2002 का 54) और धारा 13(12) सहपठित प्रतिभूति हित (प्रवर्तन) नियम, 2002 के अधीन प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए.....(संस्थान का नाम) का प्राधिकृत अधिकारी होने के नाते उधार लेने वाले श्री ...../मैसर्स.....को तारीख .....की मांग सूचना उक्त सूचना की प्राप्ति की तारीख से साठ दिन के भीतर सूचना में उल्लिखित रकम रुपए.....(शब्दों में.....) का प्रतिसंदाय करने की अपेक्षा करते हुए जारी करता है ।

उधार लेने वाले द्वारा रकम का प्रतिसंदाय करने में असफल रहने पर तद्द्वारा उधार लेने वाले तथा जनसाधारण को सूचना दी जाती है कि अधोहस्ताक्षरी ने उक्त अधिनियम की धारा 13(4) सहपठित उक्त नियमों के नियम 9 के अधीन उसे प्रदत्त शक्तियों का

प्रयोग करते हुए इसमें नीचे वर्णित संपत्ति का कब्जा वर्ष.....की तारीख..... को ले लिया है ।

विशिष्टतः उधार लेने वाले और आम जनता को तद्द्वारा चेतावनी दी जाती है कि उक्त संपत्ति का व्यौहार न किया जाए और संपत्ति का कोई व्यौहार .....(संस्थान का नाम) को रकम रु. .....और उस पर ब्याज के प्रभार के अध्यधीन होगा ।

स्थावर संपत्ति का विवरण

यह समस्त संपत्ति फ्लैट सं. ...../भू-खंड सं. .....सर्वेक्षण सं. ...../शहर या नगर सर्वेक्षण सं. ...../खसरा सं. .....उप-जिला..... और जिला..... में रजिस्ट्रीकरण के अंतर्गत समाविष्ट है ।

इर्द-गिर्द :

उत्तर दिशा में .....द्वारा

दक्षिण दिशा में.....द्वारा

पूर्व दिशा में.....द्वारा

पश्चिम दिशा में.....द्वारा

प्राधिकृत अधिकारी

(संस्थान का नाम)

तारीख :

स्थान :

"

प्रतिभूति हित (प्रवर्तन) नियम, 2002 के नियम 8 के उप-नियम (1) और (2) के वाचन से यह दर्शित होता है कि प्राधिकृत अधिकारी द्वारा कब्जे की

सूचना संपत्ति के बाह्य दरवाजे या सहजदृश्य स्थान पर चिपकाई जाएगी और यथासंभव शीघ्र किंतु किसी भी दशा में कब्जा लेने की तारीख से सात दिन के अपश्चात् तक उस स्थान में पर्याप्त परिचालन वाले दो प्रमुख समाचारपत्रों में भी, जिनमें से एक जन-भाषा में हो, प्रकाशित कराई जाएगी । इस प्रक्रम पर, स्थावर संपत्ति के पट्टेदार को उधार लेने वाले की प्रतिभूत आस्तियों का कब्जा लेने के प्रतिभूत लेनदार के प्रयत्नों की सूचना प्राप्त हो जाएगी ।

21. अतः, जब पट्टेदार को प्रतिभूत लेनदार द्वारा उस प्रतिभूत आस्ति, जिसका वह पट्टेदार है, का कब्जा लिए जाने की जानकारी उस कब्जे की सूचना से हो जाती है, जो प्रतिभूति हित (प्रवर्तन) नियम, 2002 के नियम 8 के उप-नियम (1) और (2) के अनुसार दी जाती है, चिपकाई जाती है या प्रकाशित की जाती है, तब वह या तो कब्जे का अभ्यर्पण कर सकता है या प्रतिभूत लेनदार के कब्जा लेने के प्रयत्न का प्राधिकृत अधिकारी के समक्ष यह सबूत प्रस्तुत करके विरोध कर सकता है कि उसने बंधक के सृजन से पूर्व पट्टेदार के रूप में प्रवेश किया था या वह संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क के उपबंधों के अनुसार बंधककर्ता के अधीन पट्टेदार है और संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 111 के अनुसार पट्टे का पर्यवसान नहीं हुआ है । यदि पट्टेदार कब्जा अभ्यर्पित कर देता है, तो पट्टे का, भले ही विधिमान्य हो, संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 111 के खंड (च) के अनुसार पर्यवसान हो जाता है, किंतु यदि वह प्रतिभूत लेनदार के कब्जा लेने के प्रयत्न का विरोध करता है, तो प्राधिकृत अधिकारी बलपूर्वक पट्टेदार को बेदखल नहीं कर सकता अपितु उसे वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 के अधीन मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट को आवेदन करना होगा और आवेदन से संलग्न शपथपत्र में पट्टेदार होने का दावा करने वाले व्यक्ति का नाम और पता बताना होगा । जब ऐसा आवेदन फाइल किया जाता है, तो मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट को एक सूचना देनी होगी और पट्टेदार होने का दावा करने वाले व्यक्ति तथा प्रतिभूत लेनदार को नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अनुरूप सुनवाई का अवसर देना होगा और इसके पश्चात् कोई विनिश्चय करेगा । यदि मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट का यह समाधान हो जाता है कि यह बंधक से पूर्व सृजित एक विधिमान्य पट्टा है या संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क की अपेक्षाओं के अनुसार

बंधक के पश्चात् सृजित एक विधिमान्य पट्टा है और संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 111 के अनुसार पट्टे का पर्यवसान नहीं हुआ है, तो वह प्रतिभूत लेनदार को प्रतिभूत आस्ति का कब्जा परिदत्त करने का आदेश पारित नहीं कर सकता है । किंतु यदि वह इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि वास्तव में कोई ऐसा विधिमान्य पट्टा नहीं है जो या तो बंधक के सृजन से पूर्व किया गया हो या संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क की अपेक्षाओं का समाधान करते हुए बंधक के सृजन के पश्चात् किया गया हो या भले ही विधिमान्य पट्टा हो, किंतु संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 111 के अनुसार पट्टे का पर्यवसान हो गया हो, तो वह प्रतिभूत लेनदार को प्रतिभूत आस्ति का कब्जा परिदत्त करने का आदेश पारित कर सकता है ।

22. वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 की उपधारा (3) में यह उपबंधित है कि धारा 14 के अनुसरण में मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा किया गया कोई कार्य किसी न्यायालय या किसी प्राधिकारी के समक्ष प्रश्नगत नहीं किया जाएगा । इसलिए वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम में मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट के विनिश्चय को अंतिमता प्रदान की गई है और इस विनिश्चय को किसी न्यायालय या किसी प्राधिकारी के समक्ष चुनौती नहीं दी जा सकती । किंतु इस न्यायालय ने अनेक बार यह अभिनिर्धारित किया है कि किसी प्राधिकारी के विनिश्चय को अंतिमता प्रदान करने वाले ऐसे कानूनी उपबंध, जिनमें किसी अन्य प्राधिकारी या न्यायालय को ऐसे विनिश्चय की परीक्षा करने की शक्ति से अपवर्जित किया गया हो, उच्च न्यायालय या इस न्यायालय के लिए संविधान द्वारा निहित अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए वर्जन नहीं होंगे क्योंकि कोई कानूनी उपबंध संविधान द्वारा निहित किसी शक्ति को छीन नहीं सकता है । हम **कोलम्बिया स्पोर्ट्सवियर कंपनी** बनाम **आयकर निदेशक, बंगलौर**[1] वाले मामले में की गई मताभिव्यक्तियों को उद्धृत करना चाहेंगे :–

> "17. विधि की इस स्थिर स्थिति पर, कि संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन इस न्यायालय की और अनुच्छेद 226 और 227 के

---

[1] (2012) 11 एस. सी. सी. 224.

अधीन उच्च न्यायालय की शक्तियों को विधान-मंडल द्वारा अधिकरण के विनिश्चय को अंतिम या निश्चायक बनाते हुए किसी कानून में किए गए उपबंधों द्वारा प्रभावित नहीं किया जा सकता है, विचार करते हुए हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि अधिनियम की धारा 245(ध) की उपधारा (1), जहां तक यह व्यौहार के संबंध में प्राधिकरण के अग्रिम विनिर्णय को आवेदक पर तथा आयुक्त और उसके अधीनस्थ आयकर प्राधिकारियों पर आबद्धकर बनाती है, प्राधिकरण के अग्रिम विनिर्णय को दी गई चुनौती को ग्रहण करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन इस न्यायालय की अधिकारिता और अनुच्छेद 226 और 227 के अधीन उच्च न्यायालय की अधिकारिता का वर्जन नहीं करती है ।"

इसलिए, हमारे मत में, किसी व्यथित पक्षकार द्वारा मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट के विनिश्चय को संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के अधीन उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी जा सकती है और यदि ऐसी कोई चुनौती दी जाती है तो उच्च न्यायालय, यथास्थिति, मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट के विनिश्चय की विधि के स्थिर सिद्धांतों के अनुसार परीक्षा कर सकता है ।

23. हम आगे इस बात पर विचार कर सकते हैं कि क्या पट्टेदार को उस समय वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 17 के अधीन अपील के माध्यम से कोई उपचार प्राप्त है जब प्रतिभूत लेनदार ऐसी प्रतिभूति आस्ति, जो पट्टेदार के कब्जे में है, का कब्जा लेने का प्रयत्न करता है । वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 17 की उपधारा (1), (2) और (3) इसमें नीचे उद्धृत की जाती हैं :–

"**17. अपील करने का अधिकार** – (1) इस अध्याय के अधीन प्रतिभूत लेनदार या उसके प्राधिकृत अधिकारी द्वारा धारा 13 की उपधारा (4) में निर्दिष्ट कोई उपाय करने से व्यथित कोई व्यक्ति (जिसमें उधार लेने वाला भी सम्मिलित है) उस तारीख से जिसको ऐसा उपाय किया गया था, पैंतालीस दिन के भीतर इस विषय में अधिकारिता रखने वाले ऋण वसूली प्राधिकरण को, ऐसी फीस के साथ जो विहित की जाए, आवेदन कर सकेगा :

परंतु उधार लेने वाले और उधार लेने वाले से भिन्न व्यक्ति

द्वारा आवेदन करने के लिए अलग-अलग फीस विहित की जा सकेगी ।

स्पष्टीकरण – संदेहों को दूर करने के लिए, तद्द्वारा यह घोषित किया जाता है कि प्रतिभूत लेनदार द्वारा उधार लेने वाले को उसके अभ्यावेदन या आक्षेप को स्वीकार न करने के कारणों की संसूचना या उधार लेने वाले को कारणों की संसूचना के प्रक्रम पर प्रतिभूत लेनदार की संभाव्यः कार्रवाई से कोई व्यक्ति (जिसमें उधार लेने वाला भी सम्मिलित है) ऋण वसूली अधिकरण को आवेदन करने के लिए हकदार नहीं होगा ।

(2) ऋण वसूली अधिकरण इस बात पर विचार करेगा कि क्या प्रतिभूत लेनदार द्वारा प्रतिभूति के प्रवर्तन के लिए किए गए धारा 13 की उपधारा (4) में निर्दिष्ट उपाय इस अधिनियम और तद्धीन बनाए गए नियमों के उपबंधों के अनुसार हैं ।

(3) यदि ऋण वसूली अधिकरण मामले के तथ्य और परिस्थितियों तथा पक्षकारों द्वारा पेश किए गए साक्ष्य की परीक्षा करने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि प्रतिभूत लेनदार द्वारा किए गए धारा 13 की उपधारा (4) में निर्दिष्ट उपाय इस अधिनियम और तद्धीन बनाए गए नियमों के उपबंधों के अनुसार नहीं हैं, और उधार लेने वाले को कारबार के प्रबंधन का प्रत्यावर्तन या उधार लेने वाले को प्रतिभूत आस्तियों के कब्जे का प्रत्यावर्तन करना अपेक्षित है, तो अधिकरण आदेश करके प्रतिभूत लेनदार द्वारा किए गए धारा 13 की उपधारा (4) में निर्दिष्ट उपायों में से किसी एक या अधिक उपायों को अविधिमान्य घोषित कर सकेगा और उधार लेने वाले को, यथास्थिति, प्रतिभूत आस्तियों का कब्जा या कारबार का प्रबंधन प्रत्यावर्तित कर सकेगा और ऐसा आदेश पारित कर करेगा, जैसा वह प्रतिभूत लेनदार द्वारा धारा 13 की उपधारा (4) के अधीन किए गए किन्हीं उपाय के संबंध में समुचित और आवश्यक समझे ।"

24. वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 17 की उपधारा (1) को पढ़ने पर हम उपधारा के अधीन यह पाते हैं कि इस अध्याय के अधीन प्रतिभूत लेनदार या उसके प्राधिकृत अधिकारी द्वारा धारा 13 की उपधारा (4) में निर्दिष्ट कोई उपाय करने से "व्यथित कोई व्यक्ति (जिसमें उधार लेने वाला भी

सम्मिलित है)" उस तारीख से जिसको ऐसा उपाय किया गया था, पैंतालीस दिन के भीतर इस विषय में अधिकारिता रखने वाले ऋण वसूली प्राधिकरण को आवेदन कर सकेगा । हम श्री विकास सिंह की इस दलील से सहमत हैं कि "कोई व्यक्ति" शब्द पर्याप्त व्यापक हैं जिसमें पट्टेदार भी सम्मिलित है । यह दृष्टिकोण अपनाना भी संभव है कि पट्टेदार, यदि उसे प्रतिभूत आस्ति से बेकब्जा किया जाता है, कब्जे के प्रत्यावर्तन के लिए इस विषय में अधिकारिता रखने वाले ऋण वसूली अधिकरण के समक्ष प्रतिभूति हित (प्रवर्तन) नियम, 2002 के नियम 8 के उप-नियम (1) और (2) के अधीन उस तारीख से पैंतालीस दिन के भीतर जिस तारीख को कब्जे की सूचना दी जाती है या चिपकाई जाती है या प्रकाशित की जाती है, आवेदन फाइल कर सकता है । किंतु जब हम वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 17 की उपधारा (3) को पढ़ते हैं, तो यह पाते हैं कि ऋण वसूली अधिकरण को केवल उधार लेने वाले को प्रतिभूत आस्ति का कब्जा प्रत्यावर्तित करने की शक्ति है और पट्टेदार जैसे किसी अन्य व्यक्ति को नहीं । इसलिए, भले ही ऋण वसूली अधिकरण इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि प्रतिभूत लेनदार द्वारा किए गए धारा 13 की उपधारा (4) में निर्दिष्ट कोई उपाय अधिनियम के उपबंधों के अनुसार नहीं हैं, तो भी अधिकरण पट्टेदार को प्रतिभूत आस्ति का कब्जा प्रत्यावर्तित नहीं कर सकता है । अतः, जहां ऋण वसूली अधिकरण पट्टेदार के आवेदन पर विचार करता है और इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि पट्टेदार के पक्ष में पट्टा बंधक के सृजन से पूर्व किया गया था या हालांकि पट्टा बंधक के सृजन के पश्चात् किया गया था, किंतु संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क की अपेक्षाओं के अनुसार है और पट्टा विधिमान्य है तथा बंधककर्ता पर आबद्धकारी है और पट्टे का अभी पर्यवसान होना है, ऋण वसूली अधिकरण को प्रतिभूत आस्ति का कब्जा पट्टेदार को प्रत्यावर्तित करने की शक्ति नहीं होगी । इसलिए हमारी सुविचारित राय में, पट्टेदार को एक विधिमान्य पट्टे के अधीन अपने विधिपूर्ण कब्जे के संरक्षण के लिए वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 17 के अधीन कोई उपचार उपलब्ध नहीं है ।

25. तथापि, उच्च न्यायालय ने **ट्रांसकोर** बनाम **भारत संघ और एक अन्य**[1] वाले मामले का यह अभिनिर्धारित करने के लिए अवलंब लिया है कि

---

[1] (2008) 1 एस. सी. सी. 125.

वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम में अन्य न्यायनिर्णयनकारी प्रक्रिया द्वारा कब्जे के प्रत्युद्धरण के लिए उपबंध है और यह उपबंध प्रतिभूत लेनदार के अधिकार पर की सभी बाधाओं को दूर करती है और प्रतिभूत लेनदार प्रतिभूत ऋण को वसूल करने के लिए तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13(4) में विनिर्दिष्ट उपायों में से किसी एक या अधिक उपाय का आश्रय लेने का हकदार है । उच्च न्यायालय ने **ट्रांसकोर** (उपरोक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के उपरोक्त विनिश्चय का अवलंब यह निष्कर्ष अभिलिखित करने के लिए भी लिया है कि वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 17(3) के साथ पठित धारा 13(4) की स्कीम से यह दर्शित होता है कि यदि उधार लेने वाले को बेकब्जा वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम के उपबधों के अनुसार नहीं किया जाता है, तो ऋण वसूली अधिकरण पुनः यथास्थिति प्रत्यावर्तित करने के लिए हकदार है । उच्च न्यायालय ने **ट्रांसकोर** (उपरोक्त) वाले मामले में इस न्यायालय की इन मताभिव्यक्तियों का भी अवलंब लिया है कि विवाद, जो प्रतिभूति हित (प्रवर्तन) नियम, 2002 के नियम 9 के साथ पठित नियम 8 द्वारा परिवर्जित किए जाने ईप्सित हैं, वे यह हैं कि जहां तृतीय पक्षकार का हित रातोंरात सृजित कर दिया जाता है और तृतीय पक्षकार सूचना के बिना मूल्य देकर एक सद्भावी क्रेता होने और उसे कोई सूचना न होने की प्रतिरक्षा लेता है । हमने **ट्रांसकोर** (उपरोक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के उपर्युक्त विनिश्चय का परिशीलन किया और हमने यह पाया कि उस मामले में इस प्रश्न पर विचार नहीं किया गया था कि क्या प्रतिभूत लेनदार वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 के अधीन अपने अधिकारों का प्रयोग करते हुए विधिमान्य पट्टे के अधीन पट्टेदार के कब्जे में की प्रतिभूत आस्ति का कब्जा ग्रहण कर सकता है या नहीं और न ही इस प्रश्न पर विचार किया गया था कि क्या वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम में कोई बात संपत्ति अंतरण अधिनियम के अधीन प्रतिभूत आस्ति पर काबिज रहने के पट्टेदार के अधिकार के असंगत है या नहीं । इसलिए, हमारे मत में, उच्च न्यायालय ने **ट्रांसकोर** (उपरोक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय का उचित रूप से

मूल्यांकन नहीं किया है और वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (1) के आरंभिक शब्दों पर ध्यान नहीं दिया है जिसमें यह उपबंध है कि संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 69 और 69-क में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, किसी प्रतिभूत लेनदार के पक्ष में सृजित कोई प्रतिभूति हित, ऐसे लेनदार द्वारा, न्यायालय या अधिकरण के मध्यक्षेप के बिना, इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार प्रवृत्त किया जा सकेगा । इस प्रकार, उच्च न्यायालय यह मूल्यांकन करने में असफल रहा है कि वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 का उपबंध संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 69 और 69-क के उपबंधों को अध्यारोही करता है, किंतु वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (2) के अधीन सूचना की प्राप्ति से पूर्व उधार लेने वाला द्वारा सृजित पट्टे के अधीन पट्टेदार के अधिकारों से संबंधित संपत्ति अंतरण अधिनियम के उपबंधों को अध्यारोही नहीं करता । इसलिए, जहां तक बंधककर्ता द्वारा बंधक के सृजन से पूर्व या संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 65-क के अनुसार बंधक के सृजन के पश्चात् किए गए विधिमान्य पट्टे के अधीन की प्रतिभूत आस्ति पर काबिज पट्टेदार के अधिकारों का संबंध है, मुम्बई उच्च न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय तथा **मैसर्स ट्रेड वैल** (उपरोक्त) वाले मामले में अपनाया गया दृष्टिकोण सही नहीं है और उच्च न्यायालय का आक्षेपित निर्णय, जहां तक उसके इस दृष्टिकोण का संबंध है, अपास्त किया जाता है ।

26. इन अपीलों में उठाया गया विधि का एक अगला प्रश्न यह है कि क्या अभिधारियों को संबंधित अभिधृति विधि में उपचार प्राप्त हैं । महाराष्ट्र राज्य में, महाराष्ट्र किराया नियंत्रण अधिनियम, 1999 प्रवृत्त है और यह अधिनियम अनुसूची 1 और अनुसूची 2 में विनिर्दिष्ट निवास, शिक्षा, कारबार, व्यापार या भंडारण के प्रयोजनों के लिए किराए पर दिए जाने वाले परिसरों तथा ऐसे क्षेत्रों में किराए पर दिए गए मकानों पर लागू होता है जिन पर बाम्बे रेंट्स, होटल एंड लोजिंग हाउस रेंट्स कंट्रोल ऐक्ट, 1947 इस अधिनियम के आरंभ से पूर्व लागू था । महाराष्ट्र किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 33 का शीर्षक "न्यायालयों की अधिकारिता" है और इसमें यह उपबंधित है कि इसमें नामित न्यायालयों को किराए की वसूली या किन्हीं परिसरों के कब्जे से संबंधित भू-स्वामी और अभिधारी के बीच

किसी वाद या कार्यवाही को ग्रहण करने और विचारण करने तथा अधिनियम के अधीन किए गए किसी आवेदन और ऐसे आवेदनों, जो राज्य सरकार या इसके द्वारा प्राधिकृत अधिकारी या सक्षम प्राधिकारी द्वारा विनिश्चित किए जाने हैं, का विनिश्चय करने की अधिकारिता होगी । विधि के जिस प्रश्न पर हमें विचार करना है, यह है कि क्या अपीलार्थियों को मुम्बई सहित महाराष्ट्र राज्य में स्थित परिसरों के अभिधारियों के रूप में महाराष्ट्र किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 33 के अधीन अधिकारिता रखने वाले इन न्यायालयों में समावेदन करने और अपीलार्थियों से प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने के लिए प्रतिभूत लेनदार के विरुद्ध व्यादेश का अनुतोष अभिप्राप्त करने का कोई उपचार है या नहीं । इस प्रश्न का उत्तर वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 34 में है, जो इसमें नीचे उद्धृत की जाती है :–

> "**34. सिविल न्यायालय की अधिकारिता न होना –** किसी भी सिविल न्यायालय को, ऐसे मामले के संबंध में जिसमें ऋण वसूली अधिकरण या अपील अधिकरण को, इस अधिनियम द्वारा या इसके अधीन अवधारण करने के लिए सशक्त किया गया है, कोई वाद या कार्यवाही ग्रहण करने की अधिकारिता नहीं होगी और इस अधिनियम द्वारा या इसके अधीन या बैंकों और वित्तीय संस्थाओं को शोध्य ऋण वसूली अधिनियम, 1993 (1993 का 51) के अधीन प्रदत्त किसी शक्ति के अनुसरण में की गई या की जाने वाली किसी कार्रवाई की बाबत किसी न्यायालय या अन्य प्राधिकारी द्वारा कोई व्यादेश अनुदत्त नहीं किया जाएगा ।"

वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 34 के द्वितीय भाग से यह दर्शित होता है कि किसी न्यायालय या अन्य प्राधिकारी द्वारा इस अधिनियम द्वारा इसके अधीन प्रदत्त किसी शक्ति के अनुसरण में की गई या की जाने वाली किसी कार्रवाई की बाबत कोई व्यादेश अनुदत्त नहीं किया जाएगा । इस प्रकार, जब वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 13 के अधीन प्रतिभूत लेनदार द्वारा या अधिनियम की धारा 14 के अधीन मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा कार्रवाई की जानी ईप्सित हो, तो महाराष्ट्र किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 33 में वर्णित न्यायालय अथवा प्राधिकारी प्रतिभूत लेनदार द्वारा की गई या मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा

की जाने वाली ऐसी कार्रवाई को निवारित करने के लिए व्यादेश अनुदत्त नहीं कर सकता है । अन्यथा भी, महाराष्ट्र किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 33 में भू-स्वामी और अभिधारी के बीच विवादों का न कि प्रतिभूत लेनदार और भू-स्वामी, जो कि प्रतिभूत आस्तियों का उधार लेने वाला है, के अधीन अभिधारी के बीच विवादों का, विनिश्चय करने के लिए इस धारा में नामित न्यायालयों में अधिकारिता निहित की गई है ।

27. अब हम प्रत्यर्थियों की इस दलील पर विचार करेंगे कि कुछ अपीलार्थियों ने यह साबित करने के लिए कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया है कि वे प्रतिभूत आस्तियों के सद्भावी पट्टेदार हैं । हमने पाया है कि हमारे समक्ष मामलों में अपीलार्थियों ने लिखित लिखतों या भू-स्वामी द्वारा अभिधारी को जारी की गई किराया रसीदों का अवलंब लिया है । संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 107 में यह उपबंधित है कि स्थावर संपत्ति का वर्षानुवर्षी या एक वर्ष से अधिक किसी अवधि का या वार्षिक भाटक आरक्षित करने वाला पट्टा "केवल रजिस्ट्रीकृत लिखत द्वारा" किया जा सकेगा और स्थावर संपत्ति के अन्य सब पट्टे या तो रजिस्ट्रीकृत लिखत द्वारा या कब्जे के परिदान सहित मौखिक करार द्वारा किए जा सकेंगे । इसलिए यदि अपीलार्थियों में से कोई यह दावा करता है कि वह अपने पक्ष में किए गए पट्टे की तारीख से एक वर्ष से अधिक किसी अवधि की प्रतिभूत आस्ति के कब्जे का हकदार है, तो उसे पट्टाकर्ता द्वारा उसके पक्ष में रजिस्ट्रीकृत लिखत के निष्पादन का सबूत प्रस्तुत करना होगा । जहां वह अपने पक्ष में रजिस्ट्रीकृत लिखत के निष्पादन का सबूत प्रस्तुत नहीं करता है और इसके बजाय अरजिस्ट्रीकृत लिखत या कब्जे के परिदान सहित मौखिक करार का अवलंब लेता है, तो यथास्थिति, मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट इस निष्कर्ष पर पहुंचेंगे कि वह प्रतिभूत आस्ति के कब्जे के लिए लिखत की तारीख से या भू-स्वामी द्वारा उसके पक्ष में कब्जे के परिदान की तारीख से एक वर्ष से अधिक अवधि के लिए हकदार नहीं है ।

इस न्यायालय के समक्ष मामलों के तथ्यों के अनुसार इस न्यायालय के आदेश और निदेश :

28. इन अपीलों में उठाए गए विधि के विभिन्न प्रश्नों पर अपनी राय व्यक्त करने के पश्चात्, हम अब हमारे समक्ष तीन अलग-अलग प्रवर्ग के मामलों के विस्तृत तथ्यों पर विचार करते हुए आदेश और निदेश पारित कर सकते हैं :–

(i) 2012 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 9426, 9170, 9163, 9253, 9164, 9160, 2013 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 379, 1467, 1782, 3575, 2012 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 4062, 4063, 4053, 4068, 4119, 4129, 2013 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 7835, 8365, 9217, 10346, 2012 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 6587, 6639, 6523, 6622, 7731, 7747 और 4618 से उद्भूत दांडिक अपीलों में अपीलार्थियों का यह दावा है कि वे बंधक से पूर्व किए गए पट्टे के अधीन प्रतिभूत पर काबिज है किंतु मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट, मुम्बई ने प्रतिभूत आस्ति के कब्जे का परिदान संबंधित प्रतिभूत लेनदारों को करने के लिए वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 के अधीन आदेश पारित किए हैं । मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट, मुम्बई द्वारा पारित किए गए ये आदेश अपास्त किए जाते हैं और ये मामले मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट को इस निर्णय और किसी अन्य विधि, जो सुसंगत हो, के अनुसार अपीलार्थियों और प्रतिभूत लेनदारों को सुनवाई का अवसर देने के पश्चात् नए सिरे से आदेश पारित करने के लिए विप्रेषित किए जाते हैं ।

(ii) 2012 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 4064, 4117, 4114, 4124, 4052, 4058, 4061, 4057, 4620, 6612, 7722, 7744, 7749, 7743, 4130 और 4125 से उद्भूत दांडिक अपीलों में जब अपीलार्थियों ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन विशेष इजाजत याचिकाएं फाइल की गईं थीं, तब प्रतिभूत लेनदारों की वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 के अधीन किए गए आवेदन लंबित थे । यदि वे आवेदन अभी भी लंबित हैं, तो यथास्थिति, मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट अपीलार्थियों के इस दावे पर विचार करेगा कि वे बंधक के सृजन से पूर्व किए गए पट्टे के अधीन प्रतिभूत आस्ति पर काबिज हैं और इस निर्णय तथा किसी अन्य विधि, जो सुसंगत हो, के अनुसार धारा 14 के अधीन किए गए आवेदनों का विनिश्चय करेगा । यदि इन अपीलों के लंबित रहने के दौरान, मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का

प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 के अधीन आदेश पारित किए गए हैं, तो ऐसे आदेश अभिखंडित हो जाएंगे और मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट इस निर्णय या किसी अन्य विधि, जो सुसंगत हो, के अनुसार, अपीलार्थियों और प्रतिभूत लेनदारों को सुनवाई का अवसर देने के पश्चात्, नए सिरे से आदेश पारित करेगा ।

(iii) 2012 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 4619, 6598, 6522, 7745, 7746 और 4120 से उद्भूत दांडिक अपीलों में, जब भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन विशेष इजाजत याचिकाएं फाइल की गई थीं, तब प्रतिभूत लेनदारों द्वारा वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 के अधीन कोई आवेदन फाइल नहीं किया गया था । यदि इस बीच वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 के अधीन ऐसा आवेदन फाइल किया गया है या भविष्य में फाइल किया जाता है, तो यथास्थिति, मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट इस निर्णय और किसी अन्य विधि, जो सुसंगत हो, के अनुसार, अपीलार्थियों और प्रतिभूत लेनदारों को सुनवाई का अवसर देने के पश्चात्, आवेदनों का विनिश्चय करेगा ।

(iv) इन सभी अपीलों में, यथास्थिति, मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट पट्टेदार/किराएदार या प्रतिभूत लेनदार किसी के द्वारा भी इस निर्णय की प्रमाणित प्रति फाइल करने की तारीख से चार माह के भीतर वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 के अधीन अंतिम आदेश पारित करेगा ।

(v) पूर्वोक्त निदेशों और आदेशों के साथ ये अपीलें मंजूर की जाती हैं । पक्षकार अपने-अपने खर्चे स्वयं वहन करेंगे ।

अपीलें मंजूर की गईं ।

जस.

मुरलीधर उर्फ गिड्डा और एक अन्य

बनाम

कर्नाटक राज्य

9 अप्रैल, 2014

न्यायमूर्ति आर. एम. लोढ़ा और न्यायमूर्ति शिव कीर्ति सिंह

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302 और धारा 148 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 32] – हत्या – घातक आयुध से सज्जित होकर बल्वा करना – दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील – मृत्युकालिक कथन – कथन संदिग्ध – दोषमुक्ति उचित – यदि मृत्युकालिक कथन देने वाले के वास्तविक शब्दों में मृत्युकालिक कथन सीधे ही अभिलिखित न किया जाए और किसी अन्य व्यक्ति द्वारा बोलकर लिखाया जाए तब ऐसे कथन की सत्यता संदिग्ध हो जाएगी जिसके आधार पर की गई दोषसिद्धि अनुचित होगी ।

इस मामले में अभियुक्त-1 से अभियुक्त-6 का दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302, 307, 144 और 148 के अधीन सेशन न्यायालय द्वारा विचारण किया गया था । सेशन न्यायालय ने सभी अभियुक्तों को दोषमुक्त कर दिया । इस आदेश से व्यथित होकर कर्नाटक राज्य ने कर्नाटक उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । उच्च न्यायालय ने अभियुक्त-5 की दोषमुक्ति कायम रखी किंतु अभियुक्त-1 से अभियुक्त-4 और अभियुक्त-6 को दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 और धारा 148 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया । उच्च न्यायालय के इस निर्णय के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील की गई है । उच्चतम न्यायालय ने विचारण न्यायालय के निर्णय को उचित ठहराया है और उच्च न्यायालय के निर्णय को अपास्त किया है । अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – मृत्युकालिक कथन इसलिए सत्य माना जाता है कि वह मृत्यु की ओर जाने वाले व्यक्ति द्वारा किया जाता है । यदि मृत्युकालिक कथन, कथन देने वाले के वास्तविक शब्दों में सीधे ही अभिलिखित न किया जाए और किसी अन्य व्यक्ति द्वारा बोल-बोलकर लिखाया जाए, तब न्यायालय की

राय में ऐसे कथन की सत्यता स्वयं संदिग्ध हो जाएगी और अभियोजन पक्ष को न्यायालय के समाधान के लिए यह स्पष्ट करना होगा कि कथन ठीक प्रकार अभिलिखित किया गया है । विचारण न्यायालय द्वारा अभि. सा. 25, अभि. सा. 30 और अभि. सा. 36 के साक्ष्य और इस तथ्य पर संचयी रूप से विचार किए जाने पर कि कथन अभिलिखित किए जाने के संबंध में ओवर राइटिंग की गई है और भिन्न रोशनाई से दो नाम जोड़े गए हैं, न्यायालय ने मृत्युकालिक कथन पर विश्वास करना उचित नहीं समझा और उसने अन्य किसी साक्ष्य के अभाव में अभियुक्तों को दोषमुक्त कर दिया । इन परिस्थितियों में, न्यायालय की राय में यह नहीं कहा जा सकता है कि अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य के आधार पर विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया मत एक संभव मत नहीं है । अभियुक्त संदेह का लाभ पाने के हकदार हैं जो विचारण न्यायालय द्वारा ठीक ही दिया गया है । उच्च न्यायालय ने इसी साक्ष्य पर विचार करने पर भिन्न मत व्यक्त किया है और इस बात पर समुचित रूप से विचार किए बिना दोषमुक्ति के निर्णय में हस्तक्षेप किया है कि निर्दोषिता की उपधारणा विचारण न्यायालय के दोषमुक्ति के निर्णय द्वारा प्रबलित हुई है और प्रदर्श पी-22 तथा अभि. सा. 25, अभि. सा. 30 और उच्च न्यायालय ने इस पर भी विचार नहीं किया है कि अभि. सा. 36 के साक्ष्य की विश्वसनीयता के संबंध में विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया मत एक संभव मत है । उच्च न्यायालय ने दोषमुक्ति के निर्णय के विरुद्ध की गई अपील की सुनवाई करने के दौरान दोषमुक्ति के निर्णय को उलटने में सुस्थापित सिद्धांतों को ध्यान में नहीं रखा है । (पैरा 19 और 20)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2008]	(2008) 10 एस. सी. सी. 450 : **घूरे लाल** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	13
[2007]	(2007) 3 एस. सी. सी. 755 : **गोवा राज्य** बनाम **संजय ठाकरन** ;	12
[2007]	(2007) 4 एस. सी. सी. 415 : **चंद्रप्पा** बनाम **कर्नाटक राज्य** ;	12
[2005]	(2005) 9 एस. सी. सी. 291 : **कर्नाटक राज्य** बनाम **के. गोपाल कृष्ण** ;	12

[2003]	(2003) 1 एस. सी. सी. 1 : **सी. एंटोनी** बनाम **के. जी. राघवन नायर** ;	12
[2002]	(2002) 6 एस. सी. सी. 470 : **हरिजन तिरुपल** बनाम **लोक अभियोजक, आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय** ;	12
[2002]	(2002) 4 एस. सी. सी. 85 : **भगवान सिंह** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	12
[1997]	(1997) 7 एस. सी. सी. 677 : **मदनलाल** बनाम **जम्मू-कश्मीर राज्य** ;	12
[1995]	(1995) सप्ली. 1 एस. सी. सी. 248 : **राम कुमार** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	12
[1988]	(1988) 5 एस. सी. सी. 412 : **संबासिवन** बनाम **केरल राज्य** ;	12
[1987]	(1987) 2 एस. सी. सी. 529 : **तोता सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** ;	12
[1979]	(1979) 1 एस. सी. सी. 355 : **के. गोपाल रेड्डी** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** ;	12
[1978]	(1978) 1 एस. सी. सी. 228 : **उमेदभाई जादवभाई** बनाम **गुजरात राज्य** ;	12
[1974]	(1974) 4 एस. सी. सी. 603 : **खेम करण** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	12
[1974]	(1974) 3 एस. सी. सी. 288 : **बिशन सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** ;	12
[1973]	(1973) 2 एस. सी. सी. 793 : **शिवाजी साहबराव बोबडे** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	12
[1973]	(1973) 2 एस. सी. सी. 424 : **लेखा यादव** बनाम **बिहार राज्य** ;	12
[1970]	(1970) 2 एस. सी. सी. 450 : **खेडु मोहटन** बनाम **बिहार राज्य** ;	12

[1964]	ए. आई. आर. 1964 एस. सी. 286 : **नूर खां** बनाम **राजस्थान राज्य** ;	12
[1963]	ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 200 : **एम. जी. अग्रवाल** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	12
[1957]	ए. आई. आर. 1957 एस. सी. 216 : **बलबीर सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** ;	12
[1956]	ए. आई. आर. 1956 एस. सी. 217 : **अहेर राजा खीमा** बनाम **सौराष्ट्र राज्य** ;	12
[1955]	ए. आई. आर. 1955 एस. सी. 807 : **अतले** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	12
[1954]	ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 637 : **मदनमोहन सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	12
[1954]	ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 1 : **तुलसी राम कानू** बनाम **राज्य** ;	12
[1952]	ए. आई. आर. 1952 एस. सी. 52 : **सूरजपाल सिंह** बनाम **राज्य** ;	11
[1934]	ए. आई. आर. 1934 प्रिवी कौंसिल 227 : **शिवस्वरूप** बनाम **सम्राट** ।	10

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2011 की दांडिक अपील सं. 551, 791 और 1081.

कर्नाटक उच्च न्यायालय के तारीख 21 अक्तूबर, 2010 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री संजय आर. हेगड़े, एच. चन्द्रशेखर, वी. के. बीजू, एस. नितिन, के. एम. डी. मुहिलन और ए. वी. मानवलन

प्रत्यर्थी की ओर से श्री वी. एन. रघुपति

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति आर. एम. लोढ़ा ने दिया ।

न्या. लोढ़ा – ये तीनों अपीलें एक ही निर्णय से उद्भूत हुई हैं, इसीलिए इनकी एक साथ सुनवाई की गई है और इनका एक ही निर्णय

द्वारा निपटारा किया जा रहा है ।

2. तारीख 17 अगस्त, 2002 को 9.55 बजे अपराह्न और 10.20 बजे अपराह्न के बीच के. आर. अस्पताल, मंडया में पुलिस द्वारा अभिलिखित कथन (प्रदर्श पी-22) के आधार पर अपीलार्थियों तथा स्वामी नाम के एक व्यक्ति का अभियोजन आरंभ किया गया । प्रदर्श पी-22 कन्नड़ भाषा में लिखा गया है जिसका हिंदी अनुवाद इस प्रकार है :–

> "प्रदीप पुत्र स्वामी गोड्डा, आयु 28 वर्ष जाति वक्कालीगारु, व्यवसाय कृषक, निवासी ग्राम - माझीगेपुरा, श्रीरंगपटनम तालुक । मैं वीरामुडी, प्रकाश और उमेश के साथ आज समय लगभग 8.30 बजे रात्रि में नाई की दुकान के सामने बैठा हुआ था और यह दुकान जावेरगोड्डा की दुकान के बराबर में के. आर. एस. - माझीगेपुरा मार्ग पर स्थित है । उस समय नागा पुत्र अम्मईयम्मा, जग्गा पुत्र सेन्तू, कुमार की बहिन गुन्दा, गिड्डा पुत्र फिशारी नन्जईया, स्वामी, मंजू और होत्ते अशोक और अन्य ने मुझ पर पुरानी शत्रुता के कारण हत्या करने के आशय से गड़ासे से हमला किया जो मेरे हाथ, सिर, गर्दन और शरीर के अन्य भागों पर लगा और उन्होंने उमेश पर भी हमला किया जो मेरे साथ था । वीरामुडी ने कहा हमें न मारो और चला गया । प्रकाश भाग गया । कृपया उन व्यक्तियों के विरुद्ध कार्रवाई करें जिन्होंने मुझ पर हत्या करने का प्रयास किया है ।"

3. प्रदीप द्वारा दिए गए उपरोक्त कथन, जो उसकी मृत्यु हो जाने के पश्चात् मृत्युकालिक कथन बन गया है, के आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-5) रजिस्ट्रीकृत किए जाने पर अन्वेषण आरंभ किया गया । अन्वेषण के दौरान, 37 साक्षियों की परीक्षा की गई । अन्वेषक अधिकारी ने अन्वेषण पूरा होने के पश्चात् नागा **उर्फ** बगरजू (अभियुक्त-1), जग्गा **उर्फ** संतोष कुमार (अभि. सा. 2), एस. सतीश **उर्फ** गुन्दा (अभियुक्त-3), मुरलीधर **उर्फ** गिड्डा (अभियुक्त-4), स्वामी **उर्फ** कोशी (अभियुक्त-5) और मंजू (अभियुक्त-6) के विरुद्ध चालान प्रस्तुत किया ।

4. इसके पश्चात् संबद्ध मजिस्ट्रेट ने अभियुक्तों को विचारण के लिए सेशन न्यायालय के सुपुर्द किया । सेशन न्यायाधीश, त्वरित न्यायालय-1, मंडया ने भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में "दंड संहिता" कहा गया है) की धारा 149 के साथ पठित धारा 302, 307, 144 और 148 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए अभियुक्त-1 से अभियुक्त-6 का विचारण किया । अभियोजन पक्ष ने 37 साक्षियों की परीक्षा की जिनमें से उमेश (अभि.

सा. 4), प्रकाश (अभि. सा. 5) और वीरामुडी (अभि. सा. 15) को प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के रूप में प्रस्तुत किया गया है । डा. बालकृष्ण (अभि. सा. 25) की मौजूदगी में राजशेखर (अभि. सा. 30) द्वारा प्रदर्श पी-22 अभिलिखित किया गया है जो पी. एस. आई. कोदंदरम (अभि. सा. 36) द्वारा बोल-बोलकर लिखाया गया है ।

5. अभियोजन पक्षकथन के प्रति तीन प्रत्यक्षदर्शी साक्षी अर्थात् अभि. सा. 4, अभि. सा. 5 और अभि. सा. 15 पक्षद्रोही हो गए हैं और उन्होंने अभियोजन पक्षकथन का समर्थन बिल्कुल भी नहीं किया है । इन परिस्थितियों में, महत्वपूर्ण साक्ष्य मात्र मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श पी-22) ही है । विचारण न्यायालय ने संपूर्ण मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् अपने तारीख 28 सितंबर, 2004 के निर्णय द्वारा यह निष्कर्ष निकाला कि अभियोजन पक्ष अभियुक्तों का अपराध साबित करने में असफल रहा है, तदनुसार विचारण न्यायालय ने उन्हें दोषमुक्त कर दिया ।

6. कर्नाटक राज्य ने कर्नाटक उच्च न्यायालय के समक्ष त्वरित न्यायालय-1, मंडया के उस निर्णय के विरुद्ध अपील फाइल की जिसके द्वारा त्वरित न्यायालय ने अभियुक्तों को दोषमुक्त कर दिया था । उच्च न्यायालय ने लोक अभियोजक और अभियुक्तों के काउंसेल को सुनने के पश्चात् अपने तारीख 21 अक्तूबर, 2010 के निर्णय द्वारा स्वामी (अभियुक्त-5) की दोषमुक्ति को कायम रखा किंतु अभियुक्त-1 से अभियुक्त-4 और अभियुक्त-6 को दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया और उन्हें जुर्माने के साथ आजीवन कारावास भोगने तथा जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम किए जाने पर अतिरिक्त कारावास भोगने का दंडादेश दिया । उच्च न्यायालय ने उन्हें दंड संहिता की धारा 148 के अधीन अपराध के लिए भी दोषसिद्ध किया है और उन्हें एक वर्ष का कठोर कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया गया है । दोनों दंडादेशों के साथ-साथ चलने का आदेश किया गया है । इसी निर्णय के विरुद्ध विशेष इजाजत द्वारा ये अपीलें फाइल की गई हैं ।

7. उच्च न्यायालय ने अपीलार्थियों को मात्र मृत्युकालिक कथन के आधार पर दोषसिद्ध किया है क्योंकि उच्च न्यायालय के मतानुसार मृत्युकालिक कथन विश्वसनीय और ठोस साक्ष्य है । इस संबंध में, उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया मत पैरा 16 और 17 में व्यापक रूप से उल्लिखित है जो इस प्रकार है :–

> "16. दोनों पक्षकारों के सुनने और साक्षियों के साक्ष्य का

सावधानीपूर्वक परिशीलन करने तथा अन्य साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् हमारा यह निष्कर्ष है कि प्रदर्श पी-22 मृतक का मृत्युकालिक कथन है जो नैसर्गिक और सत्यनिष्ठा के साथ अभिलिखित किया गया है । चिकित्सक (अभि. सा. 25) ने विशिष्ट रूप से यह कथन किया है कि आहत बोलने और कथन देने की स्थिति में था और उसने (चिकित्सक) प्रदर्श पी-22 पर हस्ताक्षर किए हैं । इन परिस्थितियों में यह अर्थ लगाया जा सकता है कि चिकित्सा अधिकारी (अभि. सा. 25) जो प्रदर्श पी-22 अभिलिखित किए जाने के समय पर मात्र एक व्यक्ति के रूप में मौजूद नहीं था अपितु उसकी मौजूदगी से यह भी पता चलता है कि रोगी कथन देने की स्थिति में था । तथापि, प्रदर्श पी-22 की सावधानीपूर्वक संवीक्षा करने पर यह दिखाई पड़ता है कि स्वामी (अभियुक्त-5) का नाम तत्पश्चात् जोड़ा गया है और स्वामी के नाम के पास किसी भी अधिकारी के हस्ताक्षर नहीं हैं और रोशनाई का रंग अन्य लेख के रंग से भिन्न है । पूर्वगामी चर्चा को ध्यान में रखते हुए हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि मृतक प्रदीप का मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श पी-22) असली है और डा. बालकृष्ण (अभि. सा. 25) की मौजूदगी में राजशेखर (अभि. सा. 30) द्वारा उस समय अभिलिखित किया गया है जब मृतक कथन देने के लिए ठीक हालत में था और इस प्रकार उक्त मृत्युकालिक कथन के आधार पर दोषसिद्धि की जा सकती है ।

17. जहां तक घटना का वर्णन करने के लिए मृतक की सक्षमता का संबंध है कि उसे किस प्रकार क्षतियां कारित हुईं दुर्घटना रजिस्टर (प्रदर्श पी-3) का परिशीलन करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रदर्श पी-3, 9.30 बजे अपराह्न में लाया गया था और इस रजिस्टर में यह उल्लेख किया गया है कि छह व्यक्तियों द्वारा हमला किया गया था और उन सभी हमलावरों के नाम उसमें बिना किसी कांट-छांट (ओवर-राइटिंग) के उल्लिखित हैं । केवल वीरामुडी की मौजूदगी के संबंध में ओवर-राइटिंग की गई है और अभियुक्त के विद्वान् काउंसेल की यह दलील है कि वीरामुडी के नाम के ऊपर प्रदीप का नाम लिखा गया है । अध्यपेक्षा-पत्र (प्रदर्श पी-3) से यह दिखाई पड़ता है कि चिकित्सक द्वारा वीरामुडी के हस्ताक्षर अलग से लिए गए हैं । अतः मृतक को अस्पताल में लाए जाने के समय पर वीरामुडी या प्रदीप की मौजूदगी पर कोई भी विवाद नहीं है ।"

8. तथापि, विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श पी-22) के आधार पर कार्यवाही करना उचित नहीं है । विचारण न्यायालय ने प्रदर्श पी-22 और अभि. सा. 25, अभि. सा. 36 और अभि. सा. 30 के साक्ष्य पर विचार करने पर यह निष्कर्ष निकाला है कि प्रदर्श पी-22 अभिलिखित किए जाने का समय विश्वसनीय प्रतीत नहीं होता है और प्रदर्श पी-22 की सत्यता को लेकर न्यायालय का समाधान नहीं हुआ है और प्रदर्श पी-22 तथा अभि. सा. 36, अभि. सा. 25 और अभि. सा. 30 के अभिसाक्ष्यों के आधार पर दोषसिद्धि नहीं की जा सकती है ।

9. इन अपीलों में हमारे विचार के लिए मात्र यह प्रश्न सामने आता है कि क्या उच्च न्यायालय ने अभि. सा. 25, अभि. सा. 30 और अभि. सा. 36 तथा प्रदर्श पी-22 के साक्ष्यों का मूल्यांकन करने के संबंध में विचारण न्यायालय के मत को उलट कर न्यायोचित किया है ।

10. **शिवस्वरूप** बनाम **सम्राट**[1] वाले मामले में लॉर्ड रसेल ने अपील न्यायालय के रूप में दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील की सुनवाई के संबंध में उच्च न्यायालय की कार्यवाही को उजागर किया है । लॉर्ड रसेल ने यह मत व्यक्त किया है, "..... उच्च न्यायालय को चाहिए कि वह ऐसे मामलों को समुचित महत्व दे और उन पर विचार करे, जैसे (1) साक्षियों की विश्वसनीयता के संबंध में विचारण न्यायाधीश के मतों का होना ; (2) अभियुक्त के पक्ष में निर्दोषिता की उपधारणा का होना, निश्चित रूप से यह उपधारणा इस तथ्य से निर्बल नहीं हो सकती कि उसके विचारण के दौरान उसे दोषमुक्त किया गया है ; (3) किसी भी संदेह का लाभ पाने के लिए अभियुक्त का अधिकार होना ; और (4) ऐसे न्यायाधीश द्वारा निकाले गए तथ्य के निष्कर्ष को उलटने में अपील न्यायालय का जल्दबाजी से काम नहीं लेना जिसे साक्षियों को देखने का अवसर मिला है ।" कई वर्षों से लॉर्ड रसेल के इस मत का अनुसरण किया जा रहा है ।

11. वर्ष 1952 में ही इस न्यायालय ने **सूरजपाल सिंह** बनाम **राज्य**[2] वाले मामले में दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 417 के अधीन दोषमुक्ति के विरुद्ध की गई अपील में उच्च न्यायालय की शक्तियों पर

---

[1] ए. आई. आर. 1934 प्रिवी कौंसिल 227.

[2] ए. आई. आर. 1952 एस. सी. 52.

कार्यवाही करते हुए यह मत व्यक्त किया है, " ..... उच्च न्यायालय को ऐसे साक्ष्य का पुनर्विलोकन करने की पूर्ण शक्ति प्राप्त है जिसके आधार पर दोषमुक्ति का आदेश किया गया है किंतु यह भी उतना ही सुस्थापित है कि अभियुक्त की निर्दोषिता की उपधारणा विचारण न्यायालय द्वारा की गई उसकी दोषमुक्ति से प्रबलित हो जाती है, और विचारण न्यायालय जिसने साक्षियों को स्वयं देखा था और उनके साक्ष्यों को सुना था, द्वारा निकाले गए निष्कर्ष केवल सारभूत और आबद्धकारी कारणों से ही उलटे जा सकते हैं ।"

12. दोषमुक्ति के विरुद्ध की गई अपील में अपील न्यायालय के दृष्टिकोण के संबंध में **तुलसी राम कानू** बनाम **राज्य**[1], **मदनमोहन सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[2], **अतले** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[3], **अहेर राजा खीमा** बनाम **सौराष्ट्र राज्य**[4], **बलबीर सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[5], **एम. जी. अग्रवाल** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[6], **नूर खां** बनाम **राजस्थान राज्य**[7], **खेडु मोहटन** बनाम **बिहार राज्य**[8], **शिवाजी साहबराव बोबडे** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[9], **लेखा यादव** बनाम **बिहार राज्य**[10], **खेम करण** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[11], **बिशन सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[12], **उमेदभाई जादवभाई** बनाम **गुजरात राज्य**[13], **के. गोपाल रेड्डी** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[14], **तोता सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[15], **राम कुमार** बनाम **हरियाणा राज्य**[16],

---

[1] ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 1.
[2] ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 637.
[3] ए. आई. आर. 1955 एस. सी. 807.
[4] ए. आई. आर. 1956 एस. सी. 217.
[5] ए. आई. आर. 1957 एस. सी. 216.
[6] ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 200.
[7] ए. आई. आर. 1964 एस. सी. 286.
[8] (1970) 2 एस. सी. सी. 450.
[9] (1973) 2 एस. सी. सी. 793.
[10] (1973) 2 एस. सी. सी. 424.
[11] (1974) 4 एस. सी. सी. 603.
[12] (1974) 3 एस. सी. सी. 288.
[13] (1978) 1 एस. सी. सी. 228.
[14] (1979) 1 एस. सी. सी. 355.
[15] (1987) 2 एस. सी. सी. 529.
[16] (1995) सप्ली. 1 एस. सी. सी. 248.

मदनलाल बनाम **जम्मू-कश्मीर राज्य**[1], **संबासिवन** बनाम **केरल राज्य**[2], **भगवान सिंह** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[3], **हरिजन तिरुपल** बनाम **लोक अभियोजक, आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय**[4], **सी. एंटोनी** बनाम **के. जी. राघवन नायर**[5], **कर्नाटक राज्य** बनाम **के. गोपाल कृष्ण**[6], **गोवा राज्य** बनाम **संजय ठाकरन**[7] और **चंद्रप्पा** बनाम **कर्नाटक राज्य**[8] वाले मामलों में इस न्यायालय द्वारा विचार किया गया है । यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक मामले पर अलग-अलग विचार किया जाए । यही कहना पर्याप्त होगा कि इस न्यायालय ने कई बार यह अभिनिर्धारित किया है कि दोषमुक्ति के विरुद्ध की गई अपील में कार्यवाही करते समय अपील न्यायालय को निम्न बातें ध्यान में रखनी चाहिएं :–

(i) अभियुक्त के पक्ष में निर्दोषिता की उपधारणा होती है और ऐसी उपधारणा विचारण न्यायालय द्वारा उसके पक्ष में पारित किए गए दोषमुक्ति के आदेश से प्रबलित हो जाती है,

(ii) अभियुक्त उस समय युक्तियुक्त संदेह का लाभ पाने का हकदार है जब दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील की गुणता पर विचार किया जाता है,

(iii) यद्यपि, दोषमुक्ति के विरुद्ध अपीलों पर विचार करने के लिए अपील न्यायालय की शक्ति उतनी ही व्यापक है जितनी दोषसिद्धि के विरुद्ध की गई अपील में होती है किंतु सामान्यतया अपील न्यायालय विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित तथ्यों के निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने से संकोच करते हैं । इसका यह कारण है कि विचारण न्यायालय को साक्षियों को ठीक प्रकार से देखने और समझने का अवसर मिलता है । यदि विचारण न्यायालय मामले के तथ्यों पर युक्तियुक्त रूप से विचार करता है तब ऐसी स्थिति में दोषमुक्ति के निर्णय में अपील न्यायालय द्वारा किया गया हस्तक्षेप

---

[1] (1997) 7 एस. सी. सी. 677.
[2] (1988) 5 एस. सी. सी. 412.
[3] (2002) 4 एस. सी. सी. 85.
[4] (2002) 6 एस. सी. सी. 470.
[5] (2003) 1 एस. सी. सी. 1.
[6] (2005) 9 एस. सी. सी. 291.
[7] (2007) 3 एस. सी. सी. 755.
[8] (2007) 4 एस. सी. सी. 415.

न्यायोचित नहीं होगा । जब तक कि विचारण न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्ष पूरी तरह गलत न हों या वे निष्कर्ष विधि का गलत अर्थ लगाकर न निकाले गए हों या ऐसे निष्कर्षों को बनाए रखने की अनुज्ञा दी जाए जिनसे घोर अन्याय होने की संभावना हो, तब तक अपील न्यायालय के लिए ऐसे निष्कर्षों में हस्तक्षेप करना पूर्णतया न्यायोचित नहीं होगा, और

(iv) मात्र इस कारण से कि अपील न्यायालय का झुकाव साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने के पश्चात् भिन्न मत की ओर हो गया है, दोषमुक्ति के निर्णय में हस्तक्षेप करना न्यायोचित नहीं होगा यदि विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया मत संभव मत है । साक्ष्य के पूर्णतया संतुलित निष्कर्ष के आधार पर, विचारण न्यायालय के निर्णय में अपील न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए ।

13. **घूरे लाल** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में न्यायालय ने दोषमुक्ति के निर्णय से उद्भूत अपीलों के संबंध में सिद्धांत अधिकथित किए हैं जिनका ऊपर उल्लेख किया गया है ।

14. अब हम इस पर विचार करेंगे कि क्या आक्षेपित निर्णय जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने दोषमुक्ति के निर्णय में हस्तक्षेप किया है, न्यायोचित है या नहीं ।

15. अभियोजन पक्ष द्वारा परीक्षा किए गए 37 साक्षियों में अभि. सा. 4, अभि. सा. 5 और अभि. सा. 15 प्रत्यक्षदर्शी साक्षी हैं किंतु वे अभियोजन पक्षकथन के प्रति पक्षद्रोही हो गए हैं । तारीख 17 अगस्त, 2002 को 9.30 बजे अपराह्न में मृतक प्रदीप और आहत उमेश की प्रथम चिकित्सा परीक्षा डा. लता (अभि. सा. 1) द्वारा की गई है । इस साक्षी ने यह प्रमाणित नहीं किया है कि कथन देने के लिए प्रदीप ठीक हालत में था । डा. बालकृष्ण (अभि. सा. 25) सुसंगत समय पर के. आर. अस्पताल जहां घटना के तत्काल पश्चात् मृतक प्रदीप को लाया गया था, के चिकित्सा विभाग में सहायक प्रोफेसर था । तारीख 17 अगस्त, 2002 को लगभग 9.40 बजे अपराह्न में, पी. एस. आई. कोदंदरम (अभि. सा. 36) ने अभि. सा. 25 को एक ज्ञापन दिया जिसमें यह कथन किया गया था कि प्रदीप नाम का एक रोगी अस्पताल में दाखिल कराया गया है और उसमें यह भी निवेदन किया गया था कि यह सत्यापित किया जाए कि रोगी कथन देने की स्थिति में है

---

[1] (2008) 10 एस. सी. सी. 450.

या नहीं । अभि. सा. 25 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया है कि 9.35 बजे अपराह्न में उसने रोगी प्रदीप को देखा था और उस समय उसे आपातकालीन उपचार के लिए ऑपरेशन थिएटर में लाया गया था । इस साक्षी ने यह भी अभिसाक्ष्य दिया है कि चिकित्सकों का एक दल उसका उपचार कर रहा था । इस साक्षी के अभिसाक्ष्य से यह सिद्ध नहीं होता है कि प्रदीप उसके उपचाराधीन था । प्रदीप का कथन कांस्टेबल (अभि. सा. 30) द्वारा अभिलिखित किया गया था और इस कांस्टेबल को पी. एस. आई. (अभि. सा. 36) ने बोल-बोलकर यह कथन अभिलिखित कराया था, इस बात से बहुत से प्रश्न सामने आते हैं । विचारण न्यायालय ने इसे महत्व नहीं दिया है । अभियोजन का यह पक्षकथन है कि अभि. सा. 30 ने पी. एस. आई. (अभि. सा. 36) द्वारा बोल-बोलकर बताए जाने पर कथन (प्रदर्श पी-22) अभिलिखित किया है । इस प्रकार, प्रदर्श पी-22 कथन देने वाले के वास्तविक शब्दों में नहीं है । विचारण न्यायालय ने इस पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए अभि. सा. 25, अभि. सा. 30 और अभि. सा. 36 के साक्ष्य तथा प्रदर्श पी-22 पर सावधानीपूर्वक विचार किया है । विचारण न्यायालय ने यह पाया है कि अभि. सा. 25 अपने परिसाक्ष्य में इस बात की पुष्टि करने में असफल रहा है कि वह उस समय मृतक प्रदीप का उपचार कर रहा था जब उसे अस्पताल में लाया गया था । इसके अतिरिक्त अभि. सा. 25 ने प्रदर्श पी-22 पर उल्लिखित समय के संबंध में की गई कांट-छांट (ओवर राइटिंग) को स्वीकार किया है । विचारण न्यायालय ने यह भी मत व्यक्त किया है कि प्रदीप के शरीर पर बहुत सी क्षतियां थीं जिनसे रक्त बह रहा था फिर भी अभि. सा. 25 ने इस संबंध में कुछ नहीं कहा है कि मृतक का कितना रक्त बह गया था ।

16. अभि. सा. 30 के परिसाक्ष्य पर विचार करने पर विचारण न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि उसकी प्रतिपरीक्षा में इस साक्षी ने यह स्वीकार किया है कि उसने प्रदीप के शब्दों में प्रदीप का कथन अभिलिखित नहीं किया था किंतु जैसे-जैसे अभि. सा. 36 ने उसे बोल-बोलकर बताया वैसे-वैसे उसने अभिलिखित किया । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 30 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया है कि जिस समय चिकित्सकों द्वारा प्रदीप का उपचार किया जा रहा था उस समय वह कक्ष में नहीं था ।

17. इसके पश्चात्, प्रदर्श पी-22 के संबंध में विचारण न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि गुंदा (अभियुक्त-3) और स्वामी (अभियुक्त-5) के नाम भिन्न रोशनाई से बाद में लिखे गए हैं ।

18. संपूर्ण साक्ष्य का अति विस्तार से परिशीलन करने के पश्चात्, विचारण न्यायालय का यह मत है कि प्रदर्श पी-22 विश्वसनीय प्रतीत नहीं होता है और उसकी विश्वसनीयता इस प्रकार सिद्ध नहीं की गई है कि न्यायालय का समाधान हो जाए । तदनुसार, विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अभियुक्तों की दोषसिद्धि प्रदर्श पी-22 और अभि. सा. 36, अभि. सा. 25 और अभि. सा. 30 के अभिसाक्ष्यों के आधार पर नहीं की जा सकती ।

19. मृत्युकालिक कथन इसलिए सत्य माना जाता है कि वह मृत्यु की ओर जाने वाले व्यक्ति द्वारा किया जाता है । यदि मृत्युकालिक कथन, कथन देने वाले के वास्तविक शब्दों में सीधे ही अभिलिखित न किया जाए और किसी अन्य व्यक्ति द्वारा बोल-बोलकर लिखाया जाए, तब हमारी राय में ऐसे कथन की सत्यता स्वयं संदिग्ध हो जाएगी और अभियोजन पक्ष को न्यायालय के समाधान के लिए यह स्पष्ट करना होगा कि कथन ठीक प्रकार अभिलिखित किया गया है । विचारण न्यायालय द्वारा अभि. सा. 25, अभि. सा. 30 और अभि. सा. 36 के साक्ष्य और इस तथ्य पर संचयी रूप से विचार किए जाने पर कि कथन अभिलिखित किए जाने के संबंध में ओवर राइटिंग की गई है और भिन्न रोशनाई से दो नाम जोड़े गए हैं, न्यायालय ने मृत्युकालिक कथन पर विश्वास करना उचित नहीं समझा और उसने अन्य किसी साक्ष्य के अभाव में अभियुक्तों को दोषमुक्त कर दिया । इन परिस्थितियों में, हमारी राय में यह नहीं कहा जा सकता है कि अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य के आधार पर विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया मत एक संभव मत नहीं है । अभियुक्त संदेह का लाभ पाने के हकदार हैं जो विचारण न्यायालय द्वारा ठीक ही दिया गया है ।

20. उच्च न्यायालय ने इसी साक्ष्य पर विचार करने पर भिन्न मत व्यक्त किया है और इस बात पर समुचित रूप से विचार किए बिना दोषमुक्ति के निर्णय में हस्तक्षेप किया है कि निर्दोषिता की उपधारणा विचारण न्यायालय के दोषमुक्ति के निर्णय द्वारा प्रबलित हुई है और प्रदर्श पी-22 तथा अभि. सा. 25, अभि. सा. 30 और उच्च न्यायालय ने इस पर भी विचार नहीं किया है कि अभि. सा. 36 के साक्ष्य की विश्वसनीयता के संबंध में विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया मत एक संभव मत है । उच्च न्यायालय ने दोषमुक्ति के निर्णय के विरुद्ध की गई अपील की सुनवाई करने के दौरान दोषमुक्ति के निर्णय को उलटने में सुस्थापित सिद्धांतों को ध्यान में नहीं रखा है ।

21. तदनुसार अपीलें मंजूर की जाती हैं । आक्षेपित निर्णय अपास्त किया जाता है । सेशन न्यायाधीश, त्वरित न्यायालय-1, मंडया के तारीख 28 सितंबर, 2004 के निर्णय को प्रत्यावर्तित किया जाता है । यदि अपीलार्थी अन्य किसी मामले में वांछित नहीं हैं तो उन्हें तत्काल छोड़ा जाए ।

अपीलें मंजूर की गईं ।

अस./अनू.

[2014] 3 उम. नि. प. 116

कृष्ण

बनाम

हरियाणा राज्य

16 मई, 2014

न्यायमूर्ति दीपक मिश्रा और न्यायमूर्ति एन. वी. रमण

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 376 और 506 – बलात्संग – अपीलार्थी के विरुद्ध बलात्संग का अपराध चिकित्सीय साक्ष्य तथा साक्षियों के साक्ष्य से साबित होना – निचले न्यायालयों द्वारा की गई दोषसिद्धि मान्य ठहराई गई ।

प्रस्तुत मामले में, यह अपील पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के तारीख 3 मार्च, 2011 को निर्णय और आदेश से उद्भूत हुई है जिसमें अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता, 1860 की धाराओं 376 और 506 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्धि करने वाले विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश, फरीदाबाद द्वारा पारित किए गए आदेश को मान्य ठहराया गया था । इस अपील को उद्भूत करने वाले तथ्य यह है कि अभियोक्त्री (अभि. सा. 10) खेतों में काम कर रहे अपने माता-पिता के लिए खाना लेकर जा रही थी, जब वह उसके खेतों के बीच सड़क से जा रही थी तब अपीलार्थी उसके पीछे से आया और उसे गालियां देना शुरू कर दिया था । जब उसने इसका विरोध किया तब अपीलार्थी ने उसे कब्जे में कर लिया और उसे धक्का दिया जिसके परिणामस्वरूप वह जमीन पर गिर गई । अपीलार्थी ने तब उसका मुंह दबा दिया और उसे बलपूर्वक निकट के अरहर के खेत में

ले गया और उसके साथ बलात्संग किया । मामले के दर्ज किए जाने के पश्चात् अन्वेषण प्रारंभ किया गया और अभियोक्त्री की तारीख 6 अक्तूबर, 2001 को ही चिकित्सीय जांच कराई गई थी । अभियुक्त-अपीलार्थी को अगले दिन गिरफ्तार किया गया था और उसकी भी चिकित्सीय जांच कराई गई थी । दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 164 के अधीन अभियोक्त्री के कथन को अभिलिखित करने के पश्चात् मामले की वस्तुएं न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला, मधुबन, करनाल भेजी गई थी और मामला सेशन न्यायालय के सुपुर्द किया गया था । तत्पश्चात् दंड संहिता की धाराओं 376 और 506 के अधीन अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप विरचित किए गए थे जिसने दोषी न होने का अभिवाक् किया था और विचारण किए जाने का दावा किया । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा प्रबलता से यह दलील दी गई है कि निचले न्यायालय अपीलार्थी की प्रतिरक्षा का मूल्यांकन करने में विफल रहे हैं जिसे मामले में मिथ्या से फंसाया गया था । इस न्यायालय का समाधान करने के लिए प्रयास किया गया है कि अपीलार्थी को मिथ्या से फंसाने के लिए अभियोक्त्री का एक प्रबल हेतुक था । अपीलार्थी द्वारा अभियोक्त्री के पिता की अवेक्षा में अभियोक्त्री के कुछ लड़कों के साथ अवैध संबंध बताए जाने पर उनके बीच कहा-सुनी हुई थी और अभियोक्त्री ने अपीलार्थी को यह चेतावनी दी थी कि वह एक मिथ्या मामले में उसे फंसाने के द्वारा बदला लेगी । उसने यह भी दलील दी कि निचले न्यायालयों ने अभियोक्त्री के कथन पर अवलंब लेने में त्रुटि कारित की है कि अपीलार्थी ने उसे दो बार धक्का दिया, उसका मुंह दबा दिया और उसे उसके दोनों हाथों को पकड़कर घसीटते हुए अरहर के सूखे खेत में ले गया और उसके साथ बलपूर्वक बलात्संग किया । उन्होंने यह दलील दी कि जब किसी लड़की पर ऐसा बलपूर्वक हमला किया जाता है, तब यह प्रत्याशा की जाती है कि उसके शरीर के किसी भाग पर कुछ किसी प्रकार की क्षति पहुंचेगी, किन्तु अभियोजन पक्षकथन पूर्णतया गढ़ा गया है क्योंकि यह अविश्वसनीय है कि अभिकथित बलपूर्वक बलात्संग के संपूर्ण कथन के बावजूद पीड़िता को कोई क्षति नहीं पहुंची थी और उसकी चिकित्सा रिपोर्ट से यह प्रकट है कि उसके शरीर पर कहीं भी क्षति का कोई बाह्य चिन्ह नहीं था । (पैरा 13)

दो आधार जिन पर अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दर्शित करने के लिए बल दिया गया है कि अभियुक्त द्वारा कोई अपराध

कारित नहीं किया गया है वह (i) चिकित्सीय साक्ष्य और (ii) अभियोक्त्री द्वारा मिथ्या से फंसाया जाना है । उनकी दलील का मूल्यांकन करने के लिए हमने डा. मीनू कपूर अभि. सा. 8 के साक्ष्य का परिशीलन किया है जिन्होंने रसायन परीक्षक की रिपोर्ट (प्रदर्श पीजे) पर अवलंब लेते हुए यह कथन किया है कि मानव वीर्य पीड़िता की कच्छी पर पाया गया था । इसके अतिरिक्त, डा. सुधीर खुराना अभि. सा. 2 (प्रदर्श पीए) के साक्ष्य के अनुसार अभियुक्त के दाहिने प्रबाहु की हड्डी पर क्षतियां थीं, बाएं हाथ और दाहिने कंधे दोनों पर सूजन और खरोंचें थीं और अभियुक्त के दाहिने पैर पर लंबी खरोंच थी । चिकित्सक ने यह मत व्यक्त किया कि यह क्षतियां 24 से 72 घंटों की अवधि के दौरान पहुंची थीं । यह सभी क्षतियां निःसंदेह अभियोक्त्री-पीड़िता के पक्षकथन का समर्थन करती हैं जिसने यह कथन किया कि हाथापाई में उसने अभियुक्त को काट लिया था । इसके अतिरिक्त, चिकित्सक अभि. सा. 2 ने भी यह कथन किया है कि उन्होंने ऐसा कुछ नहीं पाया था जो यह सूझाता हो कि अभियुक्त मैथुन नहीं कर सकता था । अभियुक्त द्वारा बलात्संग किए जाने का खंडन करने के लिए विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई अगली दलील कि अभियोक्त्री मैथुन की अभ्यस्त है और उसके शरीर पर हाल ही के बलपूर्वक मैथुन किए जाने या क्षतियों के कोई चिन्ह नहीं थे, यह भी सहायक नहीं हो सकते । प्रत्येक बलात्संग की पीड़िता से यह प्रत्याशा नहीं की जा सकती कि उसका पक्षकथन साबित करने के लिए उसके शरीर पर क्षतियां होनी चाहिए । चिकित्सा विशेषज्ञों के निष्कर्ष स्पष्ट रूप से यह साबित करते हैं कि पीड़िता के साथ बलात्संग किया गया था । विद्वान् काउंसेल द्वारा लिया गया अन्य आधार यह है कि अभियोक्त्री ने अपीलार्थी को मिथ्या से मामले में फंसाया है क्योंकि उसके पिता (प्रतिरक्षा साक्षी 1) ने अभियोक्त्री के पिता से यह शिकायत की थी कि वह कुछ लड़कों की सोहबत में इधर-उधर घूमती थी और इसलिए उसने यह धमकी दी थी कि वह उसके विरुद्ध शिकायत करने के लिए बदला लेने के उद्देश्य से अपीलार्थी को मिथ्या से मामले में फंसाएगी, किन्तु इस अभिवाक् का भी कोई आधार नहीं है । इस तथ्य को साबित करने के लिए विद्वान् काउंसेल ने अगली परिस्थिति पर अवलंब लिया है कि अभियुक्त की गिरफ्तारी के पश्चात् उसके पिता (प्रतिरक्षा साक्षी 1) ने पुलिस अधीक्षक को एक शिकायत की थी कि उसके पुत्र को मिथ्या से आलिप्त किया गया है जिस पर दो ग्रामवासियों यथा महेन्द्र लंबरदार और मामचंद वाल्मीकि द्वारा हस्ताक्षर किए गए थे । तथापि, इस तथ्य को साबित करने के लिए अभिलेख पर कोई

संपोषक साक्ष्य नहीं है और यहां तक कि उक्त दोनों व्यक्तियों की भी परीक्षा नहीं की गई है । अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई एक अन्य दलील यह है कि अभिकथित घटना के पश्चात् लड़की सीधे अपने घर गई थी और वहां से ही परिवाद दर्ज कराने के लिए पुलिस थाना गई थी और इसलिए बलात्संग के वर्णन पर विश्वास नहीं किया जा सकता है । न्यायालय इसमें कुछ भी अप्रायिक नहीं पाता है, कोई भी किसी बलात्संग पीड़िता से यह प्रत्याशा नहीं कर सकता कि वह सीधे पुलिस थाने जाए और वहां पर परिवाद दर्ज कराए । (पैरा 16 और 17)

परिस्थितियों की संपूर्णता को विचार में लेते हुए और संपूर्ण साक्ष्य जो कि चिकित्सकों के मतों और रसायन परीक्षा रिपोर्ट से समर्थित है का मूल्यांकन करने पर न्यायालय के सुविचारित मत में, अभियोजन पक्षकथन पर अविश्वास करने के लिए कुछ नहीं है कि अपीलार्थी ने बलात्संग और आपराधिक रूप से डराने-धमकाने के अपराधों को कारित किया था । इसलिए न्यायालय निचले न्यायालयों द्वारा दिए गए निर्णयों और आदेशों में कोई त्रुटि नहीं पाता है और इसलिए न्यायालय हस्तक्षेप करने के लिए कोई कारण नहीं पाता है । (पैरा 18)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2002 की दांडिक अपील सं. 1342.

पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ की एकल न्यायपीठ द्वारा 2003 की दांडिक अपील सं. 687 में तारीख 3 मार्च, 2011 को दिए गए निर्णय और आदेश से उद्भूत अपील ।

अपीलार्थी की ओर से	सर्वश्री सुनील वर्मा, पी. वी. रघुनंदन और रामेश्वर प्रसाद गोयल
प्रत्यर्थी की ओर से	सर्वश्री मंजीत सिंह, अपर महाधिवक्ता, विकास शर्मा और (सुश्री) नरेश बक्शी

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एन. वी. रमण ने दिया ।

न्या. रमण – यह अपील पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के तारीख 3 मार्च, 2011 को निर्णय और आदेश से उद्भूत हुई है जिसमें अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता, 1860 की धाराओं 376 और 506 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्धि करने वाले विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश, फरीदाबाद द्वारा पारित किए गए आदेश को मान्य ठहराया गया था ।

2. इस अपील को उद्भूत करने वाले तथ्य यह है कि अभियोक्त्री (अभि. सा. 10) खेतों में काम कर रहे अपने माता-पिता के लिए खाना लेकर जा रही थी, जब वह उसके खेतों के बीच सड़क से जा रही थी तब अपीलार्थी उसके पीछे से आया और उसे गालियां देना शुरू कर दिया था । जब उसने इसका विरोध किया तब अपीलार्थी ने उसे कब्जे में कर लिया और उसे धक्का दिया जिसके परिणामस्वरूप वह जमीन पर गिर गई । अपीलार्थी ने तब उसका मुंह दबा दिया और उसे बलपूर्वक निकट के अरहर के खेत में ले गया और उसके साथ बलात्संग किया ।

3. मामले के दर्ज किए जाने के पश्चात् अन्वेषण प्रारंभ किया गया और अभियोक्त्री की तारीख 6 अक्तूबर, 2001 को ही चिकित्सीय जांच कराई गई थी । अभियुक्त-अपीलार्थी को अगले दिन गिरफ्तार किया गया था और उसकी भी चिकित्सीय जांच कराई गई थी । दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 164 के अधीन अभियोक्त्री के कथन को अभिलिखित करने के पश्चात् मामले की वस्तुएं न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला, मधुबन, करनाल भेजी गई थी और मामला सेशन न्यायालय के सुपुर्द किया गया था । तत्पश्चात् दंड संहिता की धाराओं 376 और 506 के अधीन अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप विरचित किए गए थे जिसने दोषी न होने का अभिवाक् किया था और विचारण किए जाने का दावा किया ।

4. जबकि अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त के विरुद्ध अपने अभिकथनों को साबित करने के लिए कुल मिलाकर 12 साक्षियों की परीक्षा की वहां पर केवल दो प्रतिरक्षा साक्षी थे ।

5. डा. मीनू कपूर, चिकित्सा अधिकारी, बी. के. अस्पताल, फरीदाबाद (अभि. सा. 8) जिन्होंने अभियोक्त्री की चिकित्सीय जांच की, ने यह मत व्यक्त किया कि मैथुन किए जाने की संभावना थी, किन्तु अभियोक्त्री के शरीर पर कहीं भी कोई बाह्य क्षति का चिन्ह नहीं था । उन्होंने विचारण न्यायालय के समक्ष यह अभिसाक्ष्य दिया कि मानव वीर्य पीड़िता के निचले वस्त्रों पर पाया गया था ।

6. डा. सुधीर खुराना, अभि. सा. 2 जिन्होंने अभियुक्त-अपीलार्थी की परीक्षा की ने ऐसा कुछ नहीं पाया जिससे यह इंगित होता हो कि अभियुक्त मैथुन नहीं कर सकता था । उन्होंने भी अभियुक्त के दाहिने प्रबाहु, बाएं हाथ, दाहिने कंधे और दाहिनी टांग की हड्डियों पर क्षतियों की अवेक्षा की थी जो कि, प्रकृति में सामान्य हैं ।

7. पीड़िता के पिता अभि. सा. 11 ने अभियोजन पक्षकथन का समर्थन किया । उन्होंने अभिसाक्ष्य दिया कि अपनी पुत्री का शोर सुनकर वह घटनास्थल पर पहुंचे थे और उन्होंने अभियुक्त को भागते हुए देखा था । जब उन्होंने अभियुक्त को पकड़ने का प्रयास किया, तब वह दूर भाग गया था ।

8. विचारण न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी का पक्षकथन यह है कि अभियोक्त्री ने साशय उसे इस मामले में आलिप्त किया था क्योंकि वह उसके विरुद्ध वैयक्तिक दुर्भावना रखती थी क्योंकि वह अपने पिता (प्रतिरक्षा साक्षी 1) और एक अन्य व्यक्ति जिले सिंह (प्रतिरक्षा साक्षी 2) के साथ अभियोक्त्री के घर गया था और उसके पिता से शिकायत की थी कि वह कुछ लड़कों की बुरी संगत में पड़ी हुई थी और उसके पिता से उस पर नजर रखने के लिए कहा था । इसके परिणामस्वरूप उनके बीच कहा-सुनी हुई थी और तत्पश्चात् अभियोक्त्री ने उन्हें चेतावनी दी थी कि वह अपीलार्थी को एक मिथ्या मामले में फंसा देंगी ।

9. विचारण न्यायालय ने मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए विशेष रूप से न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-1) पर अवलंब लेते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त की दोषिता को साबित करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य प्रस्तुत किया था और तदनुसार दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया और पांच हजार रुपए के जुर्माने का संदाय करने जिसके संदाय में व्यतिक्रम करने पर एक वर्ष की अतिरिक्त अवधि का कठोर कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया था । दंड संहिता की धारा 506 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अपीलार्थी को एक वर्ष का कठोर कारावास भोगने और एक हजार रुपए के जुर्माने का संदाय करने जिसके संदाय में व्यतिक्रम किए जाने पर दो माह का अतिरिक्त कठोर कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया गया था । तथापि, दोनों दंडादेश साथ-साथ चलने का निदेश किया गया था ।

10. उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने अभियुक्त द्वारा फाइल की गई अपील पर चर्चा करते हुए उपर्युक्त अपराधों के लिए अपीलार्थी को दोषसिद्ध करने वाले विचारण न्यायालय के आदेश से पूर्णतया सहमति व्यक्त की । उच्च न्यायालय के समक्ष अभियुक्त ने यह दावा किया कि घटना की तारीख को वह किशोर अपराधी था और इसलिए उसे किशोर न्याय (बालकों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2000 के

उपबंधों का फायदा दिया जाना चाहिए । इसलिए उच्च न्यायालय ने मामले को किशोर न्याय बोर्ड को यह पता लगाने के लिए निर्दिष्ट किया कि क्या घटना के दिन अपीलार्थी किशोर था या नहीं । उच्च न्यायालय ने यह स्पष्ट किया कि यदि किशोर न्याय बोर्ड इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि अपीलार्थी एक किशोर था, तब वह उन उपबंधों से विनियमित होगा अन्यथा वह विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत दंडादेश को भोगेगा ।

11. किशोर न्याय बोर्ड, फरीदाबाद ने अभियुक्त-अपीलार्थी के मामले पर विचार किया और यह निष्कर्ष निकाला कि अभियुक्त उचित दस्तावेजी साक्ष्य से यह साबित करने में विफल रहा है कि घटना की तारीख को वह किशोर था और तदनुसार उसके किशोर अपराधी होने के अभिवाक् को नामंजूर किया ।

12. उच्च न्यायालय के विद्वान् काउंसेल एकल न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी अपील के माध्यम से इस न्यायालय के समक्ष आया है । इस न्यायालय ने तारीख 3 सितम्बर, 2012 को अपील के लिए विशेष इजाजत प्रदान करते हुए अपीलार्थी को जमानत पर रिहा किए जाने का निर्देश दिया ।

13. हमारे समक्ष अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा प्रबलता से यह दलील दी गई है कि निचले न्यायालय अपीलार्थी की प्रतिरक्षा का मूल्यांकन करने में विफल रहे हैं जिसे मामले में मिथ्या से फंसाया गया था । इस न्यायालय का समाधान करने के लिए प्रयास किया गया है कि अपीलार्थी को मिथ्या से फंसाने के लिए अभियोक्त्री का एक प्रबल हेतुक था । अपीलार्थी द्वारा अभियोक्त्री के पिता की अवेक्षा में अभियोक्त्री के कुछ लड़कों के साथ अवैध संबंध बताए जाने पर उनके बीच कहा-सुनी हुई थी और अभियोक्त्री ने अपीलार्थी को यह चेतावनी दी थी कि वह एक मिथ्या मामले में उसे फंसाने के द्वारा बदला लेगी । उसने यह भी दलील दी कि निचले न्यायालयों ने अभियोक्त्री के कथन पर अवलंब लेने में त्रुटि कारित की है कि अपीलार्थी ने उसे दो बार धक्का दिया, उसका मुंह दबा दिया और उसे उसके दोनों हाथों को पकड़कर घसीटते हुए अरहर के सूखे खेत में ले गया और उसके साथ बलपूर्वक बलात्संग किया । उन्होंने यह दलील दी कि जब किसी लड़की पर ऐसा बलपूर्वक हमला किया जाता है, तब यह प्रत्याशा की जाती है कि उसके शरीर के किसी भाग पर कुछ किसी प्रकार की क्षति पहुंचेगी, किन्तु अभियोजन पक्षकथन पूर्णतया गढ़ा गया है क्योंकि यह अविश्वसनीय है कि अभिकथित बलपूर्वक बलात्संग के संपूर्ण कथन के

बावजूद पीड़िता को कोई क्षति नहीं पहुंची थी और उसकी चिकित्सा रिपोर्ट से यह प्रकट है कि उसके शरीर पर कहीं भी क्षति का कोई बाह्य चिन्ह नहीं था ।

14. विद्वान् काउंसेल ने अंत में यह दलील दी कि साक्ष्य में अनेक कमियां थीं और सुधार किए गए थे, चिकित्सीय साक्ष्य के साथ पीड़िता के कतिपय महत्वपूर्ण कथनों की कोई संपुष्टि नहीं की गई थी और अभियोजन अपने पक्षकथन को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने में विफल रहा है । इस सबके बावजूद विचारण न्यायालय और इसी भांति उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की दोषसिद्धि और उसे दंडादिष्ट किया और इसलिए आक्षेपित निर्णय अपास्त किया जाना चाहिए ।

15. दूसरी ओर प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल ने निचले न्यायालयों द्वारा व्यक्त किए गए मतों का समर्थन किया है और यह दलील दी है कि इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कोई थोड़ा सा भी संदेह नहीं है कि अपीलार्थी ने घोर अपराध कारित किया है और उसे निचले न्यायालयों द्वारा सही तौर पर दंडित किया गया है ।

16. दो आधार जिन पर अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दर्शित करने के लिए बल दिया गया है कि अभियुक्त द्वारा कोई अपराध कारित नहीं किया गया है वह (i) चिकित्सीय साक्ष्य और (ii) अभियोक्त्री द्वारा मिथ्या से फंसाया जाना है । उनकी दलील का मूल्यांकन करने के लिए हमने डा. मीनू कपूर अभि. सा. 8 के साक्ष्य का परिशीलन किया है जिन्होंने रसायन परीक्षक की रिपोर्ट (प्रदर्श पीजे) पर अवलंब लेते हुए यह कथन किया है कि मानव वीर्य पीड़िता की कच्छी पर पाया गया था । इसके अतिरिक्त, डा. सुधीर खुराना अभि. सा. 2 (प्रदर्श पीए) के साक्ष्य के अनुसार अभियुक्त के दाहिने प्रबाहु की हड्डी पर क्षतियां थीं, बाएं हाथ और दाहिने कंधे दोनों पर सूजन और खरोंचें थीं और अभियुक्त के दाहिने पैर पर लंबी खरोंच थी । चिकित्सक ने यह मत व्यक्त किया कि यह क्षतियां 24 से 72 घंटों की अवधि के दौरान पहुंची थीं । यह सभी क्षतियां निःसंदेह अभियोक्त्री-पीड़िता के पक्षकथन का समर्थन करती हैं जिसने यह कथन किया कि हाथापाई में उसने अभियुक्त को काट लिया था । इसके अतिरिक्त, चिकित्सक अभि. सा. 2 ने भी यह कथन किया है कि उन्होंने ऐसा कुछ नहीं पाया था जो यह सूझाता हो कि अभियुक्त मैथुन नहीं कर सकता था । अभियुक्त द्वारा बलात्संग किए जाने का खंडन करने के लिए विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई अगली दलील कि अभियोक्त्री मैथुन की

अभ्यस्त है और उसके शरीर पर हाल ही के बलपूर्वक मैथुन किए जाने या क्षतियों के कोई चिन्ह नहीं थे, यह भी सहायक नहीं हो सकते । प्रत्येक बलात्संग की पीड़िता से यह प्रत्याशा नहीं की जा सकती कि उसका पक्षकथन साबित करने के लिए उसके शरीर पर क्षतियां होनी चाहिए । चिकित्सा विशेषज्ञों के निष्कर्ष स्पष्ट रूप से यह साबित करते हैं कि पीड़िता के साथ बलात्संग किया गया था ।

विद्वान् काउंसेल द्वारा लिया गया अन्य आधार यह है कि अभियोक्त्री ने अपीलार्थी को मिथ्या से मामले में फंसाया है क्योंकि उसके पिता (प्रतिरक्षा साक्षी 1) ने अभियोक्त्री के पिता से यह शिकायत की थी कि वह कुछ लड़कों की सोहबत में इधर-उधर घूमती थी और इसलिए उसने यह धमकी दी थी कि वह उसके विरुद्ध शिकायत करने के लिए बदला लेने के उद्देश्य से अपीलार्थी को मिथ्या से मामले में फंसाएगी, किन्तु इस अभिवाक् का भी कोई आधार नहीं है । इस तथ्य को साबित करने के लिए विद्वान् काउंसेल ने अगली परिस्थिति पर अवलंब लिया है कि अभियुक्त की गिरफ्तारी के पश्चात् उसके पिता (प्रतिरक्षा साक्षी 1) ने पुलिस अधीक्षक को एक शिकायत की थी कि उसके पुत्र को मिथ्या से आलिप्त किया गया है जिस पर दो ग्रामवासियों यथा महेन्द्र लंबरदार और मामचंद वाल्मीकि द्वारा हस्ताक्षर किए गए थे । तथापि, इस तथ्य को साबित करने के लिए अभिलेख पर कोई संपोषक साक्ष्य नहीं है और यहां तक कि उक्त दोनों व्यक्तियों की भी परीक्षा नहीं की गई है ।

17. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई एक अन्य दलील यह है कि अभिकथित घटना के पश्चात् लड़की सीधे अपने घर गई थी और वहां से ही परिवाद दर्ज कराने के लिए पुलिस थाना गई थी और इसलिए बलात्संग के वर्णन पर विश्वास नहीं किया जा सकता है । हम इसमें कुछ भी अप्रायिक नहीं पाते हैं, कोई भी किसी बलात्संग पीड़िता से यह प्रत्याशा नहीं कर सकता कि वह सीधे पुलिस थाने जाए और वहां पर परिवाद दर्ज कराए ।

18. परिस्थितियों की संपूर्णता को विचार में लेते हुए और संपूर्ण साक्ष्य जो कि चिकित्सकों के मतों और रसायन परीक्षा रिपोर्ट से समर्थित है का मूल्यांकन करने पर हमारे सुविचारित मत में, अभियोजन पक्षकथन पर अविश्वास करने के लिए कुछ नहीं है कि अपीलार्थी ने बलात्संग और आपराधिक रूप से डराने-धमकाने के अपराधों को कारित किया था । इसलिए हम निचले न्यायालयों द्वारा दिए गए निर्णयों और आदेशों में कोई त्रुटि नहीं पाते हैं और इसलिए हम हस्तक्षेप करने के लिए कोई कारण नहीं पाते हैं ।

19. अपीलार्थी का किशोर होने का अभिवाक् इस न्यायालय के समक्ष नहीं उठाया गया है ।

20. अपील विफल होती है और तदनुसार खारिज की जाती है ।

21. अपीलार्थी इस न्यायालय के तारीख 3 सितम्बर, 2012 के आदेश को देखते हुए जमानत पर है । उसके जमानत बंधपत्र रद्द किए जाते हैं और उसे शेष दंडादेश भोगने के लिए तुरंत ही अभिरक्षा में लिया जाए ।

अपील खारिज की जाती है ।

अनू.

[2014] 3 उम. नि. प. 125

ललित कुमार यादव उर्फ **कुरी**

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

25 जुलाई, 2014

न्यायमूर्ति ए. के. पटनायक और न्यायमूर्ति सुधांशु ज्योति मुखोपाध्याय

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302, 376 और 511 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 3, 25, 26 और 27] – बलात्संग का प्रयत्न और हत्या – पारिस्थितिक साक्ष्य – हेतु – अभियुक्त द्वारा घटना से कुछ दिन पूर्व मृतका से छेड़छाड़ किया जाना – स्नीफर डॉग की सहायता से अभियुक्त की खोज किया जाना – अभियुक्त के बताने पर उसके मकान से हत्या करने के लिए प्रयुक्त आयुध और रक्तरंजित वस्त्रों की बरामदगी होना – सभी परिस्थितियों से यह साबित होना कि वह अभियुक्त ही था जिसने मृतका के साथ बलात्संग करने का प्रयत्न किया और सफल नहीं होने पर उसकी हत्या कर दी, इसलिए उसकी दोषसिद्धि मान्य ठहराई गई ।

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302, 376 और 511 – बलात्संग का प्रयत्न और हत्या – मृत्यु दंडादेश – उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि – अभियुक्त-अपीलार्थी की कोई आपराधिक पृष्ठभूमि न होने,

उसकी अल्पायु, सुधरने की संभाव्यता, समाज के लिए खतरा न होने और यह मामला "विरल से विरलतम" प्रवर्ग के अंतर्गत नहीं आने पर मृत्यु दंडादेश कायम नहीं रखा जा सकता तथा इसे आजीवन कारावास में परिवर्तित किया गया ।

इत्तिलाकर्ता रामचन्द्र चौरसिया और उसकी पत्नी तारीख 23 फरवरी, 2004 को अपने खेत गए हुए थे । जब वे अपराह्न में 2.30 बजे अपने घर वापस आए, तो उनकी पुत्री गुड्डी द्वारा उन्हें यह बताया गया कि कुमारी "एक्स" (उनकी एक अन्य पुत्री) अपराह्न में 1.30 बजे उन्हें खेत से बुलाने गई थी । परिवार के सभी सदस्यों ने काफी देर तक कुमारी "एक्स" के वापस आने की प्रतीक्षा की किंतु जब वह अपराह्न के 4.00 बजे तक वापस नहीं आई तो रामचन्द्र चौरसिया और उसकी पत्नी दोनों चिंतित होकर अपनी पुत्री की तलाश में निकले । जब वे खेतों से होकर जा रहे थे, तो विश्वनाथ नामक व्यक्ति के भू-खंड में अपनी पुत्री कुमारी "एक्स" को रक्त से लथपथ मृत पड़े हुए देखकर वे स्तब्ध रह गए । रामचन्द्र चौरसिया ने सतरीख पुलिस थाने में एक लिखित रिपोर्ट दाखिल की, जिसके आधार पर मामला दर्ज किया गया और उसके पश्चात् थाना अधिकारी ने अन्वेषण का कार्यभार संभाला और तुरंत कार्रवाई शुरू की । उसने घटनास्थल का दौरा किया और शीघ्र पदचिह्नों की गंध सूंघने वाला कुत्ता (स्नीफर डॉग) बुलाया । स्नीफर डॉग जर्मन शेफर्ड प्रजाति का एक प्रशिक्षित कुत्ता था और जिसने पहले भी बहुत से अपराधों से प्रदा उठाने में सहायता की थी, ने घटनास्थल पर शव के आस-पास के सभी महत्वपूर्ण स्थलों को सूंघा और उसी गंद की लीक के पीछे-पीछे गया और वह सीधा अभियुक्त-अपीलार्थी के मकान पर पहुंचा । अभियुक्त-अपीलार्थी और उसका भाई कंबल ओढ़कर अपने मकान में सो रहे थे । स्नीफर डॉग अभियुक्त-अपीलार्थी के कंबल पर भोंका, जिसे तुरंत पुलिस द्वारा काबू में कर लिया गया । अगले दिन, अर्थात् 24 फरवरी, 2004 को, अन्वेषक अधिकारी ने अभियुक्त-अपीलार्थी के बताने पर रक्त से सना अभियुक्त-अपीलार्थी का बनियान और एक गमछा तथा अपराध कारित करने में प्रयुक्त हंसिया भी बरामद किया । रसायन परीक्षक ने तीनों बरामद वस्तुओं का परीक्षण करने पर यह पाया कि उक्त सभी अपराध में आलिप्त करने वाली वस्तुओं पर रक्त लगा हुआ था । घटनास्थल के दृश्य से यह प्रकट था कि लड़की की सलवार का नाड़ा खोला गया था और सलवार को नीचे खिसकाया गया था और वह नग्नावस्था में पाई गई थी और सारे शरीर पर हिंसा के भी चिह्न थे जिससे यह उपदर्शित होता है कि उसके साथ बलात्संग करने का क्रूर

प्रयत्न किया गया था, फिर भी डाक्टर ने यह पाया कि लड़की के साथ बलात्संग नहीं किया गया था । अन्वेषक अधिकारी ने सभी सुसंगत साक्षियों से परिप्रश्न करने, मरणोत्तर रिपोर्ट सहित सुसंगत रिपोर्टों को प्राप्त करने के पश्चात् अन्वेषण पूर्ण किया और अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप पत्र प्रस्तुत किया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियोजन के पक्षकथन और उसके समर्थन में प्रस्तुत किए गए साक्ष्य का अवलंब लेते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि अभियुक्त-अपीलार्थी भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और धारा 511 के साथ पठित धारा 376 के अधीन दोषी है और फिर भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए मृत्यु दंड और भारतीय दंड संहिता की धारा 511 के साथ पठित धारा 376 के अधीन अपराध के लिए पांच वर्ष का कठोर कारावास भोगने का दंडादेश दिया । उच्च न्यायालय ने निर्देश पर मृत्यु दंडादेश की अभिपुष्टि की । अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपील की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा मृत्यु दंडादेश को आजीवन कारावास में परिवर्तित करके अपील भागतः मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – प्रस्तुत मामले में अभियुक्त के बताने पर तख्त (चारपाई) के नीचे से "गमछा" और "बनियान" की बरामदगी एक महत्वपूर्ण पहलू है जो अभियुक्त को अपराध से संपृक्त करता है । रसायनिक परीक्षक और सीरम-विज्ञानी की रिपोर्ट के अनुसार, अभियुक्त के "गमछा" और "बनियान" पर भी रक्त पाया गया था । इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि हत्या कारित करने के समय अभियुक्त ने "गमछा" और "बनियान" पहना हुआ था और उसके पश्चात् उसने इन्हें तख्त के नीचे छिपा दिया था । इसलिए अपीलार्थी की ओर से दी गई पूर्वोक्त दलील कि वस्त्रों अर्थात् गमछा और बनियान की अभिकथित बरामदगी से भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 की आज्ञा का समाधान नहीं होता है, कायम नहीं रखी जा सकती है । वर्तमान मामले में, अन्वेषण के लिए स्नीफर डॉग की सेवाएं ली गई थीं । उक्त कुत्ते ने अभियुक्त को खोज निकाला था और उसे घटना के अगले दिन सायंकाल में औपचारिक रूप से गिरफ्तार किया गया था । अन्वेषक अधिकारी, अशोक कुमार यादव (अभि. सा. 10) ने अब्दुल लयास खान (अभि. सा. 4) के इस साक्ष्य की संपुष्टि की कि "राजा" स्नीफर डॉग घटनास्थल से गंध उठाने के पश्चात् गंध की लीक पर चलते हुए अभियुक्त के मकान पर पहुंचा था । उल्लेखनीय सुसंगत बात यह है कि अभियुक्त को इस आधार पर दोषसिद्ध नहीं किया गया है कि स्नीफर डॉग पदचिह्नों की लीक पर चलते हुए अभियुक्त के मकान पर गया था और

उस पर भोंका था । कुत्ते के लीक चाल के साक्ष्य से केवल यह दर्शित होता है कि अभियुक्त को कैसे गिरफ्तार किया गया था । विचारण न्यायालय और अपील न्यायालय ने अभियुक्त के हेतु पर विचार किया था । रामचन्द्र चौरसिया (अभि. सा. 1) ने अपने साक्ष्य में यह उजागर किया कि घटना की तारीख से कुछ दिन पूर्व अभियुक्त ने उसकी पुत्री के साथ छेड़खानी की थी और उसे धमकी भी दी थी । उसकी पुत्री कुमारी "एक्स" ने अभियुक्त के दुराचार के बारे में अपने चचेरे भाई अशोक कुमार को शिकायत की थी और अशोक कुमार ने अभियुक्त को इसके लिए फटकार लगाई थी । अशोक कुमार की बाद में मृत्यु हो गई किंतु लड़की के पिता का साक्ष्य अत्यंत विश्वसनीय और विश्वासप्रद है । उपर्युक्त घटना अभियुक्त के हेतु को स्पष्ट रूप से प्रतिबिम्बित करती है । अभियोजन पक्ष अभिलेख पर यह साक्ष्य लाया है कि मृतका की सलवार का नाड़ा खुला हुआ पाया गया था और सलवार को नीचे खिसकाया गया था । जब उसे मृत पाया गया था, वह नंगी पड़ी हुई थी । घटनास्थल के दृश्य से यह उपदर्शित होता है कि मृतका की सलवार को उसकी लज्जा भंग करने की दृष्टि से नीचे खिसकाया गया था । उसके दुपट्टे का एक भाग उसके मुंह में ठूंसा हुआ पाया गया था ताकि वह चिल्ला न सके । दुपट्टे का अन्य भाग गर्दन के विदीर्ण घाव में पाया गया था जिससे कि रक्त सोखा जा सके । मृतका की चप्पलें कुछ दूरी पर पड़ी हुई थीं । गेहूं के पौधे पैरों के नीचे कुचले हुए पाए गए थे जिससे हिंसा और विपदग्रस्त तथा हमलावर के बीच हाथापाई उपदर्शित होती है । लड़की के साथ छेड़खानी की घटना से यह उपदर्शित होता है कि अभियुक्त उससे संभोग करना चाहता था और इसी पृष्ठभूमि के चलते उसने लड़की के साथ बलपर्वूक बलात्संग करने का प्रयत्न किया । यह प्रतीत होता है कि लड़की साहसी और दिलेर थी और उसने अभियुक्त के बलपूर्वक प्रयत्न का विरोध किया था और इसी बात से अभियुक्त क्रुद्ध और प्रकोपित हुआ जिसके फलस्वरूप उसने ऐसा जघन्य कृत्य किया । चूंकि अभियुक्त की दोषिता को साबित करने के लिए कोई प्रत्यक्ष साक्ष्य नहीं है इसलिए विचारण न्यायालय और अपील न्यायालय ने उन परिस्थितियों पर विचार किया जो अभियुक्त की दोषिता को इंगित करती है । स्वीकृततः, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में किसी व्यक्ति को नामित नहीं किया गया था किंतु इस घटना का उल्लेख करते हुए कि कुमारी "एक्स" की हत्या हो गई है, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दी गई थी । चूंकि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में किसी व्यक्ति को नामित नहीं किया गया था, इसलिए अन्वेषक अधिकारी ने डॉग स्कवाड की सहायता ली और कुत्ते का

संचालक अब्दुल लयास खान (अभि. सा. 4) कुत्ते के साथ आया । कुत्ते द्वारा पदचिह्न खोजने (डॉग ट्रेकिंग) की कार्यवाही की गई और कुत्ते ने अभियुक्त को खोज निकाला । उक्त तथ्य विवादग्रस्त नहीं है । अभियुक्त ने, जिसे इसके पश्चात् अभिरक्षा में लिया गया था, अपराध कारित करने के संबंध में कथन किया । यद्यपि वह कथन ग्राह्य नहीं है, तो भी उसके बताने पर दरांती तथा रक्तरंजित कपड़े बरामद किए गए थे । रिपोर्ट से यह साबित होता है कि दरांती पर रक्त लगा हुआ था । डाक्टर ने यह कथन किया है कि विपदग्रस्त को पहुंची क्षति बरामद किए गए आयुध से कारित की जा सकती है, जिससे यह सिद्ध होता है कि उक्त आयुध हत्या कारित करने में प्रयुक्त किया गया था । विपदग्रस्त के पिता, रामचन्द्र चौरसिया (अभि. सा. 1) ने यह कथन किया है कि पहले भी अभियुक्त ने उसकी पुत्री कुमारी "एक्स" के साथ छेड़खानी की थी जिसके लिए उसके भतीजे अशोक कुमार ने अभियुक्त को डांटा था । राम प्रकाश (अभि. सा. 3) ने, यद्यपि वह पक्षद्रोही हो गया था, यह कथन किया था कि अभियुक्त ने उससे यह संस्वीकृति की थी कि चूंकि लड़की ने उससे लैंगिक संबंध बनाने से इनकार कर दिया था इसलिए उसने उसकी हत्या कर दी । यद्यपि इस कथन का अभियुक्त को दोषी ठहराने के लिए स्वतंत्रतापूर्वक अवलंब नहीं लिया जा सकता है, किंतु साक्ष्य की अन्य कड़ी से केवल एक निष्कर्ष अर्थात् अभियुक्त के विरुद्ध निष्कर्ष निकलता है । हत्या के स्थल से "दिल" बने हुए और "आई लव यू" शब्द लिखे हुए रूमाल की बरामदगी से यह सिद्ध होता है कि किसी व्यक्ति की उससे निकटता थी । उसके शरीर के निचले भाग के वस्त्र "सलवार" की स्थिति से यह सिद्ध होता है कि उस व्यक्ति ने लड़की के साथ संभोग करने की कोशिश की थी और लड़की की अंगुलियों पर पहुंची क्षतियों से भी यह सिद्ध होता है कि उसने कुछ न कुछ विरोध किया था । इन परिस्थितियों से भी यह निष्कर्ष निकलता है कि व्यक्ति, जो लड़की की लज्जा भंग करने में सफल नहीं हो सका, तो उसने उसकी हत्या कर दी । इसके प्रतिकूल कोई अन्य साक्ष्य नहीं है । इसके अतिरिक्त, यह सुझाव देने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है कि मृतका के पिता की किसी व्यक्ति के साथ कोई दुश्मनी या विद्वेष था जिस पर हत्या कारित करने का संदेह किया जा सके । इन सभी परिस्थितियों से यह साबित होता है कि कोई और नहीं अपितु वह अभियुक्त ही था जिसने बलात्संग करने का प्रयत्न किया था और मृतका कुमारी "एक्स" की हत्या की थी । (पैरा 30 और 34)

वर्तमान मामले में, दंडोदश की मात्रा के प्रश्न पर अपीलार्थी की ओर से दी गई दलील यह है कि अभियुक्त अपराध कारित करने के समय अल्पायु अर्थात् 21 वर्ष का था, उसका मृतका की हत्या करने का कोई आशय नहीं था और उसकी कोई पूर्व आपराधिक पृष्ठभूमि नहीं है । वर्तमान मामले में, पारिस्थितिक साक्ष्य से केवल यह निष्कर्ष निकलता है कि अपीलार्थी ने बलात्संग करने का प्रयत्न किया था और विरोध होने पर उसने मृतका की हत्या कर दी । घटना के समय अपीलार्थी की आयु लगभग 21 वर्ष थी । प्रारंभ में जब मृत्यु दंडादेश की पुष्टि का मामला उच्च न्यायालय के दो न्यायाधीशों द्वारा सुना गया था तब उनकी अलग-अलग राय थी और एक न्यायाधीश ने मृत्यु दंडादेश की पुष्टि की जबकि दूसरे न्यायाधीश ने अपीलार्थी को दोषमुक्त कर दिया । वह दूसरी न्यायपीठ थी जिसने मृत्यु दंडादेश की अभिपुष्टि की । अभियोजन का यह पक्षकथन नहीं है कि अपीलार्थी को सुधारा नहीं जा सकता है । वास्तव में, उसके सुधरने की संभाव्यता से इनकार नहीं किया जा सकता है । अपीलार्थी की कोई आपराधिक पृष्ठभूमि नहीं है । वर्तमान मामले के तथ्यों पर विभिन्न सिद्धांतों को लागू करने पर न्यायालय की यह राय है कि अभियुक्त की आयु पर विचार करते हुए उसके सुधरने की संभाव्यता से इनकार नहीं किया जा सकता है । उसे समाज के लिए खतरे की संज्ञा नहीं दी जा सकती है । इसके अतिरिक्त, यह मामला "विरल से विरलतम" प्रवर्ग के अंतर्गत नहीं आता है । इसलिए यह न्यायालय मृत्यु दंडादेश को कायम नहीं रख सकता है । पूर्वोक्त कारणों से यह न्यायालय अभियुक्त ललित कुमार यादव **उर्फ** कुरी के मृत्यु दंडादेश को आजीवन कारावास में परिवर्तित करता है, किंतु दोषसिद्धि और दंडादेश के शेष भाग की अभिपुष्टि करता है । (पैरा 42, 46, 47 और 48)

अवलंबित निर्णय

		पैरा
[2013]	(2013) 5 एस. सी. सी. 546 : **शंकर किशनराव खाडे** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	40
[2012]	(2012) 4 एस. सी. सी. 257 : **रामनरेश और अन्य** बनाम **छत्तीसगढ़ राज्य** ;	41
[2010]	(2010) 9 एस. सी. सी. 1 : **अतबीर** बनाम **राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली सरकार** ;	39

[2009]	(2009) 6 एस. सी. सी. 498 : **संतोष कुमार सतीशभूषण बरियार** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	37
[2008]	(2008) 5 एस. सी. सी. 697 : **दिनेश बोर्थाकुर** बनाम **असम राज्य** ;	33
[2004]	(2004) 10 एस. सी. सी 657 : **अंतर सिंह** बनाम **राजस्थान राज्य** ;	27
[2002]	(2002) 2 एस. सी. सी. 490 : **पांडुरंग कालु पाटिल** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	28
[2002]	ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 3164 : **बोध राज** उर्फ **बोधा और अन्य** बनाम **जम्मू-कश्मीर राज्य** ;	29
[2001]	(2001) 6 एस. सी. सी. 205 : **गाडे लक्ष्मी मंगाराजू** उर्फ **रमेश** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** ;	32
[1994]	(1994) 4 एस. सी. सी. 220 : **धनंजय चटर्जी** बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य** ;	38, 44, 45
[1983]	[1983] 1 उम. नि. प. 1136 = (1980) 2 एस. सी. सी. 684 : **बच्चन सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** ;	35, 36, 46
[1983]	[1983] 4 उम. नि. प. 215 = (1983) 3 एस. सी. सी. 470 : **माछी सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** ;	36, 46
[1969]	(1969) 2 एस. सी. सी. 234 : **अब्दुल रज़ाक मुर्तजा दफेदार** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ।	31

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2006 की दांडिक अपील सं. 1022.

2005 की दांडिक अपील सं. 252 और 384 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के तारीख 21 अगस्त, 2006 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से	श्री प्रणेश
प्रत्यर्थी की ओर से	सर्वश्री रतनाकर दास और गौरव ढींगरा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति सुधांशु ज्योति मुखोपाध्याय ने दिया ।

न्या. मुखोपाध्याय – यह अपील 2005 के मृत्यु दंडादेश के निर्देश सं. 1 सहित कारागार से की गई 2005 की दांडिक अपील सं. 252 और 384 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय की लखनऊ स्थित न्यायपीठ द्वारा तारीख 11 अगस्त, 2006 को पारित किए गए आक्षेपित सामान्य निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित सामान्य निर्णय द्वारा अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई अपील को खारिज करते हुए, कुमारी "एक्स" (विपदग्रस्त – मूल नाम प्रकट नहीं किया गया है) की हत्या करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन कारित अपराध के लिए विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित मृत्यु दंडादेश की अभिपुष्टि करते हुए निर्देश का उत्तर दिया । उच्च न्यायालय ने कुमारी "एक्स", आयु 18 वर्ष, के साथ बलात्संग का प्रयत्न करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 511 के साथ पठित धारा 376 के अधीन भी अपीलार्थी के विरुद्ध पारित दोषसिद्धि और दंडादेश की भी अभिपुष्टि की और उसे तद्धीन पांच वर्ष का कठोर कारावास भोगने का दंडोदश दिया ।

2. प्रारंभ में अपील इलाहाबाद उच्च न्यायालय की लखनऊ न्यायपीठ की खंड न्यायपीठ द्वारा सुनी गई और दलीलों की समाप्ति के पश्चात् माननीय न्यायाधीशों ने अपने-अपने निर्णय सुनाए, किंतु उनकी अलग-अलग राय थी; एक माननीय न्यायाधीश ने विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित दोषसिद्धि और दंडादेश के आदेश की अभिपुष्टि की और दूसरे माननीय न्यायाधीश ने विचारण न्यायालय के संपूर्ण निर्णय को उलट दिया और अभियुक्त-अपीलार्थी को दोनों धाराओं के अधीन पूर्ण रूप से दोषमुक्त कर दिया । इसलिए मामला दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 392 के अधीन तीसरे न्यायाधीश को निर्दिष्ट किया गया, जिन्होंने पक्षकारों को सुनने और साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् तारीख 11 अगस्त, 2006 के आक्षेपित निर्णय द्वारा अपीलार्थी और उसकी ओर से एक अन्य द्वारा फाइल की गई अपीलों को खारिज कर दिया । विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को कायम रखा गया और मृत्यु दंडादेश की शास्ति की पुष्टि करते हुए निर्देश का उत्तर दिया गया ।

3. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने अपीलाधीन निर्णय को चुनौती देते हुए, अन्य बातों के साथ-साथ, निम्नलिखित दलीलें दीं :–

(i) अभियोजन पक्ष प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराए जाने के तथ्य को साबित करने के लिए कोई साक्षी पेश करने में असफल रहा है । इस तथ्य को विचार में लाए बिना भी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट पूर्व-दिनांकित है ।

(ii) राम चन्द्र चौरसिया (अभि. सा. 1) एक अत्यधिक हितबद्ध साक्षी है और केवल अपीलार्थी को दोषसिद्ध कराने के प्रयोजन के लिए ही कठघरे में आया था । अभि. सा. 1 के कथन की संपुष्टि किसी व्यक्ति द्वारा नहीं की गई है यद्यपि इसके लिए साक्षी उपलब्ध थे ।

(iii) श्रीराम (अभि. सा. 9), जिसे बरामदगी ज्ञापन को साबित करने के लिए पेश किया गया था, एक स्वतंत्र साक्षी न होकर एक हितबद्ध साक्षी है जो कि अभि. सा. 1 के भाई का दामाद है ।

(iv) जिस 'पोलीथिन के थैले' में 'दरांती' को लपेटा हुआ था, उसे अन्वेषक अधिकारी द्वारा बरामदगी स्थल से मुहरबंद किए बिना लिया गया था ।

(v) 'बनियान' और 'तौलिया' वस्त्रों की अभिकथित बरामदगी से साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 की आज्ञा का समाधान नहीं होता है । इसलिए आरोप को साबित करने के लिए रसायन परीक्षक के निष्कर्ष का कोई महत्व नहीं है ।

(vi) स्नीफर डॉग (पदचिह्नों को सूंघने वाला कुत्ता) द्वारा की गई शनाख्त को अपीलार्थी के दोष को सिद्ध करने के प्रयोजन के लिए साक्ष्य के रूप में नहीं लिया जा सकता है ।

4. इससे पूर्व कि हम उपरोक्त दलीलों के गुणागुण पर चर्चा करने के लिए अग्रसर हों, यह वांछनीय है कि अभियोजन के पक्षकथन और अभिलेख के साक्ष्य का उल्लेख किया जाए, जिसका सारांश निम्नलिखित है ।

5. तारीख 23 फरवरी, 2004 को राम चन्द्र चौरसिया (अभि. सा. 1) और उसकी पत्नी, निवासी गांव गोकुलपुर, पुलिस थाना सतरीख, जिला बाराबंकी अपने खेत गए हुए थे । जब वे अपराह्न में 2.30 बजे अपने घर वापस आए, तो उनकी पुत्री गुड्डी द्वारा उन्हें यह बताया गया कि उनकी

एक अन्य पुत्री कुमारी "एक्स" अपराह्न में 1.30 बजे उन्हें बुलाने गई थी क्योंकि उस दिन रामचन्द्र चौरसिया के साले का पुत्र गोविंद उनके घर आया था, उसकी दोनों पुत्रियों ने यह उचित समझा कि अपने माता-पिता को सूचित किया जाए और इसी पृष्ठभूमि में कुमारी "एक्स" अपने माता-पिता को सूचित करने और बुलाने के लिए गई थी । परिवार के सभी सदस्यों ने काफी देर तक कुमारी "एक्स" के वापस आने की प्रतीक्षा की किंतु जब वह अपराह्न के 4.00 बजे तक वापस नहीं आई तो रामचन्द्र चौरसिया (अभि. सा. 1) और विद्यावती दोनों चिंतित होकर अपनी पुत्री की तलाश में निकले । जब वे खेतों से होकर जा रहे थे, तो विश्वनाथ नामक व्यक्ति के भू-खंड में अपनी पुत्री कुमारी "एक्स" को रक्त से लथपथ मृत पड़े हुए देखकर वे स्तब्ध रह गए । रामचन्द्र चौरसिया (अभि. सा. 1) ने सतरीख पुलिस थाने में एक लिखित रिपोर्ट (प्रदर्श क-1) दाखिल की, जिसके आधार पर मामला दर्ज किया गया और उसके पश्चात् थाना अधिकारी श्री अशोक कुमार यादव ने अन्वेषण का कार्यभार संभाला और तुरंत कार्रवाई शुरू की । उसने घटनास्थल का दौरा किया और शीघ्र डॉग-स्कवाड भेजा । अपराध अन्वेषण विभाग का एक निरीक्षक, जो "राजा" नामक एक स्नीफर डॉग का भारसाधक था, सायंकाल में घटनास्थल पर पहुंचा । उसने "राजा" को घटनास्थल से अपराधी की गंद उठाने के लिए कहा और फिर अपराध और अपराधी के कुछ सुराग का पता लगाया । "राजा", जो जर्मन शेफर्ड प्रजाति का एक प्रशिक्षित कुत्ता था और जिसने पहले भी बहुत से अपराधों से पर्दा उठाने में सहायता की थी, ने घटनास्थल पर शव के आस-पास के सभी महत्वपूर्ण स्थलों को सूंघा और उसी गंद की लीक के पीछे-पीछे गया, वह पुलिस कार्मिक के साथ-साथ चल रहा था और ग्रामवासी पीछे-पीछे चल रहे थे और वह सीधा अभियुक्त-अपीलार्थी के मकान पर पहुंचा । अपीलार्थी और उसका भाई कंबल ओढ़कर अपने मकान में सो रहे थे । "राजा" अभियुक्त-अपीलार्थी के कंबल पर भोंका, जिसे तुरंत पुलिस द्वारा काबू में कर लिया गया । अगले दिन, अर्थात् 24 फरवरी, 2004 को, अन्वेषक अधिकारी ने अभियुक्त-अपीलार्थी के बताने पर रक्त से सना अभियुक्त-अपीलार्थी का बनियान और एक गमछा तथा अपराध कारित करने में प्रयुक्त हंसिया भी बरामद किया । रसायन परीक्षक ने तीनों बरामद वस्तुओं का परीक्षण करने पर यह पाया कि उक्त सभी अपराध में आलिप्त करने वाली वस्तुओं पर रक्त लगा हुआ है । अन्वेषक अधिकारी द्वारा तारीख 24 फरवरी, 2004 को मृत्यु-समीक्षा रिपोर्ट तैयार की गई । जैसा कि उक्त रिपोर्ट में परिवर्णित है, घटना में आहत का गला कटा हुआ पाया गया था ।

उसकी गर्दन मुश्किल से धड़ से जुड़ी हुई थी । मृतका का दुपट्टा बड़े घाव में लगाया हुआ था । उसके शव को पैक किया गया और एक पुलिंदे में मुहरबंद करके मरणोत्तर परीक्षा के लिए भेजा गया । यद्यपि घटनास्थल के दृश्य से यह प्रकट होता है कि लड़की की सलवार का नाड़ा खोला गया था और सलवार को नीचे खिसकाया गया था और वह नग्नावस्था में पाई गई थी और सारे शरीर पर हिंसा के भी चिह्न थे जिससे यह उपदर्शित होता है कि उसके साथ बलात्संग करने का क्रूर प्रयत्न किया गया था, फिर भी डाक्टर ने यह पाया कि लड़की के साथ बलात्संग नहीं किया गया था ।

6. अन्वेषक अधिकारी ने घटनास्थल का स्थल नक्शा तैयार किया । उसने वहां से सादा और रक्तरंजित मिट्टी एकत्रित की और उन्हें अलग-अलग डिब्बों में पैक किया । शव के चारों ओर कुचले हुए गेहूं के पौधों से हिंसा की कहानी प्रकट हो रही थी । मृतका की दोनों चप्पलें भी कुछ दूरी पर पड़ी हुई थीं । अन्वेषक अधिकारी ने सभी सुसंगत साक्षियों से परिप्रश्न करने, मरणोत्तर रिपोर्ट सहित सुसंगत रिपोर्टों को प्राप्त करने के पश्चात् अन्वेषण पूर्ण किया और अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप पत्र प्रस्तुत किया ।

7. ललित कुमार यादव ने विचारण न्यायालय के समक्ष दोषी न होने का अभिवाक् किया और अपने विरुद्ध लगाए गए अपराध में आलिप्त करने वाले सभी अभिकथनों से इनकार किया । तथापि, उसने यह स्वीकार किया कि उसे पुलिस द्वारा तारीख 23 फरवरी, 2004 को अर्थात् घटना की तारीख को अपराह्न में 11.00 बजे गिरफ्तार किया गया था ।

8. अभियोजन पक्ष ने अभियोजन के वृत्तांत के समर्थन में कुल 10 साक्षियों की परीक्षा कराई । रामचन्द्र चौरसिया (अभि. सा. 1) मृतका का पिता है । उसने अपनी इत्तिला को साबित किया और यह भी अभिसाक्ष्य दिया कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने घटना से कुछ दिन पूर्व मृतका लड़की के साथ छेड़खानी की थी और जब कुमारी "एक्स" ने अपने चचेरे भाई अशोक कुमार से छेड़खानी की घटना के बारे में शिकायत की, तो अशोक कुमार ने अभियुक्त-अपीलार्थी को फटकार लगाई थी । दुर्भाग्यवश, अशोक कुमार की घटना के पश्चात् मृत्यु हो गई थी । अभि. सा. 1 ने यह भी साबित किया कि पुलिस ने एक कुत्ता बुलाया था, जो घटनास्थल को सूंघने के पश्चात् पदचिह्नों को सूंघते हुए अभियुक्त के मकान पर गया और उसे पकड़ लिया ।

9. राम प्रकाश यादव (अभि. सा. 2) वह साक्षी था जिससे अपीलार्थी ने अभिकथित रूप से अपराध करने के बारे में संस्वीकृति की थी । तथापि, उसे पक्षद्रोही घोषित किया गया था और यह कहा गया था कि उसने "यादव" होने के कारण अपने पूर्ववर्ती बयान से मुकर कर अभियुक्त की सहायता की थी । तथापि, उसने गांव में पुलिस द्वारा एक स्नीफर डॉग लाए जाने के तथ्य की पुष्टि की थी ।

10. इसी प्रकार, राम प्रकाश (अभि. सा. 3) पुत्र जगन्नाथ को अभियोजन पक्ष के इस सुझाव से इनकार करने के कारण पक्षद्रोही घोषित किया गया कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने उसे यह बताया था और संस्वीकृति की थी कि उसने लड़की की हत्या की है क्योंकि वह एक चरित्रहीन लड़की थी ।

11. अब्दुल लायस खान (अभि. सा. 4) "राजा" के रूप में ज्ञात शेफर्ड कुत्ते का संचालक है । उक्त कुत्ते को घटना की तारीख को सायंकाल के बाद गांव में ले जाया गया था । श्री खान उस समय अपराध अन्वेषण शाखा (डॉग स्कवाड), जिला लखनऊ में उप-निरीक्षक था । उसने यह साक्ष्य दिया कि तारीख 23 फरवरी, 2004 को अपराह्न में लगभग 8.00 बजे पुलिस अधीक्षक, लखनऊ के ज्येष्ठ अधिकारी द्वारा उसे घटनास्थल पर जाने का निदेश दिया गया था । तद्नुसार, वह "राजा" नामक शेफर्ड कुत्ते के साथ अपराह्न में 8.30 बजे वहां पहुंचा । उसने अपराह्न में 9.00 बजे तलाशी का कार्य आरंभ किया, रात्रि होने के कारण चारों ओर अंधेरा था इसलिए विपदग्रस्त के शव के पास एक पैट्रोमेक्स लालटेन जलाई गई थी । उसने और अधिक रोशनी की व्यवस्था करने के लिए कहा, जो अन्वेषक अधिकारी द्वारा करवाई गई और उसके पश्चात् उसने कुत्ते को शव के आस-पास अपराधी के पदचिह्नों को सूंघने का निदेश दिया और फिर कुत्ते को खुला छोड़ दिया और उससे चलने के लिए कहा । वह पुलिस कार्मिकों और अन्य ग्रामवासियों के साथ-साथ कुत्ते के पीछे-पीछे चला । एक किलोमीटर चलने के बाद कुत्ता गांव गोकुलपुर असेनी में पहुंचा । कुत्ते ने फिर खड़ंजा गली के एक छोर से दूसरे छोर तक चक्कर लगाया । दस-बारह मकानों के सामने गली में घूमने के पश्चात् कुत्ते ने एक घास-फूस से बने मकान में प्रवेश किया, जहां लकड़ी की चारपाई पर दो लड़के लेटे हुए थे । कुत्ता अभियुक्त ललित कुमार पर भोंका, जिसकी अब्दुल लयास खान द्वारा न्यायालय में उसी व्यक्ति के रूप में शनाख्त की गई, जिसे कुत्ते द्वारा सूंघा गया था और जिस पर उसने पंजा मारने का प्रयत्न किया था और

पकड़ लिया था । तथापि, इसी बीच पुलिस थाना, सतरीख के थाना अधिकारी ने ललित कुमार को गिरफ्तार कर लिया । संक्षेप में, इस साक्षी के साक्ष्य के अनुसार, अभियुक्त ही वह अपराधी है जिसके पदचिह्न शव के आस-पास पाए गए थे ।

12. हैड कांस्टेबल राम प्रकाश शैलेश (अभि. सा. 5) ने राम चन्द्र चौरसिया की लिखित रिपोर्ट (प्रदर्श क-1) के आधार पर चिक रिपोर्ट प्रदर्श क-5 तैयार की थी । उसने तारीख 23 फरवरी, 2004 को मामला साधारण डायरी में क्र. सं. 33 पर मामले को दर्ज किया था और इसकी प्रति प्रदर्श क-6 प्रस्तुत की थी ।

13. डा. अरुण चन्द्र द्विवेदी (अभि. सा. 6) वह डाक्टर है जिसने विपदग्रस्त के शव की मरणोत्तर परीक्षा की थी और शव-परीक्षा रिपोर्ट (प्रदर्श क-7) तैयार की थी । उसने विचारण न्यायालय के समक्ष उक्त रिपोर्ट को साबित किया और यह अभिसाक्ष्य दिया कि मृतका की गर्दन धड़ से लगभग अलग थी और त्वचा के साथ नाममात्र जुड़ी हुई थी । उसने इस बात की पुष्टि की कि विपदग्रस्त की गर्दन को छोटे-छोटे दांतों वाली दरांती से काटकर अलग किया जाना संभव था ।

14. यह उल्लेखनीय है कि उच्च न्यायालय द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 367(1) और 391 के अधीन डा. अरुण चन्द्र द्विवेदी को यह अभिनिश्चित करने के लिए बुलाया गया था कि क्या मुख्य क्षति, जिसके द्वारा गर्दन धड़ से लगभग अलग हो गई थी, दरांती (वस्तु, प्रदर्श-8) से कारित की जानी संभव थी । उच्च न्यायालय ने तारीख 13 जुलाई, 2005 को आदेश पारित करते हुए यह अभिव्यक्त किया कि जहां तक दरांती के प्रयोग का संबंध है, इस बात में कुछ कमी है । डाक्टर ने न्यायालय में यह अभिसाक्ष्य दिया कि गर्दन पर पाया गया मुख्य विर्दीण घाव धारदार "हंसिया" (दरांती) से कारित किया जा सकता था, किंतु डाक्टर से यह बात विचारण न्यायालय में नहीं पूछी गई थी कि क्या इस प्रकार की क्षति पूर्वोक्त "हंसिया" (वस्तु, प्रदर्श-8), जिसके फलक पर दांते थे, से कारित की जानी संभव थी या नहीं । सामान्य बोलचाल में गोलाईदार बनावट के ऐसे "हंसिया" को "आरीदार" – अर्थात् दांतों वाला फलक, के रूप में जाना जाता है । डा. द्विवेदी उच्च न्यायालय के समक्ष उपसंजात हुए । न्यायालय में दरांती का मुहरबंद पुलिंदा खोला गया और डा. अरुण चन्द्र द्विवेदी को दिखाया गया, जो उस समय जिला अस्पताल, बाराबंकी में चिकित्सा अधिकारी के रूप में तैनात थे । डाक्टर ने उच्च न्यायालय के समक्ष यह

साक्ष्य दिया कि मरणोत्तर परीक्षा (प्रदर्श क-7) में दर्शाई गई क्षतियां दरांती (वस्तु-प्रदर्श 8) से कारित की जानी संभव थीं । उसके द्वारा यह भी कथन किया गया कि मृतका के हाथ की अगुंलियों में पहुंची क्षतियां विपदग्रस्त द्वारा अपने आप को बचाते समय पहुंच सकती थीं ।

15. हैड कांस्टेबल देवतादीन (अभि. सा. 7) ने तारीख 16 मार्च, 2004 को अपराह्न में 2.30 बजे पुलिस थाना, सतरीख के "मालखाना" से इस मामले के दो मुहरबंद पुलिंदे निकाले थे और साधारण डायरी में प्रविष्टि करने के पश्चात् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, बाराबंकी के न्यायालय में गया था और अपराध में फंसाने वाली वस्तुओं के परीक्षण के लिए रसायन परीक्षक को संबोधित पत्र की एक प्रति अभिप्राप्त की थी । इसके पश्चात् वह तारीख 17 मार्च, 2004 को प्रयोगशाला गया था और दोनों पुलिंदे पत्र सहित प्रयोगशाला में जमा किए थे ।

16. कांस्टेबल अवधेश कुमार (अभि. सा. 8) ने यह साबित किया कि वह विपदग्रस्त के शव को शव-परीक्षा के लिए शवगृह में ले गया था ।

17. श्रीराम (अभि. सा. 9) इत्तिलाकर्ता रामचन्द्र चौरसिया का एक नातेदार है । वह रामचन्द्र चौरसिया की पुत्री के दाह-संस्कार में सम्मिलित होने के लिए आया था । सायंकाल में, अन्वेषक अधिकारी उससे मिला और उसे अभियुक्त-अपीलार्थी के मकान पर उसके साथ चलने के लिए कहा । वह गांव के अन्य व्यक्तियों के साथ वहां गया । अभियुक्त अन्वेषक अधिकारी सहित उन सभी व्यक्तियों को मकान के अंदर ले गया और एक पोलीथिन में लपेटी हुई दरांती और अपने वस्त्र अर्थात् बनियान और गमछा निकालकर दिए । इस प्रकटीकरण को दर्शाने के लिए अन्वेषक अधिकारी द्वारा ज्ञापन प्रदर्श क-12 तैयार किया गया । इस साक्षी ने इस ज्ञापन पर अपने हस्ताक्षरों की शनाख्त की ।

18. उप-निरीक्षक अशोक कुमार यादव (अभि. सा. 10) इस मामले का अन्वेषक अधिकारी है । उसके साक्ष्य के अनुसार, यह मामला पुलिस थाना, सतरीख में उसकी मौजूदगी में दर्ज किया गया था । इसके पश्चात् वह अपराह्न में लगभग 6.30 बजे घटनास्थल पर पहुंचा, घटनास्थल का निरीक्षण किया, विश्वनाथ के खेत में पड़े हुए शव को देखा, स्थल-नक्शा प्रदर्श-13 तैयार किया और फिर अपने उच्च प्राधिकारियों से संपर्क किया और डॉग स्कवाड भेजने के लिए कहा । उसने कुत्ते को लाने के लिए स्वयं अपनी पुलिस जीप भेजी । पुलिस उप-अधीक्षक दीना नाथ दूबे भी घटना-स्थल पर मौजूद थे । अब्दुल लायस खान, उप-निरीक्षक, कुत्ते का

भारसाधक सूर्यास्त के काफी समय पश्चात् घटनास्थल पर पहुंचा और पैट्रोमेक्स की रोशनी में घटनास्थल का परीक्षण किया । श्री खान ने कुत्ते को संपूर्ण घटनास्थल के साथ-साथ शव को भी सूंघने का निदेश दिया और फिर उक्त कुत्ता सूंघ की लीक की सहायता से अभियुक्त के मकान पर पहुंचा, जो एक "तख्त", अर्थात् लकड़ी की चारपाई पर लेटा हुआ था । कुत्ता उस पर भोंका । अन्वेषक अधिकारी ने फिर अभियुक्त से मृतका के साथ उसके संबंध के बारे में परिप्रश्न किए । उसने अगले दिन अपराह्न में 7.00 बजे मृत्यु-समीक्षा रिपोर्ट (प्रदर्श क-4) तैयार की और अन्य साक्षियों से परिप्रश्न किए । इसके पश्चात् अभियुक्त को औपचारिक रूप से गिरफ्तार किया गया और उसने दरांती (वस्तु, प्रदर्श-8), अपने गमछे (वस्तु, प्रदर्श-9) और बनियान (वस्तु, प्रदर्श-10) की बरामदगी कराई । अन्वेषक अधिकारी साक्षियों से परिप्रश्न करने और अन्य तात्विक प्रदर्श एकत्रित करने संबंधी अन्य औपचारिकताएं पूर्ण करने के पश्चात् अभियुक्त और मुहरबंद पुलिंदों तथा अपराध में आलिप्त करने वाली अन्य वस्तुओं के डिब्बों को पुलिस थाने लेकर आया । अन्वेषण का कार्य पूर्ण करने के पश्चात् इस साक्षी ने अभियुक्त के विरुद्ध आरोप पत्र (प्रदर्श क-28) प्रस्तुत किया ।

19. अपीलार्थी ने दोषी होने से इनकार किया । अपीलार्थी ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपने कथन में यह कहा कि आरोप गलत रूप से विरचित किए गए हैं और उसके विरुद्ध लगाए गए अपराध में फंसाने वाले सभी अभिकथनों से भी इनकार किया ।

20. अभियोजन पक्ष ने चार पारिस्थितिक साक्ष्य का अवलंब लिया, पहला, स्नीफर डॉग द्वारा पदचिह्नों को सूंघने का साक्ष्य, दूसरा, दरांती अर्थात् आयुध की बरामदगी, जो अपीलार्थी द्वारा लड़की की गर्दन काटने के लिए उपयोग किया गया था, तीसरा, अपीलार्थी के वस्त्रों की बरामदगी और मृतका लड़की के साथ छेड़खानी करने से संबंधित अपीलार्थी का पिछला आचरण ।

21. विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियोजन के पक्षकथन और उसके समर्थन में प्रस्तुत किए गए साक्ष्य का अवलंब लेते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि अभियुक्त-अपीलार्थी भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और धारा 511 के साथ पठित धारा 376 के अधीन दोषी है और फिर भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए मृत्यु दंड और भारतीय दंड संहिता की धारा 511 के साथ पठित धारा 376 के अधीन अपराध के लिए पांच वर्ष का कठोर कारावास भोगने का दंडादेश दिया । उच्च न्यायालय ने

निर्देश पर मृत्यु दंडादेश की अभिपुष्टि की ।

22. इस मामले में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट की सत्यता पर साधारण डायरी रिपोर्ट (प्रदर्श क-6) में इसकी प्रविष्टि के प्रति निर्देश करते हुए संदेह किया गया है । साधारण डायरी रिपोर्ट (प्रदर्श क-6) में के परिवर्णन के अनुसार, रामचन्द्र चौरसिया ने पुलिस थाने में अपनी लिखित रिपोर्ट स्वयं दी थी । विपदग्रस्त के पिता रामचन्द्र चौरसिया (अभि. सा. 1) के परिसाक्ष्य के प्रति निर्देश किया गया, जिसने यह साक्ष्य दिया था कि उसने बोलकर रिपोर्ट लिखवाई थी और इसे पुलिस थाने में भिजवाया था । तथापि, वह उस ग्रामवासी का नाम नहीं बता सका था जो उक्त इत्तिला को लेकर गया था । यही आधार है जो अपीलार्थी के काउंसेल द्वारा प्रथम इत्तिला रिपोर्ट की सत्यता पर संदेह करने के लिए लिया गया है । वास्तव में, अभि. सा. 1 के परिसाक्ष्य और साधारण डायरी रिपोर्ट के बीच कोई बात विसंगत नहीं है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श क-1) में कुछ ही तथ्य दिए गए हैं । इसमें न तो किसी अभियुक्त को नामित किया गया है और न ही इसमें कोई कमी है । उक्त रिपोर्ट के परिशीलन से यह प्रकट होता है कि इत्तिलाकर्ता (अभि. सा. 1) ने इसमें मुख्य रूप से यह प्रकट किया था कि उसकी पुत्री कुमारी एक्स, आयु लगभग 18 वर्ष, जो अपने माता-पिता को तलाश करने के लिए गई थी, तारीख 23 फरवरी, 2004 को विश्वनाथ के खेत में मृत पाई गई । रिपोर्ट में यह भी कहा गया था कि किसी व्यक्ति ने उसकी गर्दन काट दी है । आवश्यक कार्रवाई करने का अनुरोध किया गया था । यह घटना इत्तिलाकर्ता (अभि. सा. 1) की जानकारी में अपराह्न में 4.00 बजे के पश्चात् आई थी और लिखित रिपोर्ट उसी दिन अपराह्न में 6.10 बजे गांव से लगभग सात किलोमीटर दूर सतरीख पुलिस थाने में दी गई थी । अपराध की गंभीरता और मृतका के परिवार के सदस्यों को पहुंचे सदमे को देखते हुए यह नहीं कहा जा सकता है कि पुलिस को मामले की रिपोर्ट करने में विलंब हुआ था । इसलिए हमारा यह निष्कर्ष है कि कार्रवाई करने से संबंधित बिंदु पर कोई विसंगति नहीं है ।

23. अपीलार्थी की दूसरी दलील यह है कि रामचन्द्र चौरसिया (अभि. सा. 1) अत्यधिक हितबद्ध साक्षी है और उसके कथन की किसी अन्य साक्षी द्वारा, उपलब्ध होते हुए भी, संपुष्टि नहीं की गई है । रामचन्द्र चौरसिया (अभि. सा. 1) ने यह प्रकट किया कि घटना की तारीख से कुछ दिन पूर्व अभियुक्त ने उसकी पुत्री के साथ छेड़खानी की थी और उसे धमकी भी दी थी । उसकी पुत्री कुमारी "एक्स" ने अपने चचेरे भाई अशोक

कुमार को अभियुक्त के दुराचार के बारे में बताया था । बाद में, उसने अभियुक्त को उसके अशिष्ट व्यवहार के बारे में शिकायत मिलने पर फटकार लगाई थी । दुर्भाग्यवश, अशोक कुमार की तत्पश्चात् मृत्यु हो गई, किंतु विपदग्रस्त के पिता का साक्ष्य पूरी तरह विश्वासप्रद और विश्वसनीय है । वास्तव में उसने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में अभियुक्त को नामित नहीं किया था । केवल इस कारण कि अभि. सा. 1 विपदग्रस्त लड़की का पिता है, किसी संदेह के अभाव में इस आधार पर उसके साक्ष्य पर संदेह नहीं किया जा सकता है ।

24. अगली दलील में श्रीराम (अभि. सा. 9) के परिसाक्ष्य को इस आधार पर चुनौती दी गई है कि वह मृतका का नातेदार है । इस साक्षी ने स्पष्ट रूप से यह कथन किया कि वह राम चन्द्र के चचेरे भाई का दामाद है । वह जिला बाराबंकी के गांव इब्राहिमपुर से आया है । यह साक्षी वह व्यक्ति है जो पुलिस दल के साथ अभियुक्त के मकान पर गया था । उसने अन्वेषक अधिकारी के परिसाक्ष्य की पूर्ण रूप से संपुष्टि की और यह साक्ष्य दिया कि अभियुक्त पुलिस दल को लेकर गया था और अभियुक्त सहित कुछ नागरिकों ने उसके मकान का दरवाजा खोला था और चारपाई के नीचे पड़ी हुई दरांती निकालकर दी थी । इस साक्षी ने प्रतिरक्षा पक्ष की इस बात का खंडन किया कि अन्वेषक अधिकारी ने दरांती की ओर इशारा किया था; बजाय इसके इस साक्षी ने यह प्रकथन किया कि स्वयं अभियुक्त ने ही दरांती उठाई थी और अन्वेषक अधिकारी को सौंपी दी । अभियुक्त ने दरांती पोलीथिन की पन्नी से निकालकर दी थी । अन्वेषक अधिकारी ने दरांती को पोलीथिन सहित रखा था । इसका ज्ञापन तैयार करने के समय के बारे में थोड़ा फेरफार है । जबकि बरामदगी ज्ञापन में यह परिवर्णित है कि अभियुक्त द्वारा की गई अगुआई में पुलिस दल अभियुक्त के मकान पर अपराह्न में 6.00 बजे पहुंचा था, किंतु श्रीराम (अभि. सा. 9) ने यह प्रकट किया कि जब ज्ञापन तैयार किया गया था उस समय लगभग 7.00-7.30 बजे थे । यह सामान्य अनुभव की बात है कि दिन का उजाला सूर्यास्त होने के 20-25 मिनट तक बना रहता है । ग्रामवासी सामान्यतः सूर्य की स्थिति के आधार पर समय का अनुमान लगाते हैं । इसलिए ज्ञापन दिन के उजाले में दिन और रात्रि के मिलन, जिसे सामान्यतः "गोधूलि" कहा जाता है, के समय तैयार किए जाने की संभाव्यता पूरी तरह से विश्वसनीय है । यह फेरफार होते हुए भी अमहत्वपूर्ण होने के कारण न्यायोचित है, क्योंकि बरामदगी के पश्चात् अन्वेषक अधिकारी को आयुध का परीक्षण करने सहित सभी सुसंगत औपचारिकताओं को पूर्ण करने के पश्चात् कार्य समाप्त करने

में कुछ समय लगा होगा । संपूर्ण बरामदगी ज्ञापन अन्वेषक अधिकारी के हस्तलेख में लिखा हुआ पाया गया है । इसलिए इसके तैयार करने के समय से कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा है । केवल इस कारण कि श्रीराम (अभि. सा. 9) मृतका का नातेदार है, उसके परिसाक्ष्य की सत्यता के बारे में संदेह करने का कारण नहीं हो सकता है क्योंकि तारीख 24 फरवरी, 2004 को गांव में उसकी मौजूदगी न्यायोचित है । राम चन्द्र की पुत्री मृत्यु के बारे में सुनने के पश्चात् एक नातेदार होने के कारण सामान्य अनुक्रम में वह अपनी संवेदना व्यक्त करने आया था और लड़की के दाह-संस्कार में सम्मिलित हुआ था । उसे संयोगी साक्षी नहीं कहा जा सकता है । वास्तव में, उसकी प्रतिपरीक्षा में ऐसी कोई बात निकलकर नहीं आ सकी, जो उसका दरांती की बरामदगी और बरामदगी ज्ञापन (प्रदर्श क-12) का एक अधिसंभाव्य साक्षी न होने का संकेत करती हो । इसलिए हमारा यह निष्कर्ष है कि उसकी गांव में मौजूदगी अत्यंत स्वाभाविक और अधिसंभाव्य होने के कारण उसका साक्ष्य भरोसेमंद और स्वीकार्य है ।

25. अपीलार्थी की ओर से दी गई अगली दलील यह है कि जिस पोलीथिन में दरांती लिपटी हुई थी और जिसे अन्वेषक अधिकारी द्वारा लिया गया था, उस पर बरामदगी के समय कोई मुद्रा नहीं लगाई गई थी । यह दलील स्वतः बरामदगी ज्ञापन को देखने से ही अतर्कसंगत है । इस ज्ञापन (प्रदर्श क-12) के अंतिम भाग में दरांती का वर्णन है और इसके पश्चात् स्पष्ट शब्दों में यह परिवर्णित है कि इसे उसी समय एक पैकेट में मुहरबंद किया गया है और बरामदगी ज्ञापन तैयार किया गया है । अन्वेषक अधिकारी (अभि. सा. 10) ने यह भी कथन किया कि अभियुक्त के कथन के आधार पर दरांती उसके मकान से साक्षी श्रीराम (अभि. सा. 9) की मौजूदगी में बरामद की गई थी और अभियुक्त का गमछा (तौलिया) और बनियान भी बरामद किए गए थे । दरांती, जिसे चारपाई के नीचे कपड़ों में रखा गया था, की बरामदगी अभियुक्त के मकान से की गई थी । अन्वेषक अधिकारी ने यह भी कथन किया कि दरांती पर रक्त के धब्बे थे और दरांती तथा रक्तरंजित गमछा और बनियान अभिरक्षा में लेने के पश्चात् उसने इन्हें मुहरबंद किया था ।

26. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा बरामदगी की कार्यवाही को प्रश्नगत किया गया और यह दलील दी गई कि संस्वीकृति कथन भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 25 और 26 के अधीन ग्राह्य नहीं है । तथापि, भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 में निम्नलिखित उपबंधित है :–

"27. **अभियुक्त से प्राप्त कितनी जानकारी साबित की जा सकेगी** – परन्तु जब किसी तथ्य के बारे में यह अभिसाक्ष्य दिया जाता है कि किसी अपराध के अभियुक्त व्यक्ति से, जो पुलिस आफिसर की अभिरक्षा में हो, प्राप्त जानकारी के परिणामस्वरूप उसका पता चला है, तब ऐसी जानकारी में से उतनी, चाहे वह संस्वीकृति की कोटि में आती हो या नहीं, जितनी तद्द्वारा पता चले तथ्य से स्पष्टतया संबंधित है, साबित की जा सकेगी ।"

इसलिए, उपर्युक्त उपबंधों को ध्यान में रखते हुए अभियुक्त के कथन को, जहां तक इसका संबंध दरांती को छिपाने से संबंधित जानकारी देने और इसकी बरामदगी से है, घटना की सत्यता को साबित करने और अन्य साक्षियों, जिन्होंने इसकी संपुष्टि की है, के कथनों को साबित करने के लिए विचार में लिया जा सकता है ।

27. **अंतर सिंह** बनाम **राजस्थान राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 की व्याप्ति और परिधि पर विचार किया और यह मत व्यक्त किया :–

"16. इस धारा की विभिन्न अपेक्षाओं का सारांश निम्नलिखित प्रकार से दिया जा सकता है –

(1) तथ्य, जिसका साक्ष्य दिया जाना ईप्सित है, वह विवाद्यक के सुसंगत होना चाहिए । यह अवश्य ध्यान में रखा जाना चाहिए कि इस उपबंध का सुसंगतता के प्रश्न से कुछ लेना-देना नहीं है । पता चले तथ्य को ग्राह्य बनाने के लिए, पता चले तथ्य की सुसंगतता को इसे अपराध से जोड़ने वाले अन्य साक्ष्य की सुसंगतता से संबंधित निर्धारणों के अनुसार, सिद्ध किया जाना चाहिए ।

(2) तथ्य का पता चलना आवश्यक है ।

(3) प्रकटीकरण अवश्य अभियुक्त से प्राप्त किसी जानकारी के परिणामस्वरूप होना चाहिए न कि अभियुक्त के स्वयं के कृत्य द्वारा ।

(4) जानकारी देने वाला व्यक्ति अवश्य किसी अपराध का अभियुक्त होना चाहिए ।

---

[1] (2004) 10 एस. सी. सी 657.

(5) वह किसी पुलिस अधिकारी की अभिरक्षा में हो ।

(6) अभिरक्षा में के अभियुक्त से प्राप्त जानकारी के परिणामस्वरूप किसी तथ्य के पता चलने का अभिसाक्ष्य दिया जाना आवश्यक है ।

(7) तदुपरांत जानकारी का केवल वह भाग जो पता चले तथ्य से स्पष्टतया और पूर्णतः संबंधित है, साबित किया जा सकता है । शेष भाग अग्राह्य है ।"

28. **पांडुरंग कालु पाटिल** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया :–

"5. यहां तक कि महाराष्ट्र राज्य **बनाम** दामु [(2000) 6 एस. सी. सी. 269] वाले हाल ही के मामले में भी इस न्यायालय ने पुलुकुरी (ए. आई. आर. 1947 पीसी 67) वाले मामले के विनिश्चय का अनुमोदन के साथ अनुसरण किया था । आक्षेपित निर्णय के अनुसार, खंड न्यायपीठ द्वारा की गई त्रुटि संभवतः भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 में 'तथ्य' शब्द को साथ वाले शब्द 'पता चले' से अलग कर दिए जाने के कारण हुई है । धारा 27 का सार यह है कि यह धारा दो पूर्ववर्ती धाराओं (धारा 25 और 26 देखें), जिनमें अभियुक्त द्वारा पुलिस को या किसी अन्य व्यक्ति को उस समय जब वह पुलिस अभिरक्षा में है, की गई किसी संस्वीकृति की ग्राह्यता पर पूर्ण प्रतिबंध अधिरोपित किया गया है, के परंतुक के रूप में अधिनियमित की गई है । धारा 27 में यह उपबंध करने का उद्देश्य अभियुक्त द्वारा पुलिस अधिकारी को किए गए कथन के कतिपय भाग को साक्ष्य में ग्राह्य बनाना था चाहे ऐसा कथन संस्वीकृति या असंस्वीकृति की प्रकृति का है या नहीं । फिर भी, ग्राह्यता के विरुद्ध प्रतिबंध तब हट जाएगा यदि कथन किसी तथ्य के पता चलने से स्पष्ट रूप से संबंधित है । पुलिस (अन्वेषक अधिकारी) द्वारा कोई तथ्य अभियुक्त से प्राप्त हुई जानकारी के अनुसरण में तब प्रकट किया जा सकता है यदि ऐसा प्रकटन एक या अधिक प्रकार के कारणों के पश्चात् हुआ हो । किसी वस्तु की बरामदगी ऐसे कारणों में से एक कारण है । बरामदगी, या यहां तक कि स्वतः वस्तु की प्रस्तुति के परिणामस्वरूप किसी तथ्य का प्रकटीकरण होना आवश्यक नहीं

---

[1] (2002) 2 एस. सी. सी. 490.

है । यही कारण है कि पुलुकुरी कोट्टया (ए. आई. आर. 1947 पीसी 67, पृष्ठ 70, पैरा 10) वाले मामले में सर जॉन बेमोंट ने यह मत व्यक्त किया कि 'धारा के अंतर्गत 'पता चले तथ्य' को प्रस्तुत की गई वस्तु के समतुल्य समझना त्रुटिपूर्ण है' । विद्वान् ला लार्ड का उक्त विनिश्चय में का निम्नलिखित वाक्य, यद्यपि संक्षिप्त है, फिर भी विनिश्चयाधार के सार को उजागर करते हुए संदेश देने के लिए अर्थपूर्ण है (ए. आई. आर. का पृष्ठ 70, पैरा 10) –

> 'अभिरक्षा में किसी व्यक्ति द्वारा दी गई यह जानकारी कि 'मैं अपने मकान की छत में छिपाया गया चाकू प्रस्तुत करूंगा', से चाकू की खोज नहीं हो जाती है; चाकुओं का कई वर्ष पूर्व पता चल गया था । यह बात इस तथ्य के प्रकटीकरण की ओर ले जाती है कि एक चाकू जानकारी देने वाले के मकान में छिपाया गया है जो उसके ज्ञान में है, और यदि यह साबित किया जाता है कि वह चाकू अपराध कारित करने में प्रयुक्त किया गया है, तब पता चला तथ्य अत्यंत सुसंगत हो जाता है ।'''

29. **बोध राज** उर्फ **बोधा और अन्य** बनाम **जम्मू-कश्मीर राज्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि ऐसा कथन, जो चाहे संस्वीकृति के द्वारा पुलिस अभिरक्षा में किया गया हो, पता चले तथ्य से स्पष्टतया संबंधित है, तो अभियुक्त के विरुद्ध साक्ष्य में ग्राह्य है । कथन, जो धारा 27 के अधीन ग्राह्य है, ऐसा कथन है जिससे प्रकटीकरण करने की जानकारी मिलती है । इस प्रकार, जो बात ग्राह्य है वह जानकारी है न कि पुलिस अधिकारी द्वारा इस पर बनाई गई राय और इसे साबित किया जाना चाहिए । अभिरक्षा में रहते हुए अभियुक्त द्वारा दी गई सटीक जानकारी को, जिससे वस्तु की बरामदगी हुई, साबित किया जाना चाहिए और सटीक जानकारी साक्ष्य के द्वारा प्रस्तुत की जानी चाहिए ।

30. प्रस्तुत मामले में अभियुक्त के बताने पर तख्त (चारपाई) के नीचे से ''गमछा'' और ''बनियान'' की बरामदगी एक महत्वपूर्ण पहलू है जो अभियुक्त को अपराध से संपृक्त करता है । रसायनिक परीक्षक और सीरम-विज्ञानी की रिपोर्ट के अनुसार, अभियुक्त के ''गमछा'' और ''बनियान'' पर भी रक्त पाया गया था । इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि हत्या कारित

---

[1] ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 3164.

करने के समय अभियुक्त ने "गमछा" और "बनियान" पहना हुआ था और उसके पश्चात् उसने इन्हें तख्त के नीचे छिपा दिया था । इसलिए अपीलार्थी की ओर से दी गई पूर्वोक्त दलील कि वस्त्रों अर्थात् गमछा और बनियान की अभिकथित बरामदगी से भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 की आज्ञा का समाधान नहीं होता है, कायम नहीं रखी जा सकती है ।

31. अपीलार्थी की ओर से अंतिमतः यह दलील दी गई कि स्नीफर डॉग द्वारा की गई अभियुक्त की शनाख्त का अवलंब नहीं लिया जा सकता है क्योंकि यह अपीलार्थी की दोषिता को साबित करने के लिए ग्राह्य नहीं है । **अब्दुल रज़ाक मुर्तजा दफेदार** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इसी प्रकार की दलील दी गई थी, जिसमें इस न्यायालय ने यह राय व्यक्त की कि "वैज्ञानिक ज्ञान की वर्तमान अवस्था में कुत्ते के लीक चाल के साक्ष्य का, भले ही ग्राह्य है, सामान्यतः अधिक महत्व नहीं है ।"

32. **गाडे लक्ष्मी मंगाराजू** उर्फ **रमेश** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय ने स्नीफर डॉग से संबंधित साक्ष्य को स्वीकार करने के विरुद्ध आलोचना पर विचार किया था । यह आक्षेप किया गया था कि मनुष्य के जीवन और स्वतंत्रता को जानवरों की इन्द्रिय-गोचरताओं पर निर्भर नहीं रखा जाना चाहिए और कुत्ते द्वारा गंध को ठीक प्रकार से न सूंघने या गलत लीक पर चलने की संभाव्यता से इनकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि बहुत बार ऐसी गलतियां हुई हैं । उक्त मामले में, इस न्यायालय ने **अब्दुल रज़ाक मुर्तज़ा दफेदार** (उपरोक्त) वाले मामले के विनिश्चय का अवलंब लेते हुए यह अभिनिर्धारित किया :–

> "17. हमारा यह मत है कि दांडिक न्यायालयों को स्नीफर डॉग पर आधारित साक्ष्य के बारे में ऊपर प्रतिबिम्बित अंतर्निहित दोषों के कारण ज्यादा चिंतित होने की आवश्यकता नहीं है, यद्यपि हम अन्वेषक अभिकरण द्वारा अपराधियों को पकड़ने के लिए अन्वेषण में सहायता हेतु ऐसे स्नीफर डॉग का प्रयोग करने की बात का अननुमोदन नहीं कर सकते हैं ।"

33. **दिनेश बोर्थाकुर** बनाम **असम राज्य**[3] वाले मामले में इसी प्रकार के प्रश्न पर विचार करते हुए इस न्यायालय ने **गाडे लक्ष्मी मंगाराजू**

---

[1] (1969) 2 एस. सी. सी. 234.
[2] (2001) 6 एस. सी. सी. 205.
[3] (2008) 5 एस. सी. सी. 697.

(उपरोक्त) वाले मामले में निर्दिष्ट करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि "अतः इस संबंध में यह विधि स्थिर है कि हालांकि स्नीफर डॉग की सेवाएं अन्वेषण के प्रयोजन के लिए ली जा सकती हैं, तो भी इसकी क्षमताओं को अभियुक्त की दोषिता को सिद्ध करने के लिए साक्ष्य के रूप में नहीं लिया जा सकता है ।"

34. वर्तमान मामले में, अन्वेषण के लिए स्नीफर डॉग की सेवाएं ली गई थीं । उक्त कुत्ते ने अभियुक्त को खोज निकाला था और उसे घटना के अगले दिन सायंकाल में औपचारिक रूप से गिरफ्तार किया गया था । अन्वेषक अधिकारी, अशोक कुमार यादव (अभि. सा. 10) ने अब्दुल लयास खान (अभि. सा. 4) के इस साक्ष्य की संपुष्टि की कि "राजा" स्नीफर डॉग घटनास्थल से गंध उठाने के पश्चात् गंध की लीक पर चलते हुए अभियुक्त के मकान पर पहुंचा था । उल्लेखनीय सुसंगत बात यह है कि अभियुक्त को इस आधार पर दोषसिद्ध नहीं किया गया है कि स्नीफर डॉग पदचिह्नों की लीक पर चलते हुए अभियुक्त के मकान पर गया था और उस पर भोंका था । कुत्ते के लीक चाल के साक्ष्य से केवल यह दर्शित होता है कि अभियुक्त को कैसे गिरफ्तार किया गया था । विचारण न्यायालय और अपील न्यायालय ने अभियुक्त के हेतु पर विचार किया था । रामचन्द्र चौरसिया (अभि. सा. 1) ने अपने साक्ष्य में यह उजागर किया कि घटना की तारीख से कुछ दिन पूर्व अभियुक्त ने उसकी पुत्री के साथ छेड़खानी की थी और उसे धमकी भी दी थी । उसकी पुत्री कुमारी "एक्स" ने अभियुक्त के दुराचार के बारे में अपने चचेरे भाई अशोक कुमार को शिकायत की थी और अशोक कुमार ने अभियुक्त को इसके लिए फटकार लगाई थी । अशोक कुमार की बाद में मृत्यु हो गई किंतु लड़की के पिता का साक्ष्य अत्यंत विश्वसनीय और विश्वासप्रद है । उपर्युक्त घटना अभियुक्त के हेतु को स्पष्ट रूप से प्रतिबिम्बित करती है ।

अभियोजन पक्ष अभिलेख पर यह साक्ष्य लाया है कि मृतका की सलवार का नाड़ा खुला हुआ पाया गया था और सलवार को नीचे खिसकाया गया था । जब उसे मृत पाया गया था, वह नंगी पड़ी हुई थी । घटनास्थल के दृश्य से यह उपदर्शित होता है कि मृतका की सलवार को उसकी लज्जा भंग करने की दृष्टि से नीचे खिसकाया गया था । उसके दुपट्टे का एक भाग उसके मुंह में ठूंसा हुआ पाया गया था ताकि वह चिल्ला न सके । दुपट्टे का अन्य भाग गर्दन के विदीर्ण घाव में पाया गया था जिससे कि रक्त सोखा जा सके । मृतका की चप्पलें कुछ दूरी पर पड़ी हुई थीं । गेहूं के पौधे पैरों के नीचे कुचले हुए पाए गए थे जिससे हिंसा

और विपदग्रस्त तथा हमलावर के बीच हाथापाई उपदर्शित होती है । लड़की के साथ छेड़खानी की घटना से यह उपदर्शित होता है कि अभियुक्त उससे संभोग करना चाहता था और इसी पृष्ठभूमि के चलते उसने लड़की के साथ बलपर्वूक बलात्संग करने का प्रयत्न किया । यह प्रतीत होता है कि लड़की साहसी और दिलेर थी और उसने अभियुक्त के बलपूर्वक प्रयत्न का विरोध किया था और इसी बात से अभियुक्त क्रुद्ध और प्रकोपित हुआ जिसके फलस्वरूप उसने ऐसा जघन्य कृत्य किया ।

चूंकि अभियुक्त की दोषिता को साबित करने के लिए कोई प्रत्यक्ष साक्ष्य नहीं है इसलिए विचारण न्यायालय और अपील न्यायालय ने उन परिस्थितियों पर विचार किया जो अभियुक्त की दोषिता को इंगित करती है । स्वीकृततः, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में किसी व्यक्ति को नामित नहीं किया गया था किंतु इस घटना का उल्लेख करते हुए कि कुमारी "एक्स" की हत्या हो गई है, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दी गई थी । चूंकि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में किसी व्यक्ति को नामित नहीं किया गया था, इसलिए अन्वेषक अधिकारी ने डॉग स्कवाड की सहायता ली और कुत्ते का संचालक अब्दुल लयास खान (अभि. सा. 4) कुत्ते के साथ आया । कुत्ते द्वारा पदचिह्न खोजने (डॉग ट्रेकिंग) की कार्यवाही की गई और कुत्ते ने अभियुक्त को खोज निकाला । उक्त तथ्य विवादग्रस्त नहीं है । अभियुक्त ने, जिसे इसके पश्चात् अभिरक्षा में लिया गया था, अपराध कारित करने के संबंध में कथन किया । यद्यपि वह कथन ग्राह्य नहीं है, तो भी उसके बताने पर दरांती तथा रक्तरंजित कपड़े बरामद किए गए थे । रिपोर्ट से यह साबित होता है कि दरांती पर रक्त लगा हुआ था । डाक्टर ने यह कथन किया है कि विपदग्रस्त को पहुंची क्षति बरामद किए गए आयुध से कारित की जा सकती है, जिससे यह सिद्ध होता है कि उक्त आयुध हत्या कारित करने में प्रयुक्त किया गया था । विपदग्रस्त के पिता, राम चन्द्र चौरसिया (अभि. सा. 1) ने यह कथन किया है कि पहले भी अभियुक्त ने उसकी पुत्री कुमारी "एक्स" के साथ छेड़खानी की थी जिसके लिए उसके भतीजे अशोक कुमार ने अभियुक्त को डांटा था । राम प्रकाश (अभि. सा. 3) ने, यद्यपि वह पक्षद्रोही हो गया था, यह कथन किया था कि अभियुक्त ने उससे यह संस्वीकृति की थी कि चूंकि लड़की ने उससे लैंगिक संबंध बनाने से इनकार कर दिया था इसलिए उसने उसकी हत्या कर दी । यद्यपि इस कथन का अभियुक्त को दोषी ठहराने के लिए स्वतंत्रतापूर्वक अवलंब नहीं लिया जा सकता है, किंतु साक्ष्य की अन्य कड़ी से केवल एक निष्कर्ष अर्थात् अभियुक्त के विरुद्ध निष्कर्ष निकलता है । हत्या के स्थल

से "दिल" बने हुए और "आई लव यू" शब्द लिखे हुए रूमाल की बरामदगी से यह सिद्ध होता है कि किसी व्यक्ति की उससे निकटता थी । उसके शरीर के निचले भाग के वस्त्र "सलवार" की स्थिति से यह सिद्ध होता है कि उस व्यक्ति ने लड़की के साथ संभोग करने की कोशिश की थी और लड़की की अंगुलियों पर पहुंची क्षतियों से भी यह सिद्ध होता है कि उसने कुछ न कुछ विरोध किया था । इन परिस्थितियों से भी यह निष्कर्ष निकलता है कि व्यक्ति, जो लड़की की लज्जा भंग करने में सफल नहीं हो सका, तो उसने उसकी हत्या कर दी । इसके प्रतिकूल कोई अन्य साक्ष्य नहीं है । इसके अतिरिक्त, यह सुझाव देने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है कि मृतका के पिता की किसी व्यक्ति के साथ कोई दुश्मनी या विद्वेष था जिस पर हत्या कारित करने का संदेह किया जा सके । इन सभी परिस्थितियों से यह साबित होता है कि कोई और नहीं अपितु वह अभियुक्त ही था जिसने बलात्संग करने का प्रयत्न किया था और मृतका कुमारी "एक्स" की हत्या की थी ।

35. मृत्यु दंडादेश अधिनिर्णीत करने के मुद्दे पर **बच्चन सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की सांविधानिक न्यायपीठ ने यह मताभिव्यक्ति की है :–

> "206. डा. चितले ने कम करने वाले निम्नलिखित तथ्यों का सुझाव दिया है –
>
> (1) यह कि अपराध घोर रूप से मानसिक अथवा संवेदनशील परेशानी की स्थिति में किया गया है ।
>
> (2) अभियुक्त की आयु, यदि अभियुक्त अल्पायु या वृद्ध है तो उसे मृत्यु दंड नहीं दिया जाएगा ।
>
> (3) इस बात की संभावना है कि अभियुक्त आगे ऐसे आपराधिक हिंसा के कृत्य नहीं करेगा जिससे समाज को खतरा बना रहे ।
>
> (4) इस बात की संभावना कि अभियुक्त का सुधार या पुनर्वास किया जा सकता है, राज्य को साक्ष्य के आधार पर यह साबित करना होगा कि अभियुक्त पूर्वोक्त शर्त सं. 3 और 4 को पूरा नहीं कर सकता है ।

---

[1] [1983] 1 उम. नि. प. 1136 = (1980) 2 एस. सी. सी. 684.

(5) यह कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के अनुसार अभियुक्त को इस बात का विश्वास है कि जो अपराध उसने किया है उसके करने में नैतिक रूप से युक्तियुक्त था ।

(6) यह कि अभियुक्त ने किसी अन्य व्यक्ति के दबाव अथवा प्रभाव के कारण ऐसा कार्य किया ।

(7) यह कि अभियुक्त की दशा से ऐसा दर्शित होता है कि वह मानसिक रूप से ठीक नहीं था और यह कि इस मानसिक दोष के कारण उसे अपने आचरण की आपराधिकता का बोध नहीं था ।"

36. **माछी सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने उन परिस्थितियों की चर्चा की थी जिनमें मृत्यु दंडादेश अधिनिर्णीत किया जा सकता है और **बचन सिंह** (उपरोक्त) वाले मामले में उपदर्शित मार्गदर्शक सिद्धांतों का निम्नलिखित सारांश दिया :–

"38. इस पृष्ठभूमि में **बच्चन सिंह** (उपरोक्त) वाले मामले में उपदर्शित मार्गदर्शक सिद्धांतों की ओर ध्यान देना होगा और प्रत्येक मामले के तथ्यों में इसे वहां लागू करना होगा जहां मृत्यु का दंडादेश अधिरोपित करने का प्रश्न उठता है । **बचन सिंह** (उपरोक्त) वाले मामले में से निम्नलिखित प्रतिपादनाएं प्रकट होती हैं –

(i) अत्यधिक आपराधिक प्रकार के गम्भीरतम मामलों के सिवाय मृत्यु की पराकाष्ठा की शास्ति अधिरोपित नहीं की जानी चाहिए ;

(ii) मृत्यु की शास्ति का विकल्प चुनने से पूर्व अपराध की परिस्थितियों सहित अपराधी की परिस्थिति को भी विचारगत किया जाना चाहिए ;

(iii) नियम आजीवन कारावास है और मृत्यु का दंडादेश एक अपवाद है । अन्य शब्दों में मृत्यु का दंडादेश तभी अधिरोपित किया जाना चाहिए जब अपराध की सुसंगत परिस्थिति को दृष्टि में रखते हुए आजीवन कारावास कुल मिलाकर अपर्याप्त दंड प्रतीत होता हो और आजीवन कारावास के दंडादेश के विकल्प का उपबंध और एकमात्र इसी का उपबंध किया गया हो, अपराध की प्रकृति और परिस्थिति को तथा सभी

---

[1] [1983] 4 उम. नि. प. 215 = (1983) 3 एस. सी. सी. 470.

सुसंगत परिस्थितियों को दृष्टि में रखते हुए शुद्ध अंतःकरण से आजीवन कारावास का दंडादेश अधिरोपित करने का प्रयोग नहीं किया जा सकता ;

(iv) गुरुतरकारी और कम करने वाली परिस्थितियों का तुलन पत्र/लेखा-जोखा तैयार करना होगा और ऐसा करते हुए कम करने वाली परिस्थितियों को पूरा महत्व देना होगा और विकल्प का प्रयोग करने के पूर्व गुरुतरकारी और कम करने वाली परिस्थितियों के बीच एक न्यायसंगत संतुलन करना होगा ।"

37. जैसा कि **संतोष कुमार सतीशभूषण बरियार** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में मत व्यक्त किया गया है, अपराध की प्रकृति, हेतु, प्रभाव, सदोषिता, साक्ष्य की गुणवता, सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियां, सुधार की संभाव्यता ऐसी बाते हैं जिन पर न्यायालय ऐसे मामलों पर विचार करते समय विचार कर सकता है ।

38. **धनंजय चटर्जी** बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य**[2] वाले मामले में उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए मृत्यु दंडादेश की अभिपुष्टि करते हुए इस न्यायालय ने हाल ही के वर्षों में बढ़ती हुई अपराध की दर, विशिष्ट रूप से स्त्रियों के प्रति हिंसात्मक अपराध, की अवेक्षा की । उक्त मामले में, इस न्यायालय ने इस सिद्धांत को दोहराया कि दंडादेश अधिरोपित करने से संबंधित कोई संक्षिप्त सूत्र अधिकथित करना संभव नहीं है किंतु दंडादिष्ट करने का उद्देश्य यह देखना होना चाहिए कि अपराध दंड रहित न रह जाए और अपराध के शिकार व्यक्ति को, साथ-ही-साथ समाज को भी, यह संतुष्टि हो कि न्याय किया गया है । उक्त मामला एक 18 वर्षीय लड़की के साथ उस फ्लैट जहां वह रह रही थी के एक सुरक्षा गार्ड द्वारा बलात्संग और हत्या करने से संबंधित था । न्यायालय ने इस मामले को मृत्यु दंडादेश अधिरोपित करने के लिए एक उपयुक्त मामला पाया ।

39. इस न्यायालय ने **अतबीर** बनाम **राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली सरकार**[3] वाले मामले जैसे अनेक मामलों में विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत और उच्च न्यायालय द्वारा यथा अभिपुष्ट मुत्यु दंडादेश की

---

[1] (2009) 6 एस. सी. सी. 498.

[2] (1994) 4 एस. सी. सी. 220.

[3] (2010) 9 एस. सी. सी. 1.

विभिन्न कारणों से ऊपर निर्दिष्ट निर्णयों में अधिकथित सिद्धांतों को लागू करते हुए पुष्टि की है ।

40. **शंकर किशनराव खाडे** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने गुरुतरकारी परिस्थितियों (अपराध परीक्षण) – कम करने वाली परिस्थितियों (आपराधिक परीक्षण) और विरल से विरलतम मामले – (विरल से विरलतम मामला परीक्षण) पर विचार किया और यह मत व्यक्त किया :–

> "52. निस्संदेह, ऊपर यथा उल्लिखित गुरुतरकारी परिस्थितियां निःशेष नहीं हैं और इसी प्रकार कम करने वाली परिस्थितियां भी निःशेष नहीं हैं । मेरे सुविचारित मत में, मुत्यु दंडादेश अधिनिर्णीत करते समय हमें जिन परीक्षणों को लागू करना है वे हैं "अपराध परीक्षण", "आपराधिक परीक्षण" और "विरल से विरलतम परीक्षण" न कि संतुलनकारी परीक्षण । मृत्यु दंडादेश अधिनिर्णीत करने के लिए, "अपराध परीक्षण" का पूर्ण रूप से समाधान हो जाना चाहिए अर्थात् शत-प्रतिशत और "आपराधिक परीक्षण" का शून्य प्रतिशत अर्थात् अभियुक्त के पक्ष में जाने वाली कोई कम करने वाली परिस्थिति न हो । यदि अपराध कारित करने के लिए आशय की कमी, सुधरने की संभाव्यता, अभियुक्त की अल्पायु, समाज के लिए खतरा न होना, पूर्व आपराधिक पृष्ठभूमि का न होना आदि जैसी अभियुक्त के पक्ष में जाने वाली कोई परिस्थिति है तो "आपराधिक परीक्षण" अभियुक्त को मृत्यु दंड से बचाने के लिए उसके पक्ष में जा सकता है । भले ही दोनों परीक्षणों का समाधान हो जाता है अर्थात् गुरुतरकारी परिस्थितियां भरपूर हैं और अभियुक्त के पक्ष में जाने वाली कम करने वाली परिस्थिति कोई नहीं है, तब भी हमें अंतिमतः विरल से विरलतम मामले का परीक्षण (आर-आर परीक्षण) लागू करना होगा । विरल से विरलतम मामले का परीक्षण समाज की धारणा पर निर्भर करता है अर्थात् "समाज-केन्द्रस्थ" है न कि "न्यायाधीश केन्द्रस्थ", अर्थात् क्या समाज कतिपय प्रकार के अपराधों के लिए मृत्यु दंडादेश अधिनिर्णीत करने की बात का अनुमोदन करेगा या नहीं । इस परीक्षण को लागू करते समय न्यायालय को मानसिक रूप से विक्षप्त अप्राप्तवय लड़कियों, शारीरिक विकलांगता से ग्रस्त और ऐसी ही निःशक्तताओं

---

[1] (2013) 5 एस. सी. सी. 546.

से ग्रस्त वृद्ध और अशक्त स्त्रियों पर लैंगिक हमला और हत्या जैसे कई प्रकार के अपराधों के प्रति समाज की वीभत्सा, अत्यंत रोष और घृणा जैसी कई बातों को ध्यान में रखना चाहिए । ये उदाहरण केवल दृष्टांत-स्वरूप हैं न कि निःशेष । न्यायालय मृत्यु दंडादेश इसलिए अधिनिर्णीत करते हैं चूंकि लोगों की इच्छा द्वारा न कि न्यायाधीशों की इच्छा द्वारा प्रतिबिम्बित संवैधानिक बाध्यता के कारण परिस्थिति ऐसी मांग करती है ।"

41. **रामनरेश और अन्य** बनाम **छत्तीसगढ़ राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने उक्त मामले के तथ्यों पर विभिन्न सिद्धांतों को लागू करते हुए और अभियुक्त की आयु, मृतक की दुर्घटनावश होने वाली मृत्यु और अभियुक्त द्वारा अपने आप को सुधारने की संभाव्यता पर विचार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि अभियुक्त को समाज के प्रति खतरे की संज्ञा नहीं दी जा सकती है और मृत्यु दंडादेश को आजीवन कारावास (21 वर्ष) में परिवर्तित कर दिया ।

42. वर्तमान मामले में, दंडोदश की मात्रा के प्रश्न पर अपीलार्थी की ओर से दी गई दलील यह है कि अभियुक्त अपराध कारित करने के समय अल्पायु अर्थात् 21 वर्ष का था, उसका मृतका की हत्या करने का कोई आशय नहीं था और उसकी कोई पूर्व आपराधिक पृष्ठभूमि नहीं है ।

43. दूसरी ओर, राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि यह एक जघन्य अपराध था और अपीलार्थी का मामला **धनंजय चटर्जी** (उपरोक्त) वाले मामले जैसा है ।

44. हमने **धनंजय चटर्जी** (उपरोक्त) वाले मामले पर विचार किया है । उक्त मामले में अभियुक्त एक सुरक्षा गार्ड था और फ्लैटों के निवासियों को सुरक्षा मुहैया कराने के लिए उत्तरदायी था । इसके बजाय उसने एक महिला निवासी की अल्पायु लड़की के साथ छेड़खानी करने लगा । महिला निवासी की शिकायत पर उसका स्थानांतरण कर दिया गया । इसका प्रतिशोध लेने के लिए वह महिला के फ्लैट में गया और उसकी पुत्री के साथ बलात्कार किया और उसकी निर्दयतापूर्वक हत्या कर दी । यह ऐसा मामला था जहां निवासियों की संरक्षा करने वाला ही अपराधी बन गया ।

---

[1] (2012) 4 एस. सी. सी. 257.

45. अपीलार्थी का मामला इसके समान नहीं है । विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने गलत रूप से यह अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी का मामला **धनंजय चटर्जी** (उपरोक्त) वाले मामले के समान है ।

46. वर्तमान मामले में, पारिस्थितिक साक्ष्य से केवल यह निष्कर्ष निकलता है कि अपीलार्थी ने बलात्संग करने का प्रयत्न किया था और विरोध होने पर उसने मृतका की हत्या कर दी । घटना के समय अपीलार्थी की आयु लगभग 21 वर्ष थी । प्रारंभ में जब मृत्यु दंडादेश की पुष्टि का मामला उच्च न्यायालय के दो न्यायाधीशों द्वारा सुना गया था तब उनकी अलग-अलग राय थी और एक न्यायाधीश ने मृत्यु दंडादेश की पुष्टि की जबकि दूसरे न्यायाधीश ने अपीलार्थी को दोषमुक्त कर दिया । वह दूसरी न्यायपीठ थी जिसने मृत्यु दंडादेश की अभिपुष्टि की । अभियोजन का यह पक्षकथन नहीं है कि अपीलार्थी को सुधारा नहीं जा सकता है । वास्तव में, उसके सुधरने की संभाव्यता से इनकार नहीं किया जा सकता है । अपीलार्थी की कोई आपराधिक पृष्ठभूमि नहीं है । न्यायालय को **बचन सिंह** (उपरोक्त) वाले मामले में यथा अधिकथित और **माछी सिंह** (उपरोक्त) वाले मामले में अनुसृत विभिन्न मानदंडों पर विचार करना चाहिए और मृत्यु दंडादेश अधिरोपित करने की आवश्यकता के प्रति कम करने वाली परिस्थितियों का संतुलन बनाना चाहिए ।

47. वर्तमान मामले के तथ्यों पर विभिन्न सिद्धांतों को लागू करने पर हमारी यह राय है कि अभियुक्त की आयु पर विचार करते हुए उसके सुधरने की संभाव्यता से इनकार नहीं किया जा सकता है । उसे समाज के लिए खतरे की संज्ञा नहीं दी जा सकती है । इसके अतिरिक्त, यह मामला "विरल से विरलतम" प्रवर्ग के अंतर्गत नहीं आता है । इसलिए हम मृत्यु दंडादेश को कायम नहीं रख सकते हैं ।

48. पूर्वोक्त कारणों से हम अभियुक्त ललित कुमार यादव **उर्फ** कुरी के मृत्यु दंडादेश को आजीवन कारावास में परिवर्तित करते हैं, किंतु दोषसिद्धि और दंडादेश के शेष भाग की अभिपुष्टि करते हैं । यह अपील केवल दंडादेश की मात्रा के संबंध में भागतः मंजूर की जाती है ।

अपील भागतः मंजूर की गई ।

जस.

गतांक से आगे.....

अध्याय 4

पशुओं पर प्रयोग

14. **पशुओं पर प्रयोग** – इस अधिनियम की कोई भी बात शरीर-क्रियात्मक ज्ञान या ऐस ज्ञान को, जो जीवन को बचाने या दीर्घ बनाने के लिए, या यातना न्यून करने या मनुष्यों, पशुओं अथवा पौधों को लगने वाले किसी रोग की रोकथाम के लिए उपयोगी हो, नई खोज द्वारा, समुन्नत करने के प्रयोजनार्थ प्रयोगों के किए जाने को (जिनके अन्तर्गत पशुओं पर शल्य-क्रिया सम्बन्धी प्रयोग भी हैं) विधि विरुद्ध नहीं बनाएगी ।

15. **पशुओं पर प्रयोगों संबंधी नियंत्रण और पर्यवेक्षण के लिए समिति** – (1) यदि बोर्ड कि सलाह पर किसी भी समय केन्द्रीय सरकार की यह राय हो कि पशुओं पर प्रयोगों के नियंत्रण और पर्यवेक्षण के लिए ऐसा करना आवश्यक है तो, वह, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, एक समिति का गठन कर सकेगी जिसमें उतने पदधारी और अशासकीय व्यक्ति होंगे जितने वह उस समिति में नियुक्त करना ठीक समझे ।

(2) केन्द्रीय सरकार समिति के सदस्यों में से एक को उसका अध्यक्ष नामनिर्दिष्ट करेगी ।

(3) समिति को अपने कर्तव्यों के पालन के सम्बन्ध में अपनी प्रक्रिया विनियमित करने की शक्ति होगी ।

(4) समिति की निधियों में, उसे सरकार द्वारा समय-समय पर दिए गए अनुदान तथा किसी व्यक्ति द्वारा दिए गए अंशदान, संदान, अभिदान, वसीयत-सम्पत्ति, दान और इसी प्रकार की प्राप्तियां सम्मिलित होंगी ।

[1][**15क. उप समितियां** – (1) समिति की किसी शक्ति का प्रयोग करने या उसके किसी कर्तव्य का निर्वहन करने के लिए या किसी ऐसे विषय पर, जो समिति निर्देशित करे, जांच करने या रिपोर्ट और सलाह देने के लिए समिति उतनी उप समितियां गठित कर सकेगी जितनी वह उचित समझे ।

(2) उप समिति केवल समिति के सदस्यों से गठित होगी ।]

16. **समिति का कर्मचारिवृन्द** – केन्द्रीय सरकार के नियंत्रण के

---

[1] 1982 के अधिनियम सं. 26 की धारा 13 द्वारा अंतःस्थापित ।

अधीन रहते हुए, समिति अपनी शक्तियों का प्रयोग तथा अपने कर्तव्यों का पालन करने के लिए अपने को समर्थ बनाने के निमित्त उतने अधिकारियों तथा अन्य कर्मचारियों को नियुक्त कर सकेगी जितने आवश्यक हों और ऐसे अधिकारियों तथा अन्य कर्मचारियों के पारिश्रमिक तथा उनकी सेवा के अन्य निबंधन और शर्तें अवधारित कर सकेगी ।

17. **समिति के कर्तव्य और पशुओं पर किए जाने वाले प्रयोगों के सम्बन्ध में नियम बनाने की समिति की शक्ति** – (1) समिति का यह कर्तव्य होगा कि वह यह सुनिश्चित करने के लिए कि पशुओं पर किए जाने वाले प्रयोगों से पूर्व, उनके दौरान, या उनके पश्चात् उन्हें अनावश्यक पीड़ा या यातना न पहुंचे ऐसे सभी उपाय करे, जो आवश्क हों, और उस प्रयोजन के लिए वह भारत के राजपत्र में अधिसूचना द्वारा और पूर्व प्रकाशन की शर्त के अधीन रहते हुए, ऐसे प्रयोगों के किए जाने के सम्बन्ध में ऐसे नियम बना सकेगी जिन्हें वह ठीक समझे ।

[1][(1क) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियम निम्नलिखित विषयों के लिए उपबन्ध कर सकेंगे, अर्थात् :–

(क) पशुओं पर प्रयोग करने वाले व्यक्तियों या संस्थाओं का रजिस्ट्रीकरण ;

(ख) वे रिपोर्टें और अन्य जानकारी जो पशुओं पर प्रयोग करने वाले व्यक्तियों और संस्थाओं द्वारा समिति को भेजी जाएंगी ।]

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, समिति द्वारा बनाए गए नियम इस प्रकार के होंगे जो निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति सुनिश्चित कर सकें, अर्थात् :–

(क) उन दशाओं में, जिनमें प्रयोग किसी संस्था द्वारा किए जाएं, उनकी जिम्मेदारी उस संस्था के भारसाधक व्यक्ति की होगी, और उन दशाओं में, जिनमें प्रयोग संस्था के बाहर किन्हीं व्यक्तियों द्वारा किए जाएं, वो व्यक्ति उस निमित्त अर्हित हों और प्रयोग उनकी पूरी-पूरी जिम्मेदारी पर किए जाएं ;

(ख) प्रयोग सम्यक् सतर्कता और सहृदयता के साथ किए जाएं और शल्य-क्रिया वाले प्रयोग यथासंभव पर्याप्त शक्ति के संज्ञाहारी के

---

[1] 1982 के अधिनियम सं. 26 की धारा 14 द्वारा अंतःस्थापित ।

प्रभावाधीन किए जाएं जिससे कि पशुओं को पीड़ा का अनुभव न हो ;

(ग) ऐसे पशु, जो संज्ञाहारियों के प्रभावाधीन प्रयोग के क्रम में इतने क्षत हो जाएं कि उनके ठीक होने के पश्चात् भी उन्हें गंभीर यातना बनी रहे, जब वे संज्ञाहीन ही हों तभी, साधारणतया नष्ट कर दिए जाएं ;

(घ) जहां कहीं, उदाहरणार्थ चिकित्सा संबंधी स्कूलों, अस्पतालों, कालेजों जैसे स्थानों में, पशुओं पर प्रयोगों पर परिवर्जन कर सकना संभव हो वहां उस दशा में ऐसा ही किया जाए जब पुस्तकों, माडल, फिल्म और अन्य वैसी ही शिक्षण-प्रयुक्तियां समान रूप से पर्याप्त हों ;

(ङ) बड़े-बड़े पशुओं पर प्रयोग न किए जाएं यदि गिनी-पिग, शशक, मेंढक और चूहे जैसे छोटे-छोटे पशुओं पर प्रयोग करके वही परिणाम प्राप्त करना संभव हो ;

(च) जहां तक संभव हो, हस्तकौशल प्राप्त करने के प्रयोजन के लिए ही प्रयोग न किए जाएं ;

(छ) प्रयोग किए जाने के लिए आशयित पशुओं की, प्रयोगों से पूर्व और पश्चात् दोनों ही समय समुचित रूप से देखरेख रखी जाए ;

(ज) पशुओं पर किए गए प्रयोगों के संबंध में समुचित अभिलेख रखे जाएं ।

(3) इस धारा के अधीन नियम बनाने में, समिति का मार्गदर्शन ऐसे निदेशों द्वारा होगा, जो केन्द्रीय सरकार (उन उद्देश्यों के अनुरूप जिनके लिए समिति स्थापित की गई है) उसे दे और केन्द्रीय सरकार को ऐसे निदेश देने के लिए इसके द्वारा प्राधिकृत किया जाता है ।

(4) समिति द्वारा बनाए गए सभी नियम संस्थाओं के बाहर प्रयोग करने वाले सभी व्यक्तियों तथा ऐसे व्यक्तियों पर आबद्धकर होंगे जो उन संस्थाओं के भारसाधक हैं जिनमें प्रयोग किए जाते हैं ।

18. **प्रवेश तथा निरीक्षण करने की शक्ति** – यह सुनिश्चित करने के प्रयोजनार्थ कि समिति द्वारा बनाए गए नियमों का अनुपालन किया जाता है समिति अपने अधिकारियों में से किसी को या किसी अन्य व्यक्ति को लिखित रूप में इस बात के लिए प्राधिकृत कर सकेगी कि वह किसी संस्था या स्थान का, जहां प्रयोग किए जा रहे हों, निरीक्षण करे और ऐसे निरीक्षण के परिणाम की उसे रिपोर्ट दे, और इस प्रकार प्राधिकृत अधिकारी

या व्यक्ति, –

(क) ऐसे किसी समय, जिसे वह उचित समझता है, किसी ऐसी संस्था या स्थान में, जहां पशुओं पर प्रयोग किए जा रहे हों, प्रवेश कर सकेगा और उसका निरीक्षण कर सकेगा ; और

(ख) किसी व्यक्ति से यह अपेक्षा कर सकेगा कि वह पशुओं पर किए गए प्रयोगों के बारे में अपने द्वारा रखा गया कोई अभिलेख प्रस्तुत करे ।

19. **पशुओं पर प्रयोगों का प्रतिषेध करने की शक्ति** – यदि धारा 18 के अधीन किए गए किसी निरीक्षण के परिणामस्वरूप, समिति को दी गई किसी अधिकारी या अन्य व्यक्ति की रिपोर्ट पर, या अन्यथा, उस समिति का यह समाधान हो जाता है कि धारा 17 के अधीन उसके द्वारा बनाए गए नियमों का किसी ऐसे व्यक्ति या संस्था द्वारा अनुपालन नहीं किया जा रहा है जो पशुओं पर प्रयोग कर रहा है तो समिति, उस व्यक्ति या संस्था को उस मामले में सुनवाई का अवसर देने के पश्चात्, आदेश द्वारा, उस व्यक्ति या संस्था को ऐसा कोई प्रयोग करने के लिए, या तो किसी विनिर्दिष्ट अवधि तक के लिए या अनिश्चित काल के लिए प्रतिषिद्ध कर सकेगी, अथवा उस व्यक्ति या संस्था को, ऐसी विशेष शर्तों के अधीन रहते हुए, जिन्हें अधिरोपित करना समिति ठीक समझे, ऐसे प्रयोग करने की अनुज्ञा दे सकेगी ।

20. **शास्तियां** – यदि कोई व्यक्ति, –

(क) धारा 19 के अधीन समिति द्वारा किए गए किसी आदेश का उल्लंघन करेगा ; अथवा

(ख) उस धारा के अधीन समिति द्वारा अधिरोपित किसी शर्त को भंग करेगा,

तो वह जुर्माने से, जो दो सौ रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा और यदि वह उल्लंघन या शर्त-भंग किसी संस्था में हुआ है तो उस संस्था के भारसाधक व्यक्ति को उस अपराध का दोषी समझा जाएगा और तद्नुसार वह दंडनीय होगा ।

अध्याय 5

करतब दिखाने वाले पशु

21. **"प्रदर्शन" और "प्रशिक्षण" की परिभाषा** – इस अध्याय में,

"प्रदर्शन" से किसी ऐसे खेल-तमाशे में प्रदर्शन अभिप्रेत है जिसमें टिकट बेच करके जनता को प्रवेश दिया जाता है, और "प्रशिक्षण" से ऐसे किसी प्रदर्शन के प्रयोजनार्थ प्रशिक्षण अभिप्रेत है, और "प्रदर्शक" तथा "प्रशिक्षक" पदों के क्रमश: तत्सम अर्थ हैं ।

22. **करतब दिखाने वाले पशुओं के प्रदर्शन और प्रशिक्षण पर निर्बंधन** – कोई भी व्यक्ति –

(i) करतब दिखाने वाले किसी पशु का तब तक प्रदर्शन नहीं करेगा या उसे प्रशिक्षण नहीं देगा जब तक कि वह व्यक्ति इस अध्याय के उपबंधों के अनुसार रजिस्ट्रीकृत न हो ;

(ii) किसी ऐसे पशु का, जिसे केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, ऐसे पशु के रूप में विनिर्दिष्ट करे जिसे करतब दिखाने वाले पशु के रूप में न तो प्रदर्शित किया जाएगा और न ही प्रशिक्षित किया जाएगा, करतब दिखाने वाले पशु के रूप में न तो प्रदर्शन करेगा और न उसे प्रशिक्षण देगा ।

23. **रजिस्ट्रीकरण की प्रक्रिया** – (1) करतब दिखाने वाले किसी पशु का प्रदर्शन करने या उसे प्रशिक्षण देने की इच्छा रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति को, जब तक कि वह ऐसा व्यक्ति न हो जो इस अध्याय के अधीन न्यायायल द्वारा किए गए किसी आदेश के आधार पर इस प्रकार रजिस्ट्रीकृत होने का हकदार न हो, विहित प्राधिकारी को विहित रूप में आवेदन दिए जाने तथा विहित फीस अदा किए जाने पर, इस अधिनियम के अधीन रजिस्टर किया जाएगा ।

(2) इस अध्याय के अधीन रजिस्ट्रीकरण के लिए आवेदन में, पशुओं के बारे में और जिन करतब में पशुओं का प्रदर्शन किया जाना है या जिस करतब के लिए उन्हें प्रशिक्षण दिया जाना है उसकी साधारण प्रकृति के बारे में, ऐसी विशिष्टियां दी जाएंगी जो विहित की जाएं, और इस प्रकार दी गई विशिष्टियां विहित प्राधिकारी द्वारा रखे गए रजिस्टर में दर्ज की जाएंगी ।

(3) विहित प्राधिकारी प्रत्येक व्यक्ति को, जिसका नाम उसके द्वारा रखे गए रजिस्टर में दर्ज है, रजिस्ट्रीकरण का विहित प्ररूप में एक प्रमाणपत्र देगा जिसमें रजिस्टर में दर्ज विशिष्टियां होंगी ।

(4) इस अध्याय के अधीन रखा गया प्रत्येक रजिस्टर, विहित फीस अदा करने पर, निरीक्षण के लिए हर उचित समय पर उपलब्ध रहेगा और

विहित फीस अदा करने पर कोई भी व्यक्ति उसकी प्रतियां पाने तथा उसमें से उद्धरण लेने का हकदार होगा ।

(5) कोई भी व्यक्ति, जिसका नाम रजिस्टर में दर्ज है, किसी न्यायालय द्वारा इस अधिनियम के अधीन किए गए किसी आदेश के उपबंधों के अधीन रहते हुए, अपने बारे में रजिस्टर में दर्ज विशिष्टियां परिवर्तित कराने का, उस प्रयोजन के लिए आवेदन करने पर, हकदार होगा, और जहां ऐसी कोई विशिष्टियां इस प्रकार परिवर्तित की जाती हैं वहां विद्यमान प्रमाणपत्र रद्द कर दिया जाएगा और नया प्रमाणपत्र जारी किया जाएगा ।

24. **करतब दिखाने वाले पशुओं के प्रदर्शन के प्रशिक्षण को प्रतिषिद्ध या निर्बन्धित करने की न्यायालय की शक्ति** – (1) जहां किसी पुलिस अधिकारी द्वारा, या धारा 23 में निर्दिष्ट विहित प्राधिकारी द्वारा लिखित रूप में प्राधिकृत किसी अधिकारी द्वारा, किए गए किसी परिवाद पर किसी मजिस्ट्रेट के समाधानप्रद रूप में यह साबित कर दिया जाता है कि करतब दिखाने वाले किसी पशु का प्रशिक्षण या प्रदर्शन अनावश्यक पीड़ा या यातना के साथ किया गया है और उसे प्रतिषिद्ध या कुछ शर्तों पर ही अनुज्ञात किया जाना चाहिए वहां, न्यायालय ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध, जिसके बारे में परिवाद किया गया है, प्रशिक्षण या प्रदर्शन को प्रतिषेध करते हुए, या उसके संबंध में ऐसी शर्तें अधिरोपित करते हुए, आदेश दे सकेगा जो उस आदेश में विनिर्दिष्ट की जाएं ।

(2) कोई भी न्यायालय, जिसके द्वारा इस धारा के अधीन कोई आदेश किया जाता है, उस आदेश के किए जाने के पश्चात् यथाशक्यशीघ्र उसकी एक प्रति उस विहित प्राधिकारी को भिजवाएगा जिसके द्वारा वह व्यक्ति, जिसके विरुद्ध आदेश दिया गया है, रजिस्टर किया गया है, और आदेश की विशिष्टियां उस व्यक्ति द्वारा धारित प्रमाणपत्र पर पृष्ठांकित कराएगा और वह व्यक्ति, पृष्ठांकन के प्रयोजनों के लिए न्यायालय द्वारा प्रमाणपत्र के इस प्रकार अपेक्षित किए जाने पर, प्रमाणपत्र पेश करेगा, तथा वह विहित प्राधिकारी, जिसे इस धारा के अधीन आदेश की कोई प्रति भेजी जाए, उस रजिस्टर में आदेश की विशिष्टियां दर्ज करेगा ।

25. **परिसर में प्रवेश करने की शक्ति** – (1) धारा 23 में निर्दिष्ट विहित प्राधिकारी द्वारा लिखित रूप में प्राधिकृत कोई भी व्यक्ति और कोई पुलिस अधिकारी, जो उप-निरीक्षक से नीचे की पंक्ति का न हो, –

(क) किसी भी ऐसे परिसर में, जिसमें करतब दिखाने वाले

पशुओं को प्रशिक्षित या प्रदर्शित किया जाता हो अथवा उन्हें प्रशिक्षण या प्रदर्शन के लिए रखा जाता हो, किसी भी उचित समय पर प्रवेश कर सकेगा और उसका तथा उसमें पाए गए ऐसे किसी भी पशु का निरीक्षण कर सकेगा ; और

(ख) किसी भी व्यक्ति से, जिसके बारे में उसके पास यह विश्वास करने का कारण हो कि वह करतब दिखाने वाले पशुओं का प्रशिक्षक या प्रदर्शक है, यह अपेक्षा कर सकेगा कि वह अपना रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र पेश करे ।

(2) उपधारा (1) में निर्दिष्ट कोई भी व्यक्ति या पुलिस अधिकारी, करतब दिखाने वाले पशुओं के सार्वजनिक तमाशे के दौरान, स्टेज पर या उसके पीछे जाने के लिए, इस धारा के अधीन अधिकृत नहीं होगा ।

26. **अपराध** – यदि कोई व्यक्ति, –

(क) जो इस अध्याय के अधीन रजिस्ट्रीकृत नहीं है, करतब दिखाने वाले किसी पशु का प्रदर्शन करेगा या उसे प्रशिक्षण देगा ; अथवा

(ख) इस अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत होते हुए, करतब दिखाने वाले किसी ऐसे पशु का, जिसकी बाबत, या ऐसी रीति से, जिसकी बाबत, वह रजिस्ट्रीकृत नहीं है, प्रदर्शन करेगा या उसे प्रशिक्षण देगा; अथवा

(ग) किसी ऐसे पशु का, करतब दिखाने वाले पशु के रूप में प्रदर्शन करेगा या उसे प्रशिक्षण देगा जो धारा 22 के खंड (ii) के अधीन जारी की गई अधिसूचना के कारण उक्त प्रयोजन के लिए प्रयोग में नहीं लाया जाना है ; अथवा

(घ) प्रवेश और निरीक्षण के बारे में इस अधिनियम के अधीन शक्तियों का प्रयोग करने में, धारा 25 में निर्दिष्ट किसी व्यक्ति या पुलिस अधिकारी को बाधा पहुंचाएगा या जानबूझकर टालमटोल करेगा ; अथवा

(ङ) ऐसे निरीक्षण से बचने की दृष्टि से किसी पशु को छिपाएगा ; अथवा

(च) इस अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत व्यक्ति होते हुए, इस अधिनियम के अधीन अपना प्रमाणपत्र पेश करने के लिए इस

अधिनियम के अनुसरण में सम्यक् रूप में अपेक्षित किए जाने पर, बिना उचित कारण के वैसा करने में असफल रहेगा; अथवा

(छ) जब कि वह इस अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत होने का हकदार नहीं है तब ऐसे रजिस्ट्रीकरण के लिए आवेदन देगा,

तो वह दोषसिद्ध किए जाने पर जुर्माने से, जो पांच सौ रुपए तक का हो सकेगा, या कारावास से, जिसकी अवधि तीन मास तक की हो सकेगी, या दोनों से, दंडनीय होगा ।

27. **छूट** – इस अध्याय की कोई भी बात, –

(क) वास्तविक सैनिक या पुलिस प्रयोजनों के लिए पशुओं के प्रशिक्षण को, अथवा इस प्रकार प्रशिक्षित किन्हीं पशुओं के प्रदर्शन को, लागू नहीं होगी ; अथवा

(ख) किसी चिड़ियाघर में या किसी ऐसी सोसाइटी या संगम द्वारा रखे गए पशुओं को लागू नहीं होगी जिसका मुख्य उद्देश्य शैक्षणिक या वैज्ञानिक प्रयोजनों के लिए पशुओं का प्रदर्शन करना है ।

अध्याय 6

प्रकीर्ण

28. **धर्म द्वारा विहित वध की रीति के संबंध में व्यावृत्ति** – इस अधिनियम की कोई भी बात किसी समुदाय के धर्म द्वारा अपेक्षित रीति से किसी पशु के वध को अपराध नहीं बनाएगी ।

29. **सिद्धदोष व्यक्ति को, पशु के स्वामित्व से वंचित करने की न्यायालय की शक्ति** – (1) यदि यह पाया जाता है कि किसी पशु का स्वामी इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध का दोषी है तो न्यायालय, उस अपराध के लिए उसे सिद्धदोष ठहराए जाने पर, यदि न्यायालय ठीक समझे तो, किसी अन्य दंड के साथ-साथ यह आदेश भी कर सकेगा कि जिस पशु की बाबत अपराध किया गया था वह सरकार के प्रति समपहृत कर लिया जाए और इसके अतिरिक्त, पशु के व्ययन के संबंध में ऐसा आदेश भी कर सकेगा जिसे वह परिस्थितियों में ठीक समझे ।

(2) उपधारा (1) के अधीन कोई भी आदेश तब तक नहीं किया जाएगा जब तक कि इस अधिनियम के अधीन किसी पूर्वतन दोषसिद्धि के बारे में साक्ष्य द्वारा अथवा स्वामी के चरित्र के बारे में या अन्यथा पशु के

प्रति बर्ताव के बारे में यह दर्शित नहीं कर दिया जाता कि यदि उस पशु को स्वामी के पास छोड़ दिया जाएगा तो उसके प्रति और भी क्रूरता होना संभाव्य है ।

(3) उपधारा (1) के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, न्यायालय यह आदेश भी दे सकेगा कि इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराया गया व्यक्ति किसी भी किस्म के पशु को, या आदेश में विनिर्दिष्ट किसी प्रकार या नस्ल के पशु को, जैसा भी न्यायालय ठीक समझे, अभिरक्षा में रखने से स्थायी रूप से अथवा ऐसी अवधि के दौरान, जो आदेश द्वारा नियत की जाए, प्रतिषिद्ध होगा ।

(4) उपधारा (3) के अधीन कोई भी आदेश तब तक नहीं किया जाएगा जब तक –

(क) किसी पूर्वतन दोषसिद्धि के बारे में साक्ष्य द्वारा अथवा उक्त व्यक्ति के चरित्र के बारे में, या अन्यथा उस पशु के प्रति बर्ताव के बारे में, जिसके संबंध में उसे दोषसिद्ध किया गया है, यह दर्शित न किया गया हो कि उक्त व्यक्ति की अभिरक्षा में के पशु के प्रति क्रूरता की जानी संभाव्य है ;

(ख) उस परिवाद में, जिस पर दोषसिद्धि हुई थी, यह उल्लेख न किया गया हो कि परिवादी का आशय यह अनुरोध करना है कि अपराधी के दोषसिद्ध किए जाने पर उसे यथापूर्वोक्त आदेश दिए जाएं ; और

(ग) वह अपराध, जिसके लिए दोषसिद्धि हुई थी, ऐसे क्षेत्र में न किया गया हो जिसमें किसी ऐसे पशु को रखने के लिए, जिसकी बाबत दोषसिद्धि हुई थी, तत्समय प्रवृत्त विधि के अधीन अनुज्ञप्ति लेना आवश्यक है ।

(5) तत्समय प्रवृत्त किसी विधि में किसी प्रतिकूल बात के होते हुए भी, किसी भी व्यक्ति को, जिसकी बाबत उपधारा (3) के अधीन कोई आदेश किया गया है, उस आदेश के उपबंधों के प्रतिकूल किसी पशु को अपनी अभिरक्षा में रखने का अधिकार नहीं होगा और यदि वह आदेश के उपबंधों का उल्लंघन करेगा तो वह जुर्माने से, जो एक सौ रुपए तक का हो सकेगा, या कारावास से, जिसकी अवधि तीन मास तक की हो सकेगी, या दोनों से, दंडनीय होगा ।

(6) कोई भी न्यायालय, जिसने उपधारा (3) के अधीन कोई आदेश दिया है, स्वप्रेरणा से या इस निमित्त उसे किए गए आवेदन पर, किसी भी समय उस आदेश का विखंडन या उपान्तरण कर सकेगा ।

30. **कतिपय दशाओं में दोष के बारे में उपधारणा** – यदि कोई व्यक्ति धारा 11 की उपधारा (1) के खंड (ठ) के उपबंधों के प्रतिकूल किसी बकरी, गाय या उसकी संतति का वध करने के अपराध से आरोपित किया गया है और यह साबित हो जाता है कि जिस समय अपराध का किया जाना अभिकथित है उस समय उस व्यक्ति के कब्जे में ऐसे किसी पशु की, जो इस धारा में निर्दिष्ट है, सिर की खाल के किसी भाग से संलग्न कोई खाल थी तो, जब तक प्रतिकूल साबित न कर दिया जाए, यह उपधारणा की जाएगी कि उस पशु का वध क्रूरता से किया गया था ।

31. **अपराधों की संज्ञेयता** – दंड प्रक्रिया संहिता, 1898[1] (1898 का 5) में किसी बात के होते हुए भी, धारा 11 की उपधारा (1) के खंड (ठ), खंड (ढ), खंड (ण) या धारा 12 के अधीन दंडनीय अपराध उस संहिता के अर्थ में संज्ञेय अपराध होगा ।

32. **तलाशी और अभिग्रहण की शक्तियां** – (1) यदि किसी पुलिस अधिकारी के पास, जो उप-निरीक्षक की पंक्ति से नीचे का नहीं है, या इस निमित्त राज्य सरकार द्वारा प्राधिकृत किसी व्यक्ति के पास यह विश्वास करने का कारण है कि धारा 30 में निर्दिष्ट किसी ऐसे पशु के सम्बन्ध में धारा 11 की उपधारा (1) के खण्ड (ठ) के अधीन कोई अपराध किसी स्थान में किया जा रहा है या किया ही जाने वाला है या किया गया है या किसी व्यक्ति के कब्जे में ऐसे पशु की ऐसी खाल है जिससे सिर की खाल का कोई भाग संलग्न है तो वह ऐसे स्थान या किसी भी स्थान में, जिसके बारे में उसके पास यह विश्वास करने का कारण है कि वहां ऐसी कोई खाल है, प्रवेश कर सकेगा और तलाशी ले सकेगा और ऐसी कोई खाल या वस्तु या चीज, जो ऐसा अपराध करने में प्रयुक्त की गई हो या की जानी आशयित हो, अभिगृहीत कर सकेगा ।

(2) यदि किसी पुलिस अधिकारी के पास, जो उप-निरीक्षक की पंक्ति से नीचे का नहीं है, या इस निमित्त राज्य सरकार द्वारा प्राधिकृत किसी

---

[1] अब देखिए दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) ।

व्यक्ति के पास यह विश्वास करने का कारण है कि उसकी अधिकारिता की सीमाओं के भीतर किसी पशु पर फूका या [1][डूम देव या धारा 12 में निर्दिष्ट प्रकृति की कोई क्रिया की गई है या की जा रही है,] तो वह उस स्थान में प्रवेश कर सकेगा जिसमें उसे उस पशु के होने का विश्वास है और वह उस पशु को अभिगृहीत कर सकेगा और उसे उस क्षेत्र के, जिसमें वह पशु अभिगृहीत किया गया है, भारसाधक पशु चिकित्सा अधिकारी के पास परीक्षा के लिए ले जाएगा ।

33. **तलाशी वारण्ट** – (1) यदि किसी प्रथम या द्वितीय वर्ग के मजिस्ट्रेट या प्रेसिडेंसी मजिस्ट्रेट या उपखण्ड मजिस्ट्रेट या पुलिस आयुक्त या जिला पुलिस अधीक्षक के पास, लिखित इत्तिला पर और ऐसी जांच के पश्चात् जैसी वह ठीक समझे, यह विश्वास करने का कारण हो कि किसी स्थान में इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध किया गया है या किया जा रहा है या किया ही जाने वाला है तो वह या तो स्वयं उस स्थान में प्रवेश करके तलाशी ले सकेगा या अपने अधिपत्र द्वारा किसी पुलिस अधिकारी को, जो उप-निरीक्षक की पंक्ति से नीचे का न हो, उस स्थान में प्रवेश करने और तलाशी लेने के लिए प्राधिकृत कर सकेगा ।

(2) तलाशियों से सम्बन्धित दंड प्रक्रिया संहिता, 1898[2] (1898 का 5) के उपबन्ध, जहां तक वे लागू किए जा सकते हैं, इस अधिनियम के अधीन तलाशियों को लागू किए जाएंगे ।

34. **परीक्षा के लिए अभिग्रहण की साधारण शक्ति** – कान्स्टेबल की पंक्ति से ऊपर का कोई पुलिस अधिकारी या राज्य सरकार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत कोई व्यक्ति, जिसके पास यह विश्वास करने का कारण हो कि किसी पशु के संबंध में इस अधिनियम के विरुद्ध कोई अपराध किया गया है या किया जा रहा है, यदि उसकी राय में परिस्थितियों से ऐसा अपेक्षित है तो, उस पशु को अभिगृहीत कर सकेगा और उसे किसी निकटवर्ती मजिस्ट्रेट द्वारा या किसी ऐसे पशु चिकित्सा अधिकारी द्वारा, जो विहित किया जाए, परीक्षा के लिए ले जाएगा; और ऐसा पुलिस अधिकारी या प्राधिकृत व्यक्ति उस पशु को अभिगृहीत करते समय उसके भारसाधक व्यक्ति से परीक्षास्थल तक उसके साथ चलने की अपेक्षा कर सकेगा ।

---

[1] 1982 के अधिनियम सं. 26 की धारा 15 द्वारा "डूम देव किया गया है या किया जा रहा है" शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[2] अब देखिए दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) ।

35. **पशुओं का उपचार और देखरेख** – (1) राज्य सरकार, साधारण या विशेष आदेश द्वारा, ऐसे पशुओं के उपचार और उनकी देखरेख के लिए, जिनके सम्बन्ध में इस अधिनियम के विरुद्ध अपराध किए गए हैं रुग्णावास नियत कर सकेगी और मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किए जाने के समय तक के लिए किसी पशु का उसमें निरोध प्राधिकृत कर सकेगी ।

(2) वह मजिस्ट्रेट, जिसके समक्ष इस अधिनियम के विरुद्ध किए गए अपराध के लिए अभियोजन संस्थित किया गया है, यह निदेश दे सकेगा कि सम्बद्ध पशु की तब तक रुग्णशाला में देखरेख और उपचार किया जाए जब तक वह अपना सामान्य कार्य करने योग्य न हो जाए या अन्यथा उन्मोचन के योग्य न हो जाए, या यह निदेश दे सकेगा कि वह पिंजरापोल में भेज दिया जाए, या यदि उस क्षेत्र का, जिसमें वह पशु पाया जाए, भारसाधक पशु चिकित्सा अधिकारी या ऐसा अन्य पशु चिकित्सा अधिकारी, जिसे इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किया जाए, यह प्रमाणित करता है कि वह असाध्य है या उसे क्रूरता किए बिना हटाया नहीं जा सकता तो उसे नष्ट कर दिया जाए ।

(3) किसी रुग्णावास में उपचार और देखरेख के लिए भेजा गया पशु उस स्थान से, जब तक कि मजिस्ट्रेट यह निदेश नहीं देता कि उसे पिंजरापोल में भेज दिया जाए या नष्ट कर दिया जाए, उस क्षेत्र का, जिसमें रुग्णावास स्थित है, भारसाधक पशु चिकित्सा अधिकारी या अन्य ऐसा पशु चिकित्सा अधिकारी, जो इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किया जाए, यह प्रमाणपत्र नहीं दे देता कि वह उन्मोचित किए जाने के योग्य है, छोड़ा नहीं जाएगा ।

(4) किसी पशु को किसी रुग्णावास या पिंजरापोल तक ले जाने का, और रुग्णावास में उसके पोषण और उपचार का खर्च पशु के स्वामी द्वारा, जिला मजिस्ट्रेट या प्रेसिडेंसी नगरों में पुलिस आयुक्त द्वारा विहित की जाने वाली दरों के मापमान के अनुसार संदेय होगा :

परन्तु उस पशु के उपचार के लिए कोई भी प्रभार संदेय नहीं होगा, यदि पशु के स्वामी की निर्धनता के कारण मजिस्ट्रेट वैसा आदेश दे ।

(5) उपधारा (4) के अधीन किसी पशु के स्वामी द्वारा संदेय रकम उसी रीति से वसूल की जा सकेगी जिस रीति से भू-राजस्व की बकाया वसूल की जाती है ।

(6) यदि स्वामी उतने समय के भीतर, जितना मजिस्ट्रेट विहित करे,

उस पशु को हटाने से इनकार करता है या हटाने की उपेक्षा करता है तो मजिस्ट्रेट निदेश दे सकेगा कि वह पशु बेच दिया जाए और बिक्री से प्राप्त धन को उस खर्च का संदाय करने में उपयोजित किया जाए ।

(7) बिक्री से प्राप्त ऐसे धन का अधिशेष, यदि कोई हो, बिक्री की तारीख से दो मास के भीतर स्वामी द्वारा आवेदन किए जाने पर, उसे दे दिया जाएगा ।

36. **अभियोजनों के लिए परिसीमा** – इस अधिनियम के विरुद्ध किसी अपराध के लिए अभियोजन उस अपराध के किए जाने की तारीख से तीन मास के अवसान के पश्चात् संस्थित नहीं किया जाएगा ।

37. **शक्तियों का प्रत्यायोजन** – केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा यह निदेश दे सकेगी कि इस अधिनियम के अधीन उसके द्वारा प्रयोक्तव्य सभी या कोई भी शक्तियां, ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए, जिन्हें अधिरोपित करना वह ठीक समझे, किसी राज्य सरकार द्वारा भी प्रयोक्तव्य होंगी ।

38. **नियम बनाने की शक्ति** – (1) केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए नियम, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, और पूर्व प्रकाशन की शर्त के अधीन रहते हुए, बना सकेगी ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, केन्द्रीय सरकार निम्नलिखित सभी या किन्हीं भी विषयों का उपबंध करने के लिए नियम बना सकेगी, अर्थात् :–

(क) बोर्ड के सदस्यों की सेवा [1][की शर्तें], उन्हें संदेय भत्ते और वह रीति जिससे वे अपनी शक्तियों का प्रयोग और अपने कृत्यों का निर्वहन कर सकेंगे ;

[2][(कक) वह रीति जिससे नगर निगमों का प्रतिनिधित्व करने वाले व्यक्तियों का धारा 5 की उपधारा (1) के खण्ड (ङ) के अधीन निर्वाचन किया जाना है ;]

(ख) किसी पशु द्वारा ले जाया या ढोया जाने वाला अधिकतम

---

[1] 1982 के अधिनियम सं. 26 की धारा 16 द्वारा ''के निबन्धन और'' शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[2] 1982 के अधिनियम सं. 26 की धारा 16 द्वारा अंतःस्थापित ।

भार (जिसमें उस पर सवारी करने वालों का भार भी सम्मिलित है) ;

(ग) पशुओं के अतिभरण की रोकथाम के लिए पालन की जाने वाली शर्तें ;

(घ) वह अवधि जिसके दौरान और वे घंटे, जिनके बीच किसी भी वर्ग के पशुओं को भार ढोने के लिए प्रयुक्त नहीं किया जाएगा ;

(ङ) किसी लगाम के दहाने या जुए का ऐसा प्रयोग प्रतिषिद्ध करना जिससे कि पशुओं के प्रति क्रूरता होती हो ;

[1][(ङक) धारा 11 की उपधारा (3) के खण्ड (ख) में निर्दिष्ट आवारा कुत्तों के नष्ट किए जाने की अन्य पद्धतियां ;

(ङख) वे पद्धतियां जिनसे ऐसे पशु को, जिसे बिना क्रूरता के नहीं हटाया जा सकता है, धारा 13 की उपधारा (3) के अधीन नष्ट किया जा सकेगा ;]

(च) नालबन्दी का कारबार करने वाले व्यक्तियों के लिए अनुज्ञप्ति और रजिस्ट्रीकरण की ऐसे प्राधिकारी द्वारा अपेक्षा करना जो विहित किया जाए, और उस प्रयोजन के लिए फीस उद्गृहीत करना ;

(छ) बिक्री या निर्यात के प्रयोजनों के लिए या किसी अन्य प्रयोजन के लिए पशुओं को पकड़ने के सम्बन्ध में बरती जाने वाली पूर्वावधानी, तथा वे विभिन्न उपकरण और युक्तियां, जिनका ही उस प्रयोजन के लिए उपयोग किया जा सकेगा; और इस प्रकार पकड़े जाने के लिए अनुज्ञप्ति तथा ऐसी अनुज्ञप्तियों के लिए फीस का उद्ग्रहण ;

(ज) रेल, सड़क, अन्तर्देशीय जलमार्ग, समुद्र या वायु द्वारा पशुओं के परिवहन के सम्बन्ध में बरती जाने वाली पूर्वावधानी और वह रीति जिससे तथा वे पिंजरे या अन्य पात्र, जिनमें उनका इस प्रकार परिवहन किया जा सकेगा ;

(झ) उन परिसरों के स्वामियों या भारसाधक व्यक्तियों से, जिनमें पशु रखे जाते हैं या दुहे जाते हैं, ऐसे परिसरों को रजिस्टर करवाने की, परिसरों की चार-दीवारियों या चारों ओर के वातावरण के सम्बन्ध में निर्धारित शर्तों का अनुपालन करने की, यह अभिनिश्चित

---

[1] 1982 के अधिनियम सं. 26 की धारा 16 द्वारा अंतःस्थापित ।

करने के प्रयोजन के लिए कि क्या उनमें इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध किया गया है या किया जा रहा है उनका निरीक्षण करने देने की, और ऐसे परिसरों में इस अधिनियम की धारा 12 की प्रतियां उस भाषा या उन भाषाओं में, जो उस क्षेत्र में सामान्यतः समझी जाती हों, प्रदर्शित करने की, अपेक्षा करना ;

(ञ) वह प्ररूप जिसमें अध्याय 5 के अधीन रजिस्ट्रीकरण के लिए आवेदन किए जा सकेंगे, वे विशिष्टियां जो उसमें अन्तर्विष्ट होंगी, ऐसे रजिस्ट्रीकरण के लिए संदेय फीस और वे प्राधिकारी जिन्हें ऐसे आवेदन किए जा सकेंगे ;

[1][(ञक) वे फीसें जो उन व्यक्तियों या संस्थाओं के रजिस्ट्रीकरण के लिए, जो पशुओं पर प्रयोग कर रहे हैं, या किसी अन्य प्रयोजन के लिए, धारा 15 के अधीन गठित समिति द्वारा प्रभारित की जा सकेंगी ;]

(ट) वे प्रयोजन, जिनके लिए इस अधिनियम के अधीन वसूल किए गए जुर्माने उपयोजित किए जा सकेंगे, और इन प्रयोजनों के अन्तर्गत रुग्णावासों, पिंजरापोलों और पशु चिकित्सा के अस्पतालों का बनाए रखना जैसे प्रयोजन भी हैं ;

(ठ) कोई अन्य विषय जो विहित किया जाना है या विहित किया जाए ।

(3) यदि कोई व्यक्ति इस धारा के अधीन बनाए गए किसी नियम का उल्लंघन करेगा या उल्लंघन का दुष्प्रेरण करेगा तो वह जुर्माने से, जो एक सौ रुपए तक का हो सकेगा, या कारावास से, जिसकी अवधि तीन मास तक की हो सकेगी, या दोनों से, दण्डित किया जाएगा ।

[2]* * * *

[3][**38क. नियमों और विनियमों का संसद् के समक्ष रखा जाना** – केन्द्रीय सरकार द्वारा या धारा 15 के अधीन गठित समिति द्वारा बनाया गया प्रत्येक नियम और बोर्ड द्वारा बनाया गया प्रत्येक विनियम बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो,

---

[1] 1982 के अधिनियम सं. 26 की धारा 16 द्वारा अंतःस्थापित ।

[2] 1982 के अधिनियम सं. 26 की धारा 16 द्वारा उपधारा (4) का लोप किया गया ।

[3] 1982 के अधिनियम सं. 26 की धारा 17 द्वारा अंतःस्थापित ।

कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा । यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी । यदि उस सत्र के या पूर्वोवत आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन, यथास्थिति, उस नियम या विनियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाए, तो तत्पश्चात् वह ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगा । यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि, यथास्थिति, वह नियम या विनियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात् वह निष्प्रभाव हो जाएगा । किन्तु नियम या विनियम के ऐसे परिवर्तित या निष्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा ।]

39. **धारा 34 के अधीन प्राधिकृत व्यक्तियों का लोक सेवक होना** – धारा 34 के अधीन राज्य सरकार द्वारा प्राधिकृत प्रत्येक व्यक्ति भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 21 के अर्थ में लोक सेवक समझा जाएगा ।

40. **संरक्षण** – इस अधिनियम के अधीन सद्भावपूर्वक की गई या की जाने के लिए आशयित किसी बात के लिए कोई वाद, अभियोजन या अन्य विधिक कार्यवाही किसी व्यक्ति के विरुद्ध, जो भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 21 के अर्थ में लोक सेवक है या समझा जाता है, न होगी ।

41. **1890 के अधिनियम सं. 11 का निरसन** – जहां कि धारा 1 की उपधारा (3) के अधीन किसी अधिसूचना के अनुसरण में इस अधिनियम का कोई उपबंध किसी राज्य में प्रवृत्त होता है वहां, पशुओं के प्रति क्रूरता का निवारण अधिनियम, 1890 (1890 का 11) का ऐसा कोई उपबंध, जो इस प्रकार प्रवृत्त होने वाले उपबन्ध का तत्स्थानी है, तदुपरि निरसित हो जाएगा ।